सत्साहित्य-प्रकाशन

भारतीय संयोजन में
समाजवाद

—लोकतंत्री समाजवाद की कल्पना तथा प्रगति का विवेचन—

•

श्रीमन्नारायण

भूमिका
जवाहरलाल नेहरू

•

१९६६
सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली

प्रकाशकीय

काग्रेस तथा भारत-सरकार ने अनेक अवसरो पर घोषणा की है कि उसका उद्देश्य देश मे समाजवाद की स्थापना करना है। समाजवाद क्या है, और उसकी स्थापना किस प्रकार हो सकती है, ये बडे महत्व के प्रश्न है। इस सबध मे हमारे प्रमुख नेताओ ने समय-समय पर चर्चा की है, लेकिन कुल मिलाकर उसका स्पष्ट चित्र किसी ने भी प्रस्तुत नही किया।

यह पुस्तक इस दिशा की एक मूल्यवान कृति है। इसके लेखक गाधीवादी सयोजन के प्रमुख अध्येता और व्याख्याता है। उन्होने उस दृष्टि से समाजवाद के बारे मे विचार किया है और इस पुस्तक मे बताया है कि समाजवाद क्या है, उसके मूल उद्देश्य क्या है, उन उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए विभिन्न क्षेत्रो मे अबतक क्या प्रगति हुई है और अभी आगे क्या करने को शेष है। पुस्तक विचार-प्रेरक है और ज्ञानवर्द्धक भी।

हिंदी के पाठक इस पुस्तक के लेखक से भली-भाति परिचित है। उनकी कई पुस्तके प्रकाशित हुई है। 'मण्डल' से कुछ समय पूर्व हमने 'गाधीवादी सयोजन के सिद्धात' पुस्तक निकाली थी, जिसका सभी क्षेत्रो मे स्वागत हुआ था।

यह पुस्तक मूल अग्रेजी मे 'सोशलिज्म इन इडियन प्लानिंग' के नाम से निकली है। इसका हिन्दी रूपान्तर श्री शोभालाल गुप्त ने किया है।

हमे विश्वास है कि देश के नव-निर्माण में रुचि रखनेवाले पाठक इस पुस्तक को अवश्य पढेगे और इसके विचारो से लाभान्वित होगे।

—मंत्री

दो शब्द

समाजवाद की कल्पना की विभिन्न विचारको ने विभिन्न प्रकार से व्याख्या की है । एशिया और अफ्रीका के हाल मे स्वतत्र हुए करीब-करीब सभी देशो ने समाजवाद को अपना राजनैतिक लक्ष्य स्वीकार किया है, भले ही वे उसका अलग-अलग मतलब निकालते है । भारत ने भी ससदीय लोकतत्र के आधार पर समाजवादी ढग की समाज-व्यवस्था कायम करने का फैसला किया है । इस पुस्तक मे मैंने भारतीय सविधान, पचवर्षीय योजनाओ और स्वर्गीय प्रधानमत्री श्री नेहरू के भाषणो और लेखो मे जिस प्रकार के समाजवाद की कल्पना की गई है, उसकी लगभग ठीक-ठीक तस्वीर सामने रखने की कोशिश की है । मै आशा करता हू कि भारत मे जैसी समाजवादी लोकतत्री समाज-व्यवस्था कायम करने का विचार है उसकी रूपरेखा और बुनियादी उद्देश्यो के बारे मे अनेक गलतफहमियो को दूर करने मे यह पुस्तक मदद देगी ।

मैं अपने स्वर्गीय नेता नेहरूजी का बहुत ही आभारी हू कि जिन्होने इस पुस्तक की छोटी-सी भूमिका लिखने के लिए समय निकाला । समाजवाद और भारतीय आयोजन के बारे मे यह उनके निश्चित विचारो की आखिरी अभिव्यक्ति है । उनका यह कथन कितना अर्थ भरा है कि "हमारा असली मकसद इन्सान को अच्छा इन्सान बनाना और यह देखना है कि इन्सान का असली धर्म क्या है ?" मेरी हार्दिक इच्छा है कि जवाहरलाल नेहरू की यह कल्पना भारत के नियोजित आर्थिक विकास के बारे मे आनेवाली अनेक दशाब्दियो तक हमारे प्रयत्नो का मार्ग-दर्शन करे ।

—श्रीमन्नारायण

भूमिका

जो लोग भारत के विकास, समाजवाद और भारतीय-आयोजन मे दिलचस्पी रखते है, उन सबसे मै इस छोटी-सी पुस्तक को पढने का अनुरोध करता हू । मैने यह पुस्तक सारी-की-सारी नही पढी है, फिर भी मै यह महसूस करता हू कि यह उपयोगी पुस्तक है और लोगो को हमारी समस्याओ पर व्यापक दृष्टि से विचार करने मे मददगार होगी ।

समाजवाद एक अस्पष्ट शब्द बन गया है और उसके तरह-तरह के मतलब निकाले जाते है । आज की दुनिया मे जब रफ्तार तेज है और तकनीकी ज्ञान की भारी प्रगति हुई है, यह जाहिर है कि खुद समाजवाद की कल्पना मे फेर-बदल हुआ है, फिर भी उसके बुनियादी सिद्धात तो कायम है । भारत मे हमारे लिए यह जरूरी है कि हम मौजूदा तकनीकी तरीको से फायदा उठावे और खेती तथा उद्योगो की पैदावार बढावे । किंतु ऐसा करते वक्त हमको अपना असली मकसद नही भूलना चाहिए कि इन्सान का धर्म क्या है और उसे कैसे अच्छा इन्सान बनाया जा सकता है ।

यह तीसरी योजना का आखिरी दौर है और योजना-आयोग ने चौथी योजना पर विचार करना शुरू कर दिया है । यह उम्मीद की जाती है कि पाचवी योजना के अखीर तक हम बहुत तरह से स्वावलबी हो जायगे और हमारी तरक्की बाहरी मदद पर इतना निर्भर नही करेगी । यह बात इस पर निर्भर करेगा कि हम पुरानी पगडडियो को कितना छोड पाते है और इस जमाने के पैदावार के तरीको को कहा तक अपनाते है ।

कुछ लोग सोचते है कि आजादी मिलने के बाद हमारी तरक्की धीमी रही है । मेरे खयाल से यह सही नही है । अगर हम भारत और

उसके रहनेवालो की पृष्ठभूमि और देश के सामाजिक गठन को वदल
की जरूरत पर गौर करे तो मेरा खयाल है कि हमने काफी ठोस तरक्क
की है। उसमे भविष्य की नीव पड चुकी है और यह लोकतत्र के आधा
पर हुआ हे। भविष्य मे भूतकाल के मुकावले तरक्की की रफ्तार औ
भी तेज होनी चाहिए।

इस पुस्तक के कई पाठक, हो सकता है, कि उसकी वहुत-सी वात
से सहमत न हो। यह महत्व की वात नही है। असली मुद्दा यह है ि
हम सारी तस्वीर पर पूरी नजर डाले और लोकतत्री समाजवाद
आदर्श को अपने सामने रखे। यह पुस्तक पाठको को ऐसा करने मे मद
देगी। मै उनसे यह पुस्तक पढने की सिफारिश करता हू।

सर्किट हाउस,
देहरादून
२५ मई, १९६४

जवाहरलाल नेहरू

विषय-सूची

परिशिष्ट

१

समाजवाद की कल्पना

'समाजवाद' शब्द की व्याख्या विभिन्न विचारको और समूहो ने अलग-अलग रूपों मे की है। वास्तव मे समाजवाद की वकालत करनेवालो की सख्या बहुत बडी है और इस विषय का साहित्य इतना सुदर और विविध है कि समाजवाद का ठीक-ठीक अर्थ बता सकना कठिन है। जैसा कि प्रोफेसर जोड ने कहा है, "सक्षेप मे, समाजवाद एक ऐसा टोप है, जिसका रूप ही लोप हो गया है, कारण हर कोई उसे पहनता है।"

हम सर टॉमस मोर के 'आदर्श समाजवाद', इन्कास के 'धार्मिक समाजवाद' कॅनन किग्सले और रेवरेण्ड मॉरिस के 'ईसाई समाजवाद' कार्ल मार्क्स के 'वैज्ञानिक समाजवाद' और सिडनी तथा बिएट्रिस वेब के 'वैधानिक समाजवाद' के विषय मे साहित्य पढते है। किंतु बुनियादी तौर पर समाजवाद की कल्पना जॉन स्टुअर्ट मिल द्वारा प्रतिपादित व्यक्तिवादी दर्शन की कुछ अर्थो मे एक प्रतिक्रिया ही है। मिल का कहना था कि "राज्य को लोगो को उस समय तक अकेला छोड देना चाहिए जबतक कि ये लोग दूसरे लोगो के मामलो में हस्तक्षेप नही करते।" बेन्थम का मानना था कि हरेक आदमी अपने हितो की देखभाल स्वय कर सकता है और यह कि "सभी व्यक्तियो की आवश्यकताओ की पूर्ति सारे समाज की भलाई के साथ जुडी हुई है।" समाजवादी विचारक यद्यपि अनेक महत्वपूर्ण बातो मे एक दूसरे से असहमत है, तथापि उन्होने सामाजिक समस्याओ के प्रति व्यक्तिवादी दृष्टिकोण का उग्र विरोध किया और न्यायोचित व्यवस्था कायम करने के अनेक उपाय सुझाये है।

सैंट साइमन विशाल सगठन और योजना मे दृढ विश्वास रखते थे। उनको आशा थी कि विज्ञान और तकनीकी शास्त्र का पूरा उपयोग कर के समाज के कल्याण के लिए समाजवादी सगठन की स्थापना की जा सकती है । सैंट साइमन की मान्यताओ की तुलना मे चार्ल्स फूरिये की यह दृढ मान्यता थी कि केवल कृषि-प्रधान सामाजिक सगठन के द्वारा 'उत्तम जीवन' का सपना साकार हो सकता है। रॉबर्ट ओवेन ने कारखानो की प्रणाली और उससे उत्पन्न होनेवाली गदी बस्तियो की भीषणताओ के विरुद्ध विद्रोह किया और 'सहकारी बस्तियो' के रूप मे कृषि और उद्योग दोनो के सतुलित विकास की हिमायत की है। लुई ब्ला का ख्याल था कि आम मताधिकार द्वारा राज्य प्रगति और कल्याण का साधन बन सकता है। उन्हे आशा थी कि "औद्योगिक प्रवृत्ति और कृषि मे मेल बिठाया जा सकता है।" फर्डिनेण्ड लासाल चाहते थे कि मजदूर शोषण का अत करने के लिए अपना उत्पादन स्वय करे। सिसमॉण्डी चाहते थे कि उत्पादक साधनो के क्षेत्र मे वास्तविक उपभोक्ताओ के मध्य सपत्ति का व्यापक वितरण हो और राज्य छोटे उत्पादको और किसान भूस्वामियो के हित मे आर्थिक परिस्थितियो का नियमन करे। प्रूधो का दृढ विश्वास था कि 'क्षेत्रीयता' के सिद्धातो के आधार पर समाजवादी समाज की स्थापना की जा सकती है, जहा छोटे-छोटे समूह आर्थिक प्रवृत्तियो को चलाते है।

व्यक्ति और राज्य

जहा अनेक सामाजिक और राजनीतिक विचारको ने सुख और समृद्धि की प्राप्ति के लिए व्यक्ति और छोटे समूहो की स्वतत्रता की हिमायत की है, वहा हॉब्स ने राज्य को 'लोगो की वफादारी का एकमात्र केंद्र' बनाने की कोशिश की है। रूसो ने कहा है कि जहा प्रत्येक नागरिक को अपने तमाम साथी नागरिको से पूर्णतया स्वतत्र होना चाहिए, वहा उसे स्वय 'पूर्णतया राज्य के आधीन' होना चाहिए। यह राज्य के सर्वग्राही प्रभुत्व का ही नतीजा था कि फ्रास की राज्यक्राति का जन्म हुआ। बाद मे कार्ल मार्क्स ने 'अतिरिक्त मूल्य' के आधार पर अपने साम्यवाद के दर्शन

का प्रतिपादन किया। उन्हे हीगल की विचारधारा से पथ-प्रदर्शन मिला, जो यह मानते थे कि विकास की हर मजिल विरोधी तत्वो के सघर्ष के फलस्वरूप सिद्ध होती है और अत मे उनमे समन्वय होता है। 'वर्ग-सघर्ष' का यह बुनियादी दर्शन ही आधुनिक साम्यवाद का सार-तत्व है । मार्क्स ने ऐसे समाज की कल्पना की है जिसमें "विकासशील सामाजिक शक्तिया अनेक सकटो के भीतर से विकसित और परिपक्व होती है और अत मे सकट चरम-सीमा को पहुच जाता है और भारी विनाश और उथल-पुथल के भीतर से नई समाज-व्यवस्था का जन्म होता है ।" उन्होने अन्य प्रकार की शक्तियो के विपरीत आर्थिक शक्तियो पर बहुत अधिक जोर दिया है ।

बर्न्स्टाइन 'सशोधनवाद' के जनक माने जाते है। वह चाहते थे कि समाजवाद क्रातिकारी नही, 'विकासशील' होना चाहिए। समाजवादी दर्शन के इस पहलू का इग्लैंड के फेबियन लोगो ने अधिक पूरी तरह विकास किया। उन्होने 'क्रमिकवाद' के सिद्वात की पुष्टि की । वेद-वधुओ ने कहा कि "अनिवार्य सामाजिक न्यूनतम स्तर और साधनो के सामाजिक नियत्रण द्वारा, जिसमे उत्तरोत्तर करारोपण का तरीका भी शामिल है, गरीबी का अत किया जाय ।" जार्ज बर्नार्ड शॉ का यह सुदृढ विश्वास था कि 'आय की समानता' के जरिये समाजवाद की स्थापना की जा सकती है। श्री शॉ कहते है कि 'अवसर की समानता' असभव है । "समाजवाद का अर्थ है आय की समानता, और कुछ नही, अन्य बाते केवल उसकी अवस्थाए अथवा उसके परिणाम है।'

समाजवाद के प्रकार

समाजवाद के और भी अनेक प्रकार है, जिनकी विभिन्न व्यक्तियो, समूहो और राष्ट्रो ने हिमायत की है। 'सघीय समाजवाद' व्यावसायिक लोक-तत्र पर आधारित है, जिसमे श्रमिक मजदूर-सघो के द्वारा उद्योग-प्रबध का प्रभावशाली रूप मे सचालन करते है। जहा सघीय समाजवादी मजदूरो के शातिमय संगठनो मे विश्वास करते है, वहा उग्र सगठनवादी (सिंडिकेलिस्ट) आम हडताल के द्वारा हिसक और क्रातिकारी

तरीको की हिमायत करते है । प्रिंस क्रोपॉटकिन जैसे अराजकतावादी शासन-रहित 'स्वतत्र समाज' की कल्पना करते है, जिसमे कानून के अनुसरण अथवा किसी सत्ता की आज्ञा के द्वारा नही, बल्कि 'विभिन्न समूहो के मध्य स्वीकृत स्वतत्र समझौतो' के द्वारा शाति स्थापित की जाती है । हमारे अपने जमाने मे, हमने हिटलर के 'राष्ट्रीय समाजवाद' अथवा नाजीवाद और मुसोलिनी के 'निगम-राज्य' अथवा फासिस्टवाद के बारे मे पढा है । हमने इण्डोनेसिया के राष्ट्रपति श्री सुकर्ण के 'इन्डोनेसियाई' समाजवाद के विषय मे भी पढा है, जो 'निर्देशित लोकतत्र' मे विश्वास करते है और यह मानते है कि 'तमाम एशियाई समस्याए पश्चिमी विधियो के द्वारा हल नही की जा सकती ।' इण्डोनेसिया के आजीवन राष्ट्रपति नियुक्त किये जाने के शीघ्र बाद ही डा० सुकर्ण ने वचन दिया कि वह देश को 'ऐसा आदर्श समाजवादी राष्ट्र बनाने की चेष्टा करेगे, जो सामाजिक और आर्थिक वर्ग-विषमताओ कोसमाप्त करने का आश्वासन देता है ।" राष्ट्रपति नासिर ने अपने हितकारी नेतृत्व मे अरब नमूने का समाजवाद विकसित किया है । हाल मे स्वतत्र हुए अफ्रीकी देश एक नई किस्म के 'अफ्रीकी समाजवाद' की रचना कर रहे है । घाना के डा० क्वामे एन्क्रूमा 'प्रगति के समाजवादी पथ पर' अग्रसर होकर चाहते है कि सब लोगो के लिए 'यथासभव उच्चतम स्तर पर पूरा रोजगार, अच्छे मकान तथा शैक्षणिक और सास्कृतिक प्रगति के लिए समान अवसर सुलभ हो ।' टागानिका के राष्ट्रपति श्री न्येरेरे की समाजवाद की व्याख्या यह है कि वह 'एक मानसिक दृष्टिकोण' है, 'किसी निर्धारित राजनीतिक ढाचे का कठोर अनुसरण नही ।' उनके अनुसार अफ्रीकी समाजवाद की नीव और उद्देश्य 'कुटुब का विस्तार है, जिसमे अतत सारे मानव-समाज का समावेश होगा ।' स्वतत्र अल्जीरिया के भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री अहमद बेग बेल्ला ने कहा था कि "समाजवाद मुख्यत विशेषाधिकारो को समाप्त करना चाहता है ।"

'मानव का भाई-चारा'

यद्यपि समाजवाद की कल्पना के विषय मे विभिन्न व्यक्तियो, समूहो और राष्ट्रो के विभिन्न विचार रहे है, किंतु कम-ज्यादा सभी का यह खयाल रहा है कि समाजवादी समाज को 'मानव भाई-चारे' की स्थापना करनी चाहिए और उसका यह विश्वास है कि 'प्रत्येक मनुष्य को सुख और जीवन को मूल्य प्रदान करनेवाले साधन प्राप्त करने का समान अधिकार है।' जॉन स्ट्रेची ने लोकतत्री समाजवाद के ध्येय को 'सामाजिक उद्देश्यो' से सबधित विभिन्न प्रश्नो मे निहित 'श्रद्धा का कार्य' कहा है । प्रोफेसर पीगू समाजवाद को 'एक छोटे शासनकर्त्ता गुट' के लाभ के लिए नही, बल्कि 'सारे समाज के हित की योजना' कहते है। समाज का यह उद्देश्य भी बताया गया है कि वह 'मानव दृष्टिकोण और सबधो मे परिवर्तन द्वारा आर्थिक सघर्ष की समाप्ति' करना चाहता है।' श्री जयप्रकाशनारायण कहते है कि "जीवन का समाजवादी तरीका आम लोगो के परिश्रम से उत्पन्न अच्छी वस्तुओ को मिलकर उपभोग करने का एक तरीका है।" नेहरूजी की राय थी कि समाजवादी व्यवस्था की स्थापना का अर्थ 'सार्वजनिक हित मे नियत्रित उत्पादन और वितरण' होगा। महात्मा गाधी ने सर्वोदय का आदर्श प्रस्तुत किया, जो समाज के सभी वर्गो—विशेषकर समाज के निम्नतम और दरिद्रतम वर्गो—के भौतिक और नैतिक दोनो हित सिद्ध करना चाहता है।

भारत मे राष्ट्रीय नेताओ ने आधुनिक विचारधाराओ और प्राचीन परपराओ के आधार पर समाजवाद की कल्पना का विकास किया है। अगले अध्याय मे भारतीय सविधान और पचवर्षीय योजनाओ मे समाविष्ट समाजवाद की सामान्य रूपरेखा देने की कोशिश की जायगी।

२

भारतीय आयोजन में समाजवाद

भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने जब से अपने आवडी-अधिवेशन मे, जनवरी १९५५ मे, 'समाजवादी ढग के समाज' का प्रस्ताव स्वीकार किया है, तभी से आयोजित आर्थिक विकास के द्वारा इस देश मे समाजवादी लोकतत्र का लक्ष्य हासिल करने की सच्ची अभिलाषा रही है। वास्तव मे 'समाजवादी ढग' शब्द का सबसे पहले भारतीय ससद द्वारा सन् १९५४ मे स्वीकृत एक गैर-सरकारी प्रस्ताव मे प्रयोग किया गया था। यद्यपि इससे पहले काग्रेस ने 'समाजवाद' शब्द का प्रयोग नही किया, फिर भी 'बुनियादी अधिकारो' सबधी सुप्रसिद्ध प्रस्ताव मे समाजवाद की मोटी बातो का उल्लेख हुआ था। यह प्रस्ताव सन् १९३१ के कराची-अधिवेशन मे स्वय महात्मा गाधी ने पेश किया था। उसमे यह स्पष्ट कहा गया था कि "आम जनता के शोषण का अत करने के लिए राजनीतिक स्वतंत्रता मे करोडो क्षुधा-पीडित व्यक्तियो की वास्तविक आर्थिक स्वतत्रता का भी समावेश होना चाहिए।" काग्रेस ने सन् १९३८ मे श्री जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता मे एक राष्ट्रीय आयोजन समिति भी नियुक्त की थी। इस समिति ने भारतीय अर्थ-व्यवस्था को समाजवादी मोड देने का मसविदा तैयार करने की दृष्टि से महत्वपूर्ण काम किया। आर्थिक कार्यक्रम समिति की रिपोर्ट दिसम्बर १९४८ मे काग्रेस के जयपुर-अधिवेशन मे पेश की गई। इस रिपोर्ट मे भी स्पष्ट शब्दो मे कहा गया कि स्वतत्र भारत का समता-मूलक आधार पर विकास होना चाहिए। काग्रेस की कृषि-व्यवस्था-सुधार समिति ने प्रोफेसर जे० सी० कुमारप्पा की अध्यक्षता मे सन् १९४९ मे अपनी रिपोर्ट मे

'जमीदारी प्रथाओं' को समाप्त करने की माग की और 'विभिन्न किस्म की खेती मे विभिन्न मात्रा मे सहकारिता को अपनाने की' सिफारिश की ।

जाति और वर्ग-रहित समाज

स्वतत्रता प्राप्ति के बाद देश का योजनाबद्ध आर्थिक विकास मुख्यत भारतीय सविधान के राज्यनीति निर्देशक सिद्धातो के आधार पर हुआ है । सविधान यह निर्देश देता है कि "राज्य लोगो के हित के लिए यथासभव ऐसी समाज-व्यवस्था कायम करने और उसे सरक्षण देने की कोशिश करेगा, जिसमे राष्ट्र-जीवन की सभी सस्थाओ मे सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय को महत्व दिया जायगा ।" उसमे कहा गया है कि सभी नागरिको को "रोजगार के पर्याप्त साधन पाने का अधिकार होगा ।" और यह कि "समाज के भौतिक साधनो के स्वामित्व और नियत्रण का वितरण सामान्य हित की सर्वोत्तम पूर्ति की दृष्टि से किया जायगा ।" निर्देशक सिद्धात राज्य को यह निर्देश भी देते है कि वह इसका ध्यान रखे कि "आर्थिक प्रणाली के सचालन के फलस्वरूप संपत्ति और उत्पादन के साधनो का केंद्रीयकरण आम हितो के विपरीत न होने पाये ।"

सविधान मे सुरक्षित इन सिद्धातो ने प्रथम पचवर्षीय योजना के प्रकाशन के समय से ही भारतीय आयोग का पथ-प्रदर्शन किया है । दूसरी योजना मे कहा गया है कि "समाजवादी ढग के समाज की दिशा मे आगे बढने की रूपरेखा निर्धारित करने की सर्वोत्तम कसौटी 'निजी लाभ' की नही, बल्कि 'सामाजिक लाभ' की होनी चाहिए ।" "आर्थिक विकास के लाभ समाज के अपेक्षाकृत अल्प सुविधा-भोगी वर्ग को अधिक-से-अधिक मात्रा मे मिलने चाहिए और आय, सपत्ति और आर्थिक शक्ति के केंद्रीयकरण मे उत्तरोत्तर कमी होनी चाहिए ।" तीसरी योजना का लक्ष्य जाति, वर्ग अथवा सुविधा-भोगी वर्ग-रहित समाज की स्थापना करना है, जो "समाज के हरेक वर्ग और देश के सभी भागो को विकास करने और राष्ट्रीय उत्कर्ष मे योग देने का पूरा अवसर देगा ।"

समाजवाद साम्यवाद नहीं है

भारतीय आयोजन मे कल्पित समाजवादी समाज की विस्तृत रूप-रेखा देने का प्रयास करने के पहले नकारात्मक रूप मे यह वताना वाछ्नीय होगा कि समाजवाद क्या नही है। प्रथम, विना किमी सदेह के यह स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि भारत मे समाजवाद वह साम्यवाद नही है, जिस पर रूस, चीन और पूर्वी यूरोप के देशो मे अमल किया जा रहा है। इस देश के कुछ पढे-लिखे लोग यह मानने की भूल करते हैं कि नियोजित विकास साम्यवादी ढग के समाजवाद की दिशा मे आगे खिसकना है। यह सर्वथा गलत खयाल है। स्वर्गीय प्रधानमत्री श्री नेहरू ने वार-वार यह कहा है कि कार्ल मार्क्स द्वारा प्रतिपादित साम्यवाद के सिद्धात आज की गतिशील दुनिया के उपयुक्त नही हैं। नेहरूजी ने लिखा है, "मार्क्सवादी अर्थशास्त्र अनेक तरह से पुराना पड गया है" और निश्चित रूप से उसने 'हिंसक मार्ग के साथ' अपना रिश्ता जोड लिया है। "वह समझा-बुझाकर अथवा शातिमय लोकतत्री दवाव डाल कर परिवर्तन नही लाना चाहता, वल्कि वल प्रयोग द्वारा और वस्तुतः विनाश और उन्मूलन के द्वारा परिवर्तन लाना चाहता है।" ब्राज़ील के एक साप्ताहिक समाचार-पत्र मे अपने एक लेख मे नेहरूजी ने अत्यत कडे शब्दो मे हिसक दृष्टिकोण की निदा की थी। उन्होने लिखा, "मैं इस तरीके को सर्वथा साम्राज्यवादी, अवुद्धिसगत और असभ्यतापूर्ण मानता हू, चाहे उसका व्यवहार धार्मिक, आर्थिक सिद्धात अथवा अन्य किसी भी क्षेत्र मे क्यो न किया जाय।"

आचार्य विनोवा ने स्पष्ट रूप मे कहा है कि सर्वोदय की गाधीवादी विचारधारा 'हिंसारहित साम्यवाद' नही है। वह कहते है, 'असलियत यह है ये दो विचारधाराए एक-दूसरे के साथ नही मिल सकती, उनके वीच वुनियादी अतर है।"

साधन शुद्धि

गाधीजी ने उच्च उद्देश्यो की सिद्धि के लिए साधनो की शुद्धता पर

बहुत जोर दिया था और कहा था, "भले ही रूस ने अनेक सफलताए हासिल की हो, किंतु उसका कार्य टिकेगा नही, जबतक कि उसके साधन भी शुद्ध नही होगे।" इसलिए उनका मानना था कि साम्यवाद भारतीय राष्ट्र की प्रतिमा के अनुकूल नही है। उन्होने साफ-साफ कहा है कि "साम्यवाद इस देश की भूमि मे फूले-फलेगा नही।" गाधीजी ने कहा है, "समाजवाद स्फटिक के समान पवित्र है और इसलिए उसे प्राप्त करने के लिए स्फटिक के समान ही शुद्ध साधन चाहिए।" विश्व बैंक के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री यूजेन ब्लॅक ने भी जोर दिया है कि "आर्थिक विकास की प्राप्ति के साधन स्वत विकास जितने ही महत्वपूर्ण है।" नेहरूजी का यह यकीन था कि "कालातर मे लोकतत्री और शातिमय तरीका समय की दृष्टि से अधिक सफल होता है और अतिम परिणाम की दृष्टि से तो कही अधिक सफल होता है।" इसलिए भारत की लोकतत्री जीवन के आदर्शो और शातिमय तरीको मे गहरी निष्ठा है। वास्तव मे आधुनिक जगत मे वह सबसे बडा लोकतत्र है व्यक्ति की प्रतिष्ठा मे उसे गहरी श्रद्धा है और यह प्रश्न ही पैदा नही हो सकता कि वह तानाशाही की ओर खिसकेगा।

'मुक्त उद्योग' नहीं

दूसरे, हमारे दिमाग मे यह दर्पण के समान स्पष्ट होना चाहिए कि भारतीय आयोजन मे समाजवाद का अर्थ 'निजी लाभ' और 'मुक्त उद्योग' पर आधारित अर्थ-व्यवस्था नही हो सकता। पश्चिम के कुछ अत्यधिक विकसित देशो मे पूजीवाद राजकीय अहस्तक्षेप के सिद्धातो से काफी हट चुका है और अमरीका, ब्रिटेन, जर्मनी और जापान की आधुनिक अर्थ-व्यवस्थाओं मे समाजवाद का काफी मिश्रण हुआ है। ब्रिटिश व्यवसायियो का यह विश्वास निर्बल पड रहा है कि "मुक्त उद्योग अपनी औद्योगिक समस्याओ को हल कर सकेगा।" जैसा कि श्री आर्थर लुइस ने कहा है, "केवल पागलपन की सीमा पर रहनेवालो के अलावा और कोई आर्थिक क्षेत्र मे राजकीय अहस्तक्षेप की बात मे विश्वास नही करता।" विदेशी मामलो की पत्रिका मे (जुलाई, १९५८ में) प्रोफेसर

गेलब्रेथ ने लिखा है, "भारत की अर्थ-व्यवस्था पर अमरीका की अर्थ-व्यवस्था की अपेक्षा राजकीय पथ-प्रदर्शन और निर्देशन का कम प्रभाव है, हमारी कृषि-व्यवस्था पर कही अधिक नियत्रण किया जा सकता है, उसपर राज्य का कही अधिक व्यापक नियत्रण है। कुल मिलाकर इसमे तनिक भी सदेह नही कि हमारी अर्थ-व्यवस्था कही अधिक नियत्रण-क्षम और नियत्रित है।" उसी पत्रिका मे श्री विलियम लॉकवुड ने कहा है, "जापान कट्टरपथी नेताओ की अधीनता मे भी समाजवाद का जितना प्रचार करता है, उससे अधिक उसपर अमल करता है।"

असल मे, मुक्त-उद्योग की प्रणाली इस गलत मान्यता पर खडी है कि सभी व्यक्तियो की आवश्यकताओ की तुष्टि सारे समाज के समग्र कल्याण के सदृश है। प्रचलित शताब्दि मे आर्थिक विकास का इतिहास इस कपोल-कल्पना का खडन कर चुका है और उसे प्राणहीन वस्तु की भाति मृत समझ लिया जाना चाहिए। भारत, मध्य मार्ग पर चलता हुआ, मुक्त-उद्योग और तानाशाही अर्थतत्र के दोनो एकातिक मार्गो से बचने की कोशिश कर रहा है। इसलिए भारत मे आर्थिक मामलो मे राजकीय अहस्तक्षेप के सिद्धात का पुनर्जीवन न केवल अविवेकपूर्ण और अ-लोकप्रिय होगा, बल्कि आम जनता के महत्वपूर्ण आर्थिक हितो के लिए नुकसानदेह होगा।

समग्र राष्ट्रीयकरण नहीं

तीसरे, यह भी असदिग्ध रूप से कहना होगा कि भारतीय अर्थ-व्यवस्था मे समाजवाद का अर्थ समग्र राष्ट्रीयकरण नही है। 'औद्योगिक नीति विषयक प्रस्ताव' कहता है कि कुछ बुनियादी और मूल के उद्योगो, जैसे, रक्षा-सामग्री, लोहा और इस्पात, भारी सयत्र और मशीनरी, कोयला, रेल, जहाज-निर्माण और खनिजो का राष्ट्रीयकरण किया जायगा। अन्य कुछ उद्योग, जैसे, एल्युमीनियम, अलोह धातुए, मशीनी-औजार, रासायनिक खाद, और नकली रबड उद्योग राजकीय और निजी क्षेत्रो मे चल सकते है। इसके अलावा अनेक उपभोक्ता-उद्योग बच रहते है, जो राष्ट्रीय ढाचे के आयोजन की मर्यादा मे पूर्णतया निजी क्षेत्र मे

रहने दिये गए है। नेहरुजी ने बार-बार कहा था कि खास महत्व की बात है 'सामाजिक नियत्रण' न कि 'सपूर्ण राष्ट्रीयकरण'। दूसरे शब्दो मे भारत-सरकार 'विवेकयुक्त समाजीकरण' की नीति पर चलती रही है। जैसा कि प्रोफेसर लुइस ने कहा है, "आर्थिक जीवन मे सरकार के सामने समस्या यह है कि बहुत अधिक नियोजन और बहुत कम नियोजन और बहुत अधिक राष्ट्रीयकरण और बहुत कम राष्ट्रीयकरण के मध्य सही रास्ता मालूम करे।"

दूसरे विश्वयुद्ध के समय से ब्रिटेन की आर्थिक नीति इस बात पर जोर देती रही है कि "प्रत्यक्ष नियत्रण अथवा राजकीय स्वामित्व की अपेक्षा निजी उद्योगो पर राज्य को केवल देखभाल का कार्य करना चाहिए।" आधुनिक जगत मे, हमे राज्य के केंद्रित नियत्रण और समाज के हाथो मे शक्ति के विकेंद्रीयकरण के बीच सतुलन रखना होगा। सक्षेप मे, नियोजन की आवश्यकता है, किसी प्रकार की कठोर व्यवस्था की नही। श्री एच० एस०क्रासमैन के अनुसार, "उद्योगो पर अत्यधिक राजकीय स्वामित्व से राज्य की नौकरशाही के हाथो शक्ति का ऐसा केंद्रीयकरण हो जाता है, जो हमारी स्वतत्रता के लिए खतरा पैदा करता है।"

सुनहरा मध्यम मार्ग

भारत योजनाबद्ध आर्थिक विकास के द्वारा मुक्त-उद्योग और नियत्रित समाजवाद के बीच सुनहरा मध्यम मार्ग तलाश करने की कोशिश कर रहा है। जहा राज्य को गैर जरूरी निजी उद्योगो को हस्तगत करने मे अपने दुर्लभ साधनो को बर्बाद नही करना चाहिए, वहा सरकार के सामने यह रास्ता भी खुला है कि वह विभिन्न ससदीय कानूनो के मातहत समाज के व्यापक हितो मे निजी उद्योगो का प्रभावशाली नियत्रण और नियमन करे। किंतु यह आवश्यक है कि "बुनियादी और सुरक्षा की दृष्टि मे सभी महत्वपूर्ण उद्योगो और सार्वजनिक उपयोग की सेवाओ का सचालन राज्य करे।" यद्यपि गाधीजी "बहु-सख्यक उपभोक्ता उद्योगो को विकेंद्रित ग्रामीण क्षेत्र मे रहने देने के पक्ष मे थे,

तथापि उनकी राय थी कि मूल उद्योगो पर राज्य का स्वामित्व होना चाहिए।"

अगर निजी क्षेत्र के किसी देशी या विदेशी उद्योग का सुरक्षा की दृष्टि से राज्य राष्ट्रीयकरण आवश्यक समझे तो भारत सरकार के लिए यह अनिवार्य है कि उसके मालिक को मुनासिब मुआवजा अदा करे। लोकसभा मे सविधान (चतुर्थ) सशोधन विधेयक पर बोलते हुए नेहरूजी ने कहा था, "भारत सरकार विना मुआवजा दिये किसी की सपत्ति को हस्तगत नही करना चाहती। विदेशी पूजी और विनियोजनो को हस्तगत करने की चर्चाओ से मुझे आश्चर्य हुआ है। अगर देश विदेशियो की सपत्ति के साथ खिलवाड करने लगे तो वह दुनिया मे बदनाम हो जायगा।"

लोकतन्त्री ढांचा

इसके अलावा, भारत मे समाजवाद तानाशाही नियत्रण के मुकावले लोकतत्र के सिद्धातो पर आधारित है। सविधान के अनुसार, भारत 'सार्वभौम लोकतत्री गणराज्य' है, जिसे अपने तमाम नागरिको के लिए "सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और पूजा की स्वतत्रता तथा दर्जे और अवसर की समानता सुलभ करनी चाहिए और व्यक्ति की प्रतिष्ठा और राष्ट्र की एकता का आश्वासन देते हुए उनमे हर प्रकार के भाईचारे को बढावा देना चाहिए।"

भारत ही दुनिया मे शायद एकमात्र देश है, जिसने लोकतत्री ढाचे के अतर्गत व्यापक आर्थिक नियोजन के द्वारा समाजवादी समाज की स्थापना का प्रयोग शुरू किया है। अमरीका और ब्रिटेन जैसे पश्चिमी लोकतत्रो मे राष्ट्रपति रूजवेल्ट की 'नई नीति' अथवा लार्ड बेवरिज द्वारा प्रतिपादित 'सामाजिक सुरक्षा की योजना' के रूप मे हम कह सकते है कि आशिक नियोजन का आश्रय लिया गया है। भारत मे समाजवादी और लोकतत्री नियोजन का अबतक का अनुभव काफी सतोषजनक रहा है और यह जानकर सतोष होता है कि यह महत्वपूर्ण प्रयोग एशिया और अफ्रीका के नव-स्वतत्र देशो के लिए सहायक साबित हो रहा है।

विकेंद्रीयकरण

किंतु यह याद रखना आवश्यक है कि भारत अधिकाश पश्चिमी देशो मे प्रवर्तित अत्यधिक केंद्रित ढग के लोकतत्र का अनुसरण करने का कोई इरादा नही रखता। अति प्राचीनकाल से भारत मे पचायती ढग का विकेंद्रित लोकतत्र प्रचलित रहा है। राजाओ के वश-के वश मिट गए, एक क्राति के बाद दूसरी क्राति हुई, किंतु ग्राम-समुदाय ज्यो-के-त्यो बने रहे। ग्राम-समाज का सगठन अपने-आप मे एक छोटा-सा पृथक राज्य बन कर रहा। 'तमाम क्रातियो और परिवर्तनो के बावजूद अन्य किसी कारण की अपेक्षा उसने भारत के लोगो के अस्तित्व को कायम रखा है।'

भारतीय लोकतत्र युग-युगो से समाज के भीतर सामूहिक जीवन पर टिका रहा है, जहा सर्व-सम्मत या करीब-करीब सर्व-सम्मत फैसले किये जाते है। जहा भारत ने कम-ज्यादा ब्रिटिश नमूने के ससदीय लोक-तत्र को अपने सविधान मे स्वीकार किया है, वहा निर्देशक सिद्धात राज्य को आदेश देते है कि 'ग्राम पचायतो का सगठन किया जाय और उन्हे ऐसी सत्ता और अधिकार सौपे जाय जिनसे वे शासन की इकाइयो के रूप मे काम कर सकें।' इस निर्देशक सिद्धात की पूर्ति की दृष्टि से करीब-करीब सभी राज्य-सरकारो ने अपने-अपने क्षेत्रो मे 'लोकतत्री विकेंद्रीयकरण' अथवा पचायती-राज की स्थापना की है, ताकि भारत के देहातो मे बहु-सख्यक ग्राम-समाजो को व्यापक अधिकार और कर्तव्य सौप जा सके। प्रशासन के इस साहसिक विकेंद्रीयकरण को प्राचीन व्यवस्था का पुनर्जीवन अथवा कबीलावाद नही समझा जाना चाहिए, बल्कि यह उस समृद्ध अनुभव की परिपूर्ति है, जिसे भारत ने सदियो के दौरान मे प्राप्त किया है।

उसके कार्यो का विभाजन करना चाहिए।" प्रोफेसर कोल लिखते है, "लोकतत्र केद्रीयकरण का विरोधी है, कारण, वह एक ऐसी भावना है, जो जहा कही सामूहिक इच्छा को अभिव्यक्त करने की जरूरत होती है वही अपने-आपको तत्काल और स्थानीय तौर पर अभिव्यक्त करने की स्वतत्रता चाहती है। अगर उसे किसी एक केद्रीय धारा मे प्रवाहित करने की कोशिश की जायगी तो उसकी स्वय स्फूर्ति नष्ट हो जायगी और वह अवास्तविक हो जायगी।" ऑल्डस हक्सले भी कहते है, "श्रेष्ठतर समाज का राजनीतिक रास्ता विकेद्रीयकरण और उत्तरदायी स्वशासन का रास्ता है। "प्रोफेसर लास्की विकेद्रीयकरण की हिमायत करते है, कारण "एक केद्रित राज्य मे आज्ञा-पालन क्वचित् ही रचनात्मक होता है, वह यात्रिक और जड हो जाता है।" श्री लूइस ममफोर्ड "खुले क्षेत्र मे छोटे, सतुलित समाज कायम करने" की सिफारिश करते है, क्योकि ये समाज सच्चे और सशक्त लोकतत्र के योग्य प्रशिक्षण केद्र होते है। तानाशाही देशो मे भी अनुभव से सिद्ध हुआ है कि केद्रीयकरण स्थानीय पहल को कुठित करता है और सूचनाओ की ईकाइयो और केद्र के मध्य आदान-प्रदान मे अपव्यय होता है। गाधीजी ने इसलिए हमेशा यह माना था कि "केद्र मे बीस आदमी इकट्ठे बैठकर सच्चे लोकतत्र को नही चला सकते, उसे तो हर गाव के लोगो को नीचे से चलाना होगा।"

किंतु यह ध्यान मे रखना होगा कि आधुनिक दुनिया मे केद्रीयकरण और विकेद्रीयकरण के मध्य एकातिक रुख अपनाना उचित नही है। हमे अनिवार्यत मध्यम मार्ग खोजना होगा और केद्रीय पथ-प्रदर्शन और निर्देशन के साथ विकास के विभिन्न कार्यक्रमो पर विकेद्रित अमल करना होगा। इसलिए इन दो कल्पनाओ को असगत नही समझा जाना चाहिए। बुद्धिमानी की बात यह होगी कि राष्ट्रीय स्तर पर बुनियादी नीतियो का निर्माण किया जाय और विस्तृत योजनाओ को स्थानीय स्तर पर कार्यान्वित किया जाय और दोनो मे सामजस्य स्थापित किया जाय। नियोजन और प्रशासन की इस प्रणाली की तुलना 'एक वट वृक्ष से की जा सकती है, जो अपनी शाखाओ को फैला कर जमीन मे रोप देता है

और उनसे तथा मूल धड से दोनो—पोषण प्राप्त करता है।' ये शाखाएं जैसे बड़ी होगी तो उनसे सरकार को पोषण देनेवाला साधन खडा होगा। गावो और जिलो से योजनाए और प्रस्ताव आयगे, जिनमे क्षेत्र से सबधित पहल की शक्तिया अधिक स्वतत्रता पूर्वक गतिमान होगी।

नैतिक और मानवी मूल्य

अत मे, भारत का समाजवाद केवल भौतिक समृद्धि-कल्याण की भाषा में ही विचार नही करता, वह जीवन के नैतिक और मानवी मूल्यो पर बहुत जोर देता है। तीसरी पच-वर्षीय योजना यह सार्थक दावा करती है कि यद्यपि "नियोजन के लिए भौतिक साधनो का विनियोग करना होगा, किंतु उससे अधिक महत्वपूर्ण मानव विनियोग है। इसके लिए हर समय नैतिक, मानवी और आध्यात्मिक मूल्यो पर जोर देना होगा, जो आर्थिक प्रगति को सार्थक करते है।' प्रोफेसर टोयनबी कहते है कि "मनुष्य के नैतिक साधनो की पर्याप्तता या अपर्याप्तता से ही इसका निर्णय होगा कि मनुष्य के हाथो मे जो व्यापक नई भौतिक शक्ति आई है उसका भले के लिए अथवा बुरे के लिए उपयोग होगा।" वह यह भी कहते है कि "भारतीय किसानो के जीवन के भौतिक मानदडो को ऊचा उठाना कोई भौतिकवादी लक्ष्य नही है, उसका प्रमुख आध्यात्मिक महत्व है, क्योकि वह आध्यात्मिक प्रवृत्ति को सभव बनानेवाली आवश्यक शक्ति है।" प्रोफेसर मालेनबॉं मानवी और अभौतिक आधारो को प्रभावशाली बनाने पर जोर देते है। श्री कोलिन क्लार्क मानते हैं कि "आर्थिक विकास के मुख्य तत्त्व भौतिक अर्थात् प्राकृतिक साधन और पूजी विनियोग नहीं है, बल्कि मुख्य तत्त्व मानव है।"

नेहरूजी ने विज्ञान और तकनीकी शास्त्र के साथ आध्यात्मिकता को जोडने की आवश्यकता पर बार-बार जोर दिया था। उन्होने कहा है, "आध्यात्मिक दृष्टिकोण आवश्यक और अच्छा है और मै हमेशा इस विषय मे गाधीजी से सहमत रहा हू शायद कल की बजाय आज पहले से भी ज्यादा; जबकि हमारी यात्रिक सभ्यता को जिस आध्यात्मिक शून्यता का सामना करना पड रहा है, उसका उत्तर पाने की हम जरूरत अनुभव करते है।"

वह आगे लिखते है, "यह वास्तव मे पूर्णतया समन्वित मानव की रचना करने की समस्या है' अर्थात् आयोजन और विकास की जो शुद्ध भौतिक मशीनरी खडी की जा रही है, उसके मुकाबले मानव का निर्माण करने के लिए आध्यात्मिक और नैतिक शक्ति का आश्रय लेने की समस्या है ।" डा० श्वहाजर ने कहा है, "यदि नैतिक आधार न हो तो सभ्यता ढह जायगी, भले ही अन्य दिशाओ मे बलवान से बलवान प्रकार की रचनात्मक और बौद्धिक शक्तिया काम कर रही हो ।" यही कारण है कि गाधीजी केवल जीवन के 'उच्चतर मानदड' के लिए ही नही, बल्कि जीवन के 'श्रेष्ठतर मानदड' के लिए योजना बनाना चाहते थे । सबसे अधिक अर्थो मे अब आधुनिक दुनिया ने इस कथन की सचाई को समझ लिया है कि 'मनुष्य केवल रोटी पर जिदा नही रहता' और यह अवर्णनीय दुखात घटना होगी यदि भारत केवल भौतिक प्रगति और समृद्धि पर आधारित समाजवादी व्यवस्था की दिशा मे वेग से दौडता जायगा ।

३

उच्चतर उत्पादिता और कार्यकुशलता

यह बार-बार कहा गया है कि भारत की नियोजित अर्थ-व्यवस्था में जिस समाजवादी समाज की कल्पना की गई है, उसका कोई निश्चित कठोर स्वरूप नही समझा जाय। दूसरी पच-वर्षीय योजना के अनुसार "वह किसी सिद्धात अथवा वाद की चौखट मे जकडा हुआ नही है।" हर देश को अपनी स्वय की प्रतिभा, परपराओ और परिस्थितियो के अनुसार अपने आर्थिक विकास का मार्ग अपनाना चाहिए। इसीलिए भारत सरकार और योजना आयोग गत दशाब्दि के दौरान विभिन्न आर्थिक समस्याओ के बारे मे "व्यावहारिक" मार्ग खोजने की कोशिश करते आ रहे है और पचवर्षीय योजनायो के अमल मे लचीलापन रहा है। वास्तव मे, परपरागत पूजीवादी व्यवस्था और 'सशोधित' साम्यवाद के बीच की विभाजक रेखा दिन-प्रतिदिन क्षीण और अस्पष्ट होती जा रही है। पश्चिमी लोकतत्री देश अधिकाधिक मात्रा मे सामाजिक लक्ष्यो की ओर बढ रहे है। प्रोफेसर गालब्रेथ के अनुसार यह बहुधा अनुभव नही किया जाता कि "भारत की समाजवादी अर्थ-व्यवस्था की अपेक्षा अमरीका की बाजार अर्थ-व्यवस्था के अतर्गत राजकीय उद्योगो का क्षेत्र अधिक विस्तृत है।" प्रोफेसर का कहना है कि जहा अमरीका मे सरकार स्थूल राष्ट्रीय उत्पादन के २० प्रतिशत का पूरी तरह नियत्रण और वितरण करती है, वहा भारत का यह तुलनात्मक अक केवल १३-१४ प्रतिशत है। इसके विपरीत, सोवियत रूस अपनी नियोजित अर्थ-व्यवस्था की पद्धति मे पूजीवादी देशो की अनेक विधियो को आत्मसात कर रहा है। ख्रुश्चेव ने कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति के सामने सोवियत कृषि और उद्योगो के पुनर्गठन के बारे मे बोलते हुए यह अर्थसूचक बात कही थी कि "अगर जरूरी हो तो हमे पूजीपतियो

से उनकी अच्छी और लाभदायक वातो की नकल करना सीखना चाहिए।" उन्होने प्रश्न किया, "हम पूजीपतियो की उन वातो को क्यों न अपनाये जो वुद्धि-सगत और आर्थिक दृष्टि मे लाभदायक है ?" इसलिए भारतीय आयोजको का व्यावहारिक और लचीला दृष्टिकोण व्यावहारिक विचारो पर आधारित है।

बुनियादी रूपरेखा

भारत के राजनीतिक और आर्थिक विकास के कुछ विदेशी अध्येताओं को भारतीय आयोजन का व्यवहारवाद 'क्षोभजनक' प्रतीत हुआ है, जो विचित्र अस्पष्टता को जन्म देता है। किंतु यदि हमारी आयोजना का गहरा अध्ययन किया जाय तो पता चलेगा कि इस देश मे समाजवाद के विकास के लिए जो व्यापक सिद्धात अपनाये गये है, वे काफी निश्चित और ठोस है। भारत मे समाजवादी लोकतत्र की स्थापना के लिए स्वीकृत दिशा-निर्देशो के वारे मे कुछ भी भ्रमकारी या अस्पष्ट नही है। वे इस प्रकार है

(१) उन्नत तकनीक और श्रेष्ठतर कार्य-कुशलता और निष्ठा के द्वारा कृपि और औद्योगिक उत्पादिता की रफ्तार को तेज किया जाय।

(२) आय और सपत्ति की विषमताओ को कम किया जाय और आर्थिक शक्ति के केंद्रीयकरण को रोका जाय।

(३) पूरे रोजगार, श्रेष्ठतर शैक्षणिक सुविधाओ और बुनियादी आवश्यकताओ की, विशेपकर समाज के दुर्बल अगो के लिए, व्यवस्था करके सव नागरिको को अवसर की समानता प्रदान की जाय।

(४) जनसख्या के सभी वर्गो के मध्य समान हित साझेदारी और सामाजिक एकता की भावना उत्पन्न की जाय।

(५) गुटो से अलग रहने की नीति पर चलकर और पूर्ण निरशस्त्रीकरण के लिए ठोस प्रयास करके अतर्राष्ट्रीय सहयोग और विश्व-शाति के ध्येय को आगे वढाया जाय।

प्रचुरता की अर्थव्यवस्था

उत्पादिता की रफ्तार तीव्रतर करने के प्रथम निर्देश के सवध

मे, भारत की पचवर्षीय योजनाओ ने शीघ्रगामी कृषि और औद्योगिक विकास की दिशा मे व्यापक और सतुलित मार्ग अपनाने की कोशिश की है। राष्ट्रीय सपत्ति के अधिक उत्पादन के विना समाजवादी समाज के निर्माण का वस्तुत. यह अर्थ होगा कि गरीवी का वितरण हो जाय। समाजवाद के अदर वस्तुओ और सेवाओ की उपलब्धि वढाने की दृष्टि से समाज की उत्पादक शक्तियो का अधिक कुशल और लाभदायक उपयोग सभव होना चाहिए। आर्थिक समानता के लिए ठोस प्रयत्न करने के साथ-साथ नेहरूजी के शब्दो मे हमे 'प्रचुरता की अर्थव्यवस्था' कायम करने की कोशिश करनी चाहिए।

कृषि की उत्पादिता

कृषि उत्पादन के क्षेत्र मे हमारा बुनियादी दृष्टिकोण यह रहा है कि प्रति एकड उपज वढाने के लिए खेती के तरीको को सघन और आधुनिक वनाकर ग्रामीण अर्थव्यवस्था मे विविधता पैदा की जाय। देश को अन्न के मामले मे स्वावलबी वनाने के लिए ही नही, वलिक कपास, गन्ना, पटसन और तिलहन जैसी कुछ बुनियादी औद्योगिक कच्ची सामग्री की उपलब्धि की दृष्टि से भी कृषि का उत्पादन वढना अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इसलिए भारत की अर्थव्यवस्था को सुदृढ वनाने मे कृषि और उद्योगो का तुलनात्मक योग क्या हो सकता है, इस वारे मे विवाद करना व्यर्थ होगा। ये दोनो क्षेत्र एक दूसरे पर घनिष्ट रूप से निर्भर है, और एक-दूसरे के साथ जुडे हुए है और सहकारी आधारो पर कृषि-उद्योग मूलक समाज-व्यवस्था कायम करने के लिए दोनो का साथ-साथ विकास किया जाना चाहिए। जैसा कि डा० कुजनेट्स ने कहा है, "कृषि-क्षेत्र मे प्रति श्रमिक उत्पादन मे उल्लेखनीय वृद्धि दुनिया के किसी वडे क्षेत्र मे औद्योगिक क्रान्ति की आवश्यक शर्त है।" प्रोफेसर रोस्तोव का भी यह अर्थ-सूचक कथन है कि खेती की उत्पादिता शक्ति मे वृद्धि करके और उत्पादन मे तीव्र वृद्धि करके आधुनिक उद्योगो के लिए कार्यकारी पूजी का खासा भाग प्राप्त किया जाना चाहिए। यह एक विचित्र स्थिति है कि यद्यपि भारत मे इस समय प्रति एकड उपज दुनिया मे

सब से कम है, किंतु देश के विभिन्न भागो मे अनेक प्रगतिशील किसानो ने प्रयोग करके इतनी उपज की है, जो दुनिया मे सब से अधिक है। इसलिए विश्व बैंक मिशन की सन् १९५६ की रिपोर्ट के अनुसार "ऐसे जाने-बूझे तरीके है जो आसान है, किंतु गरीबी और अज्ञान के कारण जिन पर अमल नही किया जा सकता, उन पर समुचित अमल करके भारत मे कृषि की उत्पादिता बढाई जा सकती है।" योजना आयोग ने एक योजना तैयार की है, जिसके अनुसार प्रगतिशील किसानो द्वारा अपनाये जानेवाले उत्तम तरीको को साधारण किसानो मे प्रचारित किया जा सकेगा। प्रोफेसर रेडअवे लिखते है, "खेती के सुधरे तरीके अपनाने के लिए कुछ कार्यकारी या स्थायी पूजी जरूरी हो सकती है, किंतु इस अतिरिक्त पूजी के मुकाबले अतिरिक्त उत्पादन कही अधिक होगा और पूजी की व्यवस्था की अपेक्षा समस्या का कठिन अग यह होगा कि सुधरे हुए तरीको का प्रभावशाली ढग से किस प्रकार प्रसार किया जाय। इसलिए तीसरी पचवर्षीय योजना मे गाम-उत्पादन योजनाए बनाने पर विशेष जोर दिया गया है, ताकि सिंचाई की सुविधाओ का पूरा-पूरा उपयोग किया जाय, अच्छे किस्म के बीज, प्राकृतिक और रासायनिक खाद, सुधरे हुए कृषि औजार देकर नाना फसली क्षेत्रो को बढाया जाय और मिट्टी तथा पानी का सचय करके भूमि का विकास किया जाय। इन ग्राम-योजनाओ मे लाभ उठानेवालो के परपरागत दायित्वो की पूर्ति के कार्यक्रमो का भी समावेश किया जाय, जिनके अभाव मे ठोस कृषि प्रगति होना कठिन होगा।

सामुदायिक विकास

सामुदायिक विकास आदोलन जो देश के करीब-करीब सभी राज्यो मे पचायती राज का रूप ले रहा है अब वास्तव मे जन-आदोलन बन जाना चाहिए और श्री टी० टी० कृष्णमाचारी के शब्दो मे "उसका आधार आत्म सहायता और सहकारिता होना चाहिए और अपने जीवन-मान को ऊचा उठाने के लिए लोगो की रचनात्मक शक्तियो का उपयोग किया जाना चाहिए।" ग्राम-विकास खड और जिला पचायतो की

स्थापना का मुख्य उद्देश्य भारत के देहातो मे रहनेवाले किसान परिवारो के साधनो को वैज्ञानिक तरीको पर उत्पादक कामो मे नियोजित करना है। यदि ऐसा सगठित प्रयास निरतर नही किया जायगा तो सामुदायिक-विकास-कार्यक्रम हमारे सीमित साधनो के लिए बोझ बन जायगा और अपनी उपयोगिता और गतिशीलता गवा देगा। यह आदोलन विफल नही होना चाहिए, वह इस देश मे लोकतत्र और समाजवाद की रक्षा के लिए आवश्यक है। जैसा कि रिचर्ड पोस्टन ने कहा है, "भारत मे इस प्रकार के समुदाय कायम करने की कोशिश न केवल भारत, बल्कि सारी दुनिया के लिए आशाजनक चिह्न है।"

कृषि-सुधार

भारत मे कृषि-सुधार-कार्यक्रम का मुख्यत बुनियादी उद्देश्य यह है कि बिचौलियो की समाप्ति, भू-स्वामित्व की सुरक्षा, लगान के वैज्ञानीकरण और छोटे भू-स्वामियो मे सहकारी सिद्धातो के प्रसारण द्वारा कृषि-उत्पादन को बढाया जाय। इस पर जोर दिया गया है कि भूमि-सुधार की हर मजिल की पूर्ति के साथ कृषि उत्पादन बढाने और ग्राम-अर्थव्यवस्था मे विविधता लाने के लिए किसानो को अधिक सहायता देना सभव हो जायगा।

भू-स्वामित्व की अधिकतम सीमा लागू करने का भी मुख्य उद्देश्य यह है कि असली खेती करनेवालो को खेती की जमीन का मालिक बनाया जाय और वे उत्पादन बढाने मे प्रत्यक्ष दिलचस्पी ले सके। यह स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि भू-स्वामित्व की अधिकतम सीमा लागू करने का अर्थ यह नही है कि ग्रामीण क्षेत्रो के कुटुब अमुक सीमा से अधिक आय न कमा सके। वास्तव मे, जब योजना मे निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार भूमि फिर से बाट दी जायगी तो सभी किसानो को प्रति एकड उपज बढाने की हर कोशिश करनी होगी। इसके अलावा योजना मे कहा गया है कि ग्रामीण क्षेत्रो मे बडे पैमाने पर लघु ग्राम-उद्योगो और कुटीर उद्योगो की स्थापना की जाय, ताकि देहातो मे खेतो, छोटे कारखानो और उद्योग केद्रो का जाल बिछ जाय।

किंतु इसका यह अर्थ नही कि शहरी भूमि अथवा सपत्ति से प्राप्त होनेवाली आय को सीमित करने का कोई प्रयास न किया जाय । समाजवादी समाज कायम करने की क्रिया राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रो मे दाखिल होनी चाहिए और तीसरी पचवर्षीय योजना ने ठीक तौर पर ही ऐसी अनेक दिशाए सूचित की है, जिनमे शहरी आय को नियत्रित और व्यवस्थित किया जा सकता है । उसमे कहा गया है, "प्रथम, सामाजिक नीति द्वारा पूजीगत लाभ, सट्टे आदि से होनेवाली आय को सीमित किया जाय और राज्य उसका उचित भाग प्राप्त करे। दूसरे, कर-प्रणाली के विस्तार और सुधार द्वारा ऐसे कदम उठाये जाय कि इस तरह की आय पर पूरा कर वसूल किया जा सके, करो से बचने की कोशिश का सख्ती से सामना किया जाय और करो की चोरी के अवसर घटा कर कम-से कम किये जाय ।"

सहकारी खेती

भारतीय कृषि को ठोस आधार प्रदान करने के लिए यह जरूरी है कि उत्पादन, उधारी, आवश्यक वस्तुओ की उपलब्धि, बिक्री और माल की तैयारी के क्षेत्रो मे सहकारिता के सिद्धातो पर अमल किया जाय। तीसरी पचवर्षीय योजना ने यथासभव शीघ्र सभी गावो मे सेवा सहकारी समितिया सगठित करने की आवश्यकता पर बल दिया है। किंतु इन सगठनो की आत्मनिर्भरता और कार्यकुशलता सुरक्षित करने के लिए पर्याप्त प्रयत्न किया जाना चाहिए। गावो के सेवाभावी नवयुवको मे से भली प्रकार प्रशिक्षित कार्यकर्ता जबतक उपलब्ध नही होगे, तबतक बिचौलियो द्वारा गरीब किसानो के आर्थिक शोषण को समाप्त करने का बुनियादी लक्ष्य हासिल करना असभव होगा। जब सेवा सहकारी समितिया ठोस आधार पर स्थापित हो जायगी, तब सहकारी खेती का प्रयोग वाछनीय होगा, ताकि छोटे किसान वैज्ञानिक तरीके से खेती कर सके। नि सदेह, सम्मिलित खेती का आदोलन पूर्णतया स्वेच्छिक होना चाहिए और सरकार को उसे अनिच्छुक किसानो पर थोपने की कोई कोशिश नही करनी चाहिए। तानाशाही हुकूमतो के अतर्गत इस क्षेत्र मे दबाव के फलस्वरूप ज्यादा प्रगति नही हुई

है। रूसी समाचार पत्र (प्रावदा) ने चीन मे कम्यूनो की कार्य-पद्धति की बडी आलोचना की है और कहा है कि वह "हानिकारक और गलत रास्ते पर ले जानेवाली है।" इसके अलावा, भारत सरकार द्वारा स्वीकृत सहकार सम्मिलित खेती की योजना के अतर्गत, किसानो को भूमि पर अपना स्वामित्व बनाये रखने की छूट होगी और वे कतिपय पूर्व निर्धारित शर्तों के अनुसार सयुक्त खेती से अलग हो सकेगे। यदि किसान सहकारी खेती से होनेवाले आर्थिक लाभो के बारे मे सतुष्ट होगे तो वे निस्सदेह अपनी अतिम इच्छा से इस प्रकार की खेती को अपनायगे और उसके प्रयोग को जारी रखेगे। तीसरी योजना की अवधि मे विभिन्न राज्यो मे ३२०० सहकारी फार्म नमूने के तौर पर कायम किये जायगे। यदि इन नमूने की परियोजनाओ से किसानो को अपने भूमि साधनो को एकत्र करने की व्यावहारिक उपयोगिता का पता चल गया तो नमूने की परियोजनाओ की परिधि से बाहर अपने-आप बडी सख्या मे सहकारी फार्म कायम हो जायगे।

सहकारी खेती उन छोटे किसानो के लिए, जिनके पास सीमात अथवा उप-सीमात भूमि है, विशेष रूप से उपयुक्त है। मध्यम और बडे किसान, जिनके पास जमीन की बडी ईकाइया है और जो अपने परिवार के सब लोगो की श्रम-शक्ति और बैल-शक्ति का उनमे पूरा उपयोग कर सकते है, उन्हे अपनी आर्थिक जरूरतो की पूर्ति के लिए सहकारी सगठन आकर्षक प्रतीत नही हो सकता है। किंतु आज की परिस्थितियो मे छोटे किसान अपने साधनो को एकत्र करके ही सिचाई की वर्तमान सुविधाओ और अन्य सुधरे हुए तरीको का उपयोग करके अपनी उत्पादिता मे वृद्धि कर सकते है। सयुक्त सहकारी फार्मो की स्थापना मे सुविधा पहुचाने की दृष्टि से राज्य को इन क्षेत्रो मे भूमि की चकबदी करने का काम तेजी से चलाना चाहिए। इस प्रकार सहकारी खेती भारत के बहु-सख्यक छोटे किसानो के लिए ठोस और वैज्ञानिक आर्थिक योजना है। श्री ए० एम० खुसरो और श्री ए० एन० अग्रवाल के अनुसार "सहकारी खेती की वकालत सैद्धातिक नही, बल्कि अनिवार्य है, और राजनीतिक नही बल्कि आर्थिक है।"

यह जान लेना दिलचस्प होगा कि गाधीजी ने भी भारत मे सहकारी खेती के तरीको का समर्थन किया था। उन्होने १५ फरवरी १९४२ के 'हरिजन' मे लिखा था, "मेरा यह दृढ विश्वास है कि हम तबतक खेती से पूरा लाभ नही उठा सकेगे, जबतक कि हम सहकारी खेती को नही अपनायगे। क्या यह बुद्धिसगत नही कि गाव की भूमि को एक सौ टुकडो मे बाट लेने के बजाय यह बेहतर होगा कि गाव के एक सौ परिवार सारी जमीन पर मिलकर खेती करे और उससे होनेवाली आय को आपस मे बाट ले।" गाधीजी को आशा थी कि उनकी कल्पना की सहकारी खेती भूमि की शक्ल को बदल देगी और लोगो की गरीबी और बेकारी का अत कर देगी। किंतु उन्होने यह भी कहा था कि "यह तभी सभव होगा जब लोग एक दूसरे के मित्र बन जाय और एक परिवार की तरह रहने लगे।"

मिश्रित अर्थ-व्यवस्था

उद्योगो के क्षेत्र मे, भारतीय आयोजन 'मिश्रित अर्थव्यवस्था' की नीति पर चल रहा है। वह स्थूल राष्ट्रीय उत्पादन मे वृद्धि करने के लिए राजकीय और निजी क्षेत्रो को विशिष्ट कार्य सौपता है। राजकीय क्षेत्र से, विशेष कर बुनियादी और भारी उद्योगो के क्षेत्र मे, यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपना पूरा और सापेक्ष विकास करे। वह न केवल उत्पादन मे उच्चतर कार्य-कुशलता का परिचय दे, बल्कि श्रमिक वर्गो मे सार्वजनिक उत्साह के गुप्त स्रोतो को भी उन्मुक्त करे। जैसा कि प्रोफेसर डरबिन ने कहा है, "समाजवादी आर्थिक सगठन को निजी लाभ के स्थान पर सामाजिक उद्देश्यो की प्रस्थापना करना चाहिए और सभी व्यक्तियो की व्यापक शक्तिशाली उत्पादक वृतियो को मुक्त करना और समान हित की बुद्धिसगत और नैतिक भावना से उसे परिपुष्ट करना चाहिए।" प्रोफेसर माइर्डल "मनोवैज्ञानिक और आदर्श-प्रेरित" स्थिति उत्पन्न करने की आवश्यकता पर जोर देते है, जो "शीघ्र-गामी आर्थिक विकास मे सहायक होती है।"

भारत मे लोकतत्रीय विकेंद्रीयकरण प्रचलित होने के साथ राजकीय

क्षेत्र केंद्र और राज्यो के औद्योगिक प्रयासो को चलाने के अलावा अब धीरे-धीरे ग्राम-पचायतो के स्वामित्व और प्रबध में चलनेवाले देहाती उद्योगो में भी सक्रिय होगा। इस प्रकार के सामुदायिक उद्योगो की स्थापना करके हम केवल मुट्ठीभर लोगो के ही नही, बल्कि सारे राष्ट्र के जीवन-मान को ऊचा उठाने के कार्य मे लोगो के भीतर फिर से शक्ति और उत्साह पैदा कर सकते है।

राजकीय क्षेत्र

भारत सरकार ने किसी सकुचित या सैद्धातिक विचार से प्रेरित हो कर राजकीय क्षेत्र को देश के औद्योगिक विकास मे महत्वपूर्ण स्थान नही दिया है। राजकीय क्षेत्र के उद्योगो की सूची पर एक निगाह डालने से पता चलेगा कि ऐसे हर उद्योग के लिए काफी मात्रा मे पूजी के विनियोजन और उत्तम प्रकार के प्रवध-कौशल की आवश्यकता थी। निजी उद्योगपति साधारणतया इन बुनियादी उद्योगो की स्थापना के लिए आवश्यक साधन नही जुटा पाते। यह संयोग की बात नही है कि वर्तमान शताब्दि के शुरू के वर्षो मे निजी क्षेत्र मे इस्पात कारखानो की स्थापना के बाद, देश को नये इस्पात के कारखाने की स्थापना की चर्चा शुरू करने के लिए भी करीब आधी शताब्दि तक प्रतीक्षा करनी पडी। यह सुविदित है कि विकासशील देशो मे मुनाफे की मात्रा बुनियादी उद्योगो की अपेक्षा उपभोक्ता उद्योगो मे अधिक होती है और इसलिए अर्थशास्त्र के साधारण नियम के अनुसार निजी पूजी बुनियादी उद्योगो की अपेक्षा उपभोक्ता उद्योगो में अधिक लगती है। चूकि विकास की भावी रफ्तार बुनियादी उद्योगो के विकास पर निर्भर करती है, इसलिए बुनियादी उद्योगो की स्थापना के लिए साधन जुटाने होगे, चाहे उपभोक्ता उद्योगो के मुकाबले उनमे मुनाफे की मात्रा उतनी आकर्षक न हो। इस कारण राजकीय क्षेत्र को आगे आकर भावी विकास की जिम्मेदारी लेनी पडती है। इसके अलावा, भारत जैसे देश मे, श्री जॉन पी० लूइस के शब्दो मे, 'जहा सरकार स्वतत्रता-प्राप्ति के समय सभी आधुनिक सगठनो की अपेक्षा अधिक विकसित

थी, वहा राजनीतिक अधिकारियो के लिए विकास का नेतृत्व करना स्वाभाविक था।"

हाल मे भारत सरकार ने राजकीय क्षेत्र मे उद्योगो को व्यापक दायित्व सौपने की दृष्टि से जो कदम उठाये है, उनका उद्देश्य विभिन्न तरीको से उनकी उत्पादन-कुशलता बढाना है। इस दृष्टि से कदम उठाये गए है कि कारखानो के जनरल मैनेजरो को प्रभावशाली कार्यकारी प्रमुख समझा जाय और उन उद्योगो के कुशल सचालन के लिए उनको प्रत्यक्ष उत्तरदायी ठहराया जाय। अब उन्हे कार्य-सचालन की दृष्टि से महत्वपूर्ण निर्णय लेने के पर्याप्त अधिकार होगे और सचालक-मडल के सदस्यो की जिम्मेदारी आम नीतियो, देखभाल, आयोजन और समन्वय तक सीमित रहेगी। हमारी धरती पर विदेशी आक्रमण के कारण उत्पन्न वर्तमान सकट की दृष्टि से, इन महत्वपूर्ण राजकीय उद्योगो मे उत्पादन बढाने की कही अधिक आवश्यकता है।

राजकीय क्षेत्र के उद्योगो से यह भी आशा की जाती है कि वे भावी विनियोजन के लिए खासी बचत करे। इन उद्योगो के लिए 'न कोई हानि और न कोई लाभ' का सिद्धात अब सर्वथा पुराना पड गया है। वास्तव मे, अल्पविकसित अर्थव्यवस्था मे ये राजकीय उद्योग श्री जोन राबिन्सन के शब्दो मे स्थापित ही इसलिए किये जाते हे कि "वे पूजीवाद की अपेक्षा किसी भी अर्थव्यवस्था से विनियोजन पूजी प्राप्त करने के कही अधिक शक्तिशाली साधन सिद्ध होते हे।"

तीसरी योजना की अवधि मे यह अनुमान लगाया गया है कि केद्रीय और राज्य-सरकारो द्वारा सचालित उद्योगो से कार्यकारी खर्च, सामान्य प्रतिस्थापन, ब्याज और लाभाश चुकाने के बाद लगभग ४५० करोड रुपये की बचत होगी। इसके अलावा, भारतीय रेलो से राष्ट्रीय योजना के लिए ३५० करोड रुपया जुटाने की आशा की गई है।

श्रम की उत्पादिता

इन राजकीय उद्योगो मे काम करनेवाले श्रमिको की उत्पादिता-शक्ति बढाने के लिए श्रमिक वर्गो को भौतिक और सामाजिक

प्रोत्साहन देना जरूरी होता है । साम्यवादी देशो में, जिनमे रूस भी शामिल है, उत्पादन वढाने के लिए वोनस और काम की मजदूरी के रूप मे ठोस भौतिक प्रोत्साहन दिये जाते हे । श्री डगलस जे ने लिखा है, "सोवियत रूस के आज के समाज में सवसे अधिक और सवसे कम वेतन पानेवालो की कर चुकाने के वाद वास्तविक आय का अतर निश्चय ही ब्रिटेन और स्केण्डीनेविया के देशो की अपेक्षा अधिक है और सभवत अमरीका के वरावर है ।" श्री डेविड गारनिक के अनुसार "सोवियत प्रवधकर्त्ता का मुख्य काम उत्पादन से सवधित है, उत्पादन की मात्रा ही उसके काम की कसौटी समझी जाती है ।"

भौतिक प्रोत्साहनो के अलावा, श्रमिको की उत्पादिता-शक्ति स्थायी आधार पर उसी दशा मे वढाई जा सकती है जव श्रमिको को औद्योगिक प्रतिष्ठान का 'साथी-ट्रस्टी' माना जाय और मालिक तथा मजदूर दोनो को अपने कर्तव्यो और अधिकारो का पूरा भान हो । जैसा कि तीसरी पचवर्षीय योजना मे कहा गया है, "गरीवी, वेकारी और अल्प उत्पादिता के दुश्चक्र को तभी तोडा जा सकेगा, जब उत्पादन की क्रिया मे लगे सभी लोगो को अधिकतम योगदान करने के लिए जोरो से प्रेरित किया जायगा ।"

राजकीय औद्योगिक प्रतिष्ठानो को अपने कारोबार मे व्यावसायिक नैतिकता और ईमानदारी की ठोस परपराए भी कायम करनी चाहिए। जैसा कि श्री फर्डिनेन्ड ज्विग ने कहा है, "कोई सगठन बहुत कार्य-कुशल और लाभदायक हो सकता है, किंतु राष्ट्र की नैतिक पृष्ठभूमि की दृष्टि से सर्वथा विफल सिद्ध हो सकता है ।" भ्रष्टाचार से मुक्त और ईमानदार प्रशासन के विना समाजवादी, समाज विशेपकर उद्योग और व्यापार के क्षेत्र मे, वाहरी आकर्षण के बावजूद केवल खोखला ही होगा ।

राजकीय क्षेत्र का आकार

कुछ लोगो ने भारत मे राजकीय क्षेत्र के आकार के बारे मे भ्रात धारणाए बना ली है । शायद, यह पूरी तरह अनुभव नही किया जाता

कि तीसरी योजना के अत मे सगठित उद्योगो मे लगी पूजी मे राजकीय क्षेत्र का अशदान केवल २५ प्रतिशत होगा, शेप ७५ प्रतिशत निजी क्षेत्र के हाथो मे होगा ।

तीनो योजनाओ की अवधियो मे खनिज उत्पादन के लिए राजकीय क्षेत्र के पूजी विनियोजन मे कम-से-कम १० प्रतिशत से लेकर करीव ३३ प्रतिशत तक की वृद्धि होने की आशा है। किंतु अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रो मे, जिनमे कृपि और सामाजिक सेवाओ का भी समावेश है, कुल पूजी विनियोजन के मुकावले राजकीय क्षेत्र की पूजी का अनुपात प्रथम योजना के ४६ प्रतिशत से वढकर दूसरी योजना मे ५४ प्रतिशत हो गया था। तीसरी योजना मे अनुमान है कि यह ६० प्रतिशत होगा और चौथी तथा उसके वाद की योजनाओ मे निश्चित राष्ट्रीय नीति के अनुसार उसमे और भी वृद्धि होगी ।

निजी क्षेत्र

किंतु भारतीय अर्थव्यवस्था मे, विशेपकर उपभोक्ता उद्योगो मे निजी क्षेत्र का महत्वपूर्ण स्थान बना रहेगा । औद्योगिक नीति विषयक प्रस्ताव (देखे परिशिष्ट २) मे स्पष्ट कहा गया है कि राज्य की यह नीति होगी कि वह ऐसे उद्योगो के निजी क्षेत्र मे विकास होने मे सहायता और प्रोत्साहन दे, जो ए और बी सूची मे शामिल नही हे और उनके लिए आवश्यक सहायता का भी प्रवध करे । अवश्य ही, यह स्पष्ट कर दिया गया है कि निजी क्षेत्र के औद्योगिक प्रयासो को सरकार की सामाजिक और आर्थिक नीति के व्यापक ढाचे मे लाजमी तौर पर अपना स्थान ग्रहण करना होगा और तद्विपयक कानूनो के अनुसार नियत्रण और नियमन मे रहना होगा । आखिर तो श्री जार्ज गोयडर के शब्दो मे, "आधुनिक समाज मे निजी उद्योग को हिस्सेदारो के साथ-साथ श्रमिको, समाज और उपभोक्ताओ के हितो की भी रक्षा करनी होगी ।" किंतु भारत सरकार स्वीकार करती है कि साधारणतया इन उद्योगो को राष्ट्रीय योजना के लक्ष्यो और उद्देश्यो को ध्यान मे रखते हुए अपना विकास करने की यथासभव अधिक-से-अधिक स्वतत्रता दी जाय ।

भारत के प्रधानमत्री ने भी बार-बार दोहराया है कि योजना के ढाचे के भीतर निजी क्षेत्र को विकास करने का अवकाश, स्वतत्रता और प्रोत्साहन दिया जाय। उन्होने कहा है, "आप इस क्षेत्र को सैकडो तरीको से नियत्रित कर सकते है। . .किन्तु जहा आप उनका नियत्रण नही करते, वहा उन्हे आप पहल करने और परिणाम लाने का अवकाश दीजिए।" इस प्रकार राजकीय और निजी क्षेत्रो मे मेल-मिलाप की भावना से काम करने की आशा की जाती है। योजना आयोग के अनुसार, "हर क्षेत्र को दूसरे की पूर्ति करना और सारे राष्ट्र के विकास मे योगदान देना चाहिए।"

यह तथ्य ध्यान मे रखना चाहिए कि हमारे उत्पादन में आज निजी उद्योगो का प्रमुख भाग है। इस क्षेत्र में केवल बडे उद्योग ही नही है, बल्कि करोडो किसान, कारीगर, व्यापारी और छोटे व्यवसायी शामिल है, जिनके पारस्परिक मेल से आर्थिक क्रिया-कलाप और भारत की कुल जन-सख्या का एक वडा भाग वनता है। सगठित उद्योगो के क्षेत्रमे भी राष्ट्रीय आयोजन के फलस्वरूप निजी क्षेत्र को भारी प्रोत्साहन मिला है, क्योकि, उसके अनुसार उपभोक्ता-सामग्री के आयात पर अनेक कडे प्रतिवध लगाये गए है और पूजीगत माल और आयातो की स्थिरता के लिए विदेशी विनिमय अधिक मात्रा मे उपलब्ध किया गया है। श्री वी० के० आर० वी० राव ने लिखा है, "इस नीति ने न्यूनाधिक घरेलू बाजार की गारटी सुलभ की है, जिससे निजी क्षेत्र का योजना द्वारा निर्धारित लक्ष्यो से भी अधिक व्यापक पैमाने पर और विविध रूपो मे विकास और विस्तार हुआ है।" भारत मे निजी उद्योगो को औद्योगिक वित्त-निगम, औद्योगिक ऋण और विनियोजन निगम, जीवन बीमा निगम और भारत पुनर्वित्त निगम सस्थाओ से ठोस प्रत्यक्ष वित्तीय सहायता मिली है।

अप्रत्यक्ष रूप से, राज्य निजी क्षेत्र को करो मे रियायते देकर आर्थिक दृष्टि से सहायता देता रहा है, जिससे पूजी विनियोजन को प्रोत्साहन मिले। उदाहरण के लिए. दुहरा घिसाई अलाउस, विकास रिबेट और अमुक अवधि के लिए कर-मुक्ति की व्यवस्था की गई है। यह भी याद रखना चाहिए कि राजकीय उद्योगो के अतर्गत आर्थिक

और सामाजिक मदो मे मुख्यत बिजली, परिवहन, सचार, तकनीकी शिक्षा और वैज्ञानिक शोध के लिए जो भारी पूजी विनियोजन हुआ है वह निजी क्षेत्रो को पुष्ट करने मे अभूतपूर्व तरीके से सहायक रहा है।

सहकारी क्षेत्र

किंतु निजी क्षेत्र को भारत की नियोजित अर्थव्यवस्था द्वारा उत्पन्न नई स्थिति के साथ खुशी-खुशी सगति बिठाने के लिए तैयार होना चाहिए और श्री मोरिस डॉब के शब्दो मे "व्यावसायिक स्वतत्रता की कल्पना" से पीडित नही होना चाहिए। हमारे समाजवादी ढाचे मे, यह आशा की जाती है कि व्यापार और उद्योग का निजी क्षेत्र धीरे-धीरे कार्यकुशल और सुगठित सहकारी क्षेत्र बन जायगा, जिसमे निजी अथवा समूहगत प्रेरणा के लाभो के साथ-साथ समाज की आम भलाई का भी मेल होगा। सहकारी क्षेत्र मे, स्वभावत निजी व्यवसायियो को सतत आधार पर उचित मुनाफा कमाने का काफी अवकाश होगा किंतु उन्हे समुदाय के हितो को ध्यान मे रखते हुए थोडे मुनाफे पर सतोष करना चाहिए। मुनाफाखोर समाज मे अनियोजित अर्थ-व्यवस्था का जमाना हमेशा के लिए लद चुका है और आज की गति-शील और शीघ्र परिवर्तनशील दुनिया मे उसे वापस लाने की कोशिश बेकार होगी।

आर्थिक कुशलता

उद्योग और कृषि दोनो क्षेत्रो मे जहा तक उन्नत तकनीक के प्रयोग का सवाल है, उत्पादिता कुशलता बढाने के लिए वैज्ञानिक उपाय अपनाने की हर कोशिश की जा सकती है, किंतु उच्चतर उत्पादन और पूर्णतर रोजगार के मध्य सही सतुलन रखने की पर्याप्त सावधानी रखी जानी चाहिए। अल्प विकसित देशो मे आधुनिकतम मशीनो का मनमाना उपयोग करने और अपने सीमित पूजीगत साधनो और बेकार जन-शक्ति के सर्वोत्तम उपयोग की आवश्यकता को नजरअदाज करने की वृत्ति पाई जाती है। डा० ईनजिग ने लिखा है कि जहा अर्थव्यवस्था

अत्यधिक विकसित हो और आबादी थोडी हो, वहा श्रम की बचत करनेवाले साधनो का उपयोग लाजमी है, किंतु पिछडे देशो की अर्थ-व्यवस्थाओ मे अपने-आप चलनेवाली मशीनो और आधुनिकतम यान्त्रिक साधनो का प्रचलन शायद ही लाभदायक होगा, जहा बडी सख्या में अकुशल मजदूर खेतो और कारखानो मे नाकाफी मजदूरी पर काम पाने को लालायित रहते है।

प्रोफेसर गालब्रेथ ने इस जाहिरा किंतु बहुधा भूले हुए अनुभव को दोहराया है कि अल्पविकसित देशो 'को अधिक प्रगतिशील देशो की विधियो को, जिनमे मजदूरो की कमी का खयाल रखा जाता है, अपने विकास की प्रारभिक अवस्थाओ मे नही अपनाना चाहिए। वह कहते है, "ऐसा करने से अल्प साधनो की बर्बादी होगी और विकास मे बाधा पडेगी और सयोग से भी कही अधिक बेकारी मे वृद्धि होगी।" डा० शूमाकर 'माध्यमिक तकनीक' अपनाने की जोरदार हिमायत करते हैं, जो वास्तव मे भारतीय परिस्थितियो के उपयुक्त होगी। किंतु यह स्वीकार किया जाता है कि अल्प विकसित देशो मे एक से अधिक प्रकार की तकनीक इस्तेमाल की जा सकती है। डा० बेटलहीम के शब्दो मे, "आखिरी तकनीकी चुनाव मे किसी एक तकनीक का नही, बल्कि तकनीक समूह का चुनाव करना होता है।" इसी दृष्टि से, योजना-आयोग ने छोटे, कुटीर और ग्राम-उद्योगो के विकास और विस्तार को उच्च प्राथमिकता दी है। हाल मे, विभिन्न राज्यो के ग्रामीण क्षेत्रो मे सघन और समन्वित आधार पर उद्योगो की करीब पचास नमूने की परियोजनाए कायम करने का निश्चय किया गया है। इनमे उन्नत तकनीक अपनाने के साथ-साथ अविकसित क्षेत्र के लोगो को पूरा रोजगार देने की भी व्यवस्था की जायगी। हमारा बुनियादी लक्ष्य केवल तकनीकी कुशलता हासिल करना नही है, बल्कि हम व्यापक अर्थ मे आर्थिक कुशलता प्राप्त करना चाहते है। जो आर्थिक सगठन आधुनिकतम तकनीकी सुधारो के पीछे दौडता है और बेकारी तथा मानव-दुखो के रूप मे सामाजिक हानि का हिसाब नही लगाता, उसे समाज-वादी, प्रगतिशील या कार्यकुशल सगठन नही कहा जा सकता।

'यांत्रिक' की बजाय 'रासायनिक'

कृषि के क्षेत्र मे कुछ राजकीय यान्त्रिक फार्म कायम किये गए है, ताकि उन क्षेत्रो का पर्याप्त विकास हो सके जिनमे सिंचाई की सुविधाए उपलब्ध की जा रही है और जहा काफी सख्या मे जनशक्ति सहज उपलब्ध नही है। किंतु आमतौर पर हमारी नीति उन छोटे किसानो को उन्नत औजार और साधन देना है, जो बडे पैमाने पर मशीनी खेती नही कर सकते। हमारी जैसी विकासशील अर्थव्यवस्था मे, जहा आबादी काफी सघन है, विकसित देशो-जैसी मशीनी खेती न तो व्यावहारिक होगी और न वाछनीय। जॉन स्ट्रेची ने एशिया और अफ्रीका के देशो के कृषि-कार्यक्रमो मे यान्त्रिक के बजाय रासायनिक साधनो के उपयोग पर बहुत अधिक बल दिया है। वह कहते है कि रासायनिक खादो, स्थानीय खादो और कीटनाशक औषधियो का व्यापक उपयोग करना चाहिए। इसके अलावा, दुनियाभर का यह अनुभव रहा है कि मशीनी खेती लाजमीतौर पर प्रति एकड उपज नही बढाती है। उदाहरण के लिए, अमरीका और आस्ट्रेलिया के बडे फार्मो की तुलना मे जापान मे छोटे फार्म दुगनी और डेन्मार्क तथा स्विट्जरलैण्ड मे चौगुनी उपज करते है। यह सही है कि बडे फार्मो मे उत्पादिता प्रति व्यक्ति बढती है, प्रति एकड नही। इसलिए समाजवाद को बडे पैमाने पर मशीनीकरण का पर्यायवाची नही समझा जाना चाहिए। विभिन्न राष्ट्रीय-अर्थ-व्यवस्थाओ मे स्थानीय परिस्थितियो और जरूरतो के अनुसार उत्पादन के उन्नत तरीके बुद्धि-सगत और सतुलित रूप मे अपनाने चाहिए।

४

न्यायोचित वितरण

जहा समाजवादी समाज की स्थापना के लिए कृषि और औद्योगिक उत्पादन की रफ्तार तेज करना बहुत आवश्यक है, वहा न्यायोचित वितरण की व्यवस्था करना और वर्तमान आर्थिक और सामाजिक विषमताओ मे कमी करना भी कम जरूरी नही है। आधुनिक विज्ञान और तकनीक शास्त्र की प्रगति के साथ पश्चिम के अनेक देश श्री लुई फिशर के शब्दो मे 'समृद्धि के सकट' से पीडित है। कुछ लोगो की प्रकट समृद्धि के मध्य लज्जाजनक सार्वजनिक गरीबी विद्यमान है।

यह अधिकतम सामाजिक कल्याण दो अत्यत भिन्न तरीको से सिद्ध करने का प्रयत्न किया जाता है। कुछ पश्चिमी लोकतत्री देश, जिनमे पश्चिमी जर्मनी भी शामिल है, हृदय से यह मानते है कि बाजारगत अर्थव्यवस्था के अतर्गत मुक्त प्रतियोगिता द्वारा ही व्यक्तिगत समृद्धि और सार्वजनिक हित दोनो प्राप्त किये जा सकते है। डा० लुडविग एर्हर्ड स्पष्ट शब्दो मे कहते है कि "प्रतियोगिता के एकमात्र रास्ते से ही सारे समाज की प्रगति और लाभ यानी समाजीकरण सर्वोत्तम रूप मे प्राप्त किया जा सकता है।" इस आर्थिक मान्यता का आधार इस आशा मे निहित है कि उत्पादन के उच्चतर स्तर और व्यक्तिगत समृद्धि के फलस्वरूप अत मे सामाजिक और राष्ट्रीय कल्याण सिद्ध हो सकता है। इसके विपरीत, साम्यवादी देश 'सर्वहारा की तानाशाही' के द्वारा वर्ग-हीन समाज-व्यवस्था कायम करने की कोशिश कर रहे है, किन्तु तानाशाही तत्र अत मे अत्यत केद्रित और नौकरशाही प्रशासन को जन्म देता है और राज्य निस्तेज होने के बजाय करीब-करीब असीम सत्ता का उपभोग करता है। ऑल्डस हक्सले कहते है कि "असमर्यादित संगठन का असावधी प्रभाव होता है, वह स्त्री-पुरुषो को स्वयं-चालित मशीनें बना

देता है और रचनात्मक भावना का गला घोट देता है।" प्रोफेसर एलेक नोव ने अपनी नई पुस्तक मे यह सिद्ध करने के लिए विस्तृत तथ्य और आकडे प्रस्तुत किये हैं कि चार दशाब्दियो के तानाशाही आयोजन के वावजूद सोवियत रूस मे आज भी कृपि का "आयोजन तथा प्रशानस अकुशल और अपव्ययी है।" ख्रुश्चेव ने अपने देश के कृपि-सगठन के कुप्रवध और व्यापक भ्रष्टाचार की कडी आलोचना की थी। चीन मे देहाती कम्यूनो का प्रयोग मुख्यत इसलिए विफल रहा कि उसके अमल मे वहुत अधिक कठोरता और एकरूपता का आश्रय लिया गया।

भारतीय आयोजन मे, दुनिया के आर्थिक इतिहास मे शायद पहली वार विकेद्रित समाजवादी समाज का निर्माण करने का हार्दिक प्रयास किया जा रहा है, जिसमे आर्थिक विकास की गतिशील रफ्तार के साथ व्यापक लोकतत्री प्रक्रिया के अतर्गत और शातिमय तरीको से व्यापक सामाजिक और आर्थिक न्याय की स्थापना सभव होगी। गाधीजी के कथनानुसार, "समान वितरण का सच्चा अर्थ यह होगा कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी स्वाभाविक आवश्यकताओ की पूर्ति का साधन प्राप्त हो।" इसका यह अर्थ है कि "ट्रस्टीपन की भावना से जीवन के हरेक क्षेत्र मे सयम से काम लिया जाय।" नेहरुजी ने हमेशा इस वात पर वहुत अधिक जोर दिया था कि सभी नागरिको की खाना, कपडा, मकान और शिक्षा-जैसी प्राथमिक जरूरतो की पूर्ति की जाय ताकि जन-साधारण को न्यूनतम किंतु उत्तम जीवन-मान प्राप्त हो सके। यह स्पष्ट है कि समाजवादी समाज की स्थापना के लिए शब्दश समान वितरण न तो व्यावहारिक है और न आवश्यक।

प्रगतिशील कर-प्रणाली

तीसरी योजना मे वर्तमान विषमताओ को कम करने और थोडे से लोगो या समूहो के हाथ मे आर्थिक सत्ता केद्रित न होने देने के लिए अनेक लोकतत्री उपाय प्रस्तावित किये गए है। भारत सरकार की कर-नीति मे इसी लक्ष्य की दृष्टि से सशोधन किया गया है। २८ फरवरी १९६३ को ससद के सामने अपना वजट-प्रस्ताव पेश करते हुए वित्तमत्री

ने कहा था, "हमको जिस गम्भीर चुनौती का सामना करना पड रहा है, उसको देखते हुए यह और भी अधिक जरूरी है कि समता और सामाजिक न्याय के जिन विचारो को हमने अपने जीवन का अविभाज्य अग स्वीकार किया है, उन पर पहले से भी कही अधिक उत्साहपूर्वक ध्यान दिया जाय ।" निम्नतर आयवाले समूह की आय मे वृद्धि करने के अलावा, वर्तमान कर-नीति का उद्देश्य वडी आयवालो पर उत्तरोत्तर अधिक कर लगाना है । आयकर सवधी आकडो से पता चलता है कि यदि करारोपण के पहले और वाद आयकर देनेवालो की सख्याओ की तुलना की जाय तो पता चलेगा कि करारोपण के बाद आय के आधार पर उन का पुर्नविभाजन न्यून आय-समूहो के पक्ष मे होगा '

निम्न तालिका[1] इस स्थिति पर प्रकाश डालती है—

करारोपित आय का क्षेत्र	सन् १९५९-६० मे आयकर देने वालो की सख्या (००० मे)	
रु०	करारोपण के पहले	करारोपण के बाद
५००० से नीचे	३०६.०	३१४४
५००१ से १०,०००	३३६ ९	३४३ १
१०,००१ से २५,०००	१८० २	१८३ ९
२५,००१ से ७०,०००	५४ १	४१ ८
७०,००१ और ऊपर	१३ ६	७ ६
योग	८९० ८	८९० ८

भारत मे आयकर और सवधित टैक्सो की दर करारोपित आय के क्षेत्र के अनुसार न केवल उत्तरोत्तर वढती जाती है, वलिक अर्जित आय के प्रकार के अनुसार भी क्रमिक प्रगतिशील है। इस प्रकार आय की समान परिधि मे भी सर्वथा अनार्जित आय पर सर्वाधिक कर लगेगा

1. केंद्रीय राजस्व मंडल के आंकडों के आधार पर ।

और वेतन के रूप मे होनेवाली आय पर कर-भार कम-से-कम होगा। दो लाख की वार्षिक आय के कर-दाता को अपनी आय का ६७.३ प्रतिशत देना होगा बशर्ते कि यह आय उसका वेतन हो। वेतन के अलावा अन्य सर्वथा अर्जित आय पर कर-दाता को आय की उसी राशि पर ६८ ९ प्रतिशत और सर्वथा अनार्जित आय पर ७४ ६ प्रतिशत देना होगा। सन् ६३-६४ के बजट मे आयकर पर जो अतिरिक्त अधिशुल्क लगाया गया था, वह भी क्रमिक प्रगतिशील था।

अप्रत्यक्ष कर

समाजवादी ढग की समाज-व्यवस्था कायम करने के सिद्धात के अनुसार उत्तरोत्तर वृद्धिगत करारोपण का तत्त्व केद्रीय और राज्य सरकारो द्वारा वसूल किये जानेवाले अप्रत्यक्ष करो मे भी दिखाई देता है। इस प्रकार, नियम रूप मे वस्तुओ पर जो कर लिये जाते है, उनमे विलास और अर्द्धविलास की चीजो पर सामान्यत अधिक कर वसूल किया जाता है। जिसके फलस्वरूप ऊची आय कमानेवाले समूहो की वास्तविक आय मे कमी हो जाती है। इसके विपरीत, जिन चीजो पर थोडी आय कमानेवाले अपनी आय का बडा भाग खर्च करते हे, उन पर या तो बिल्कुल ही टैक्स नही लिया जाता या कम लिया जाता है। उदाहरण के लिए, १९६३-६४ के बजट मे दियासलाई, चीनी, जूतो आदि पर कोई अतिरिक्त उत्पादन कर या अधिशुल्क नही लगाया गया। वनस्पति और गैर-जरूरी तेलो पर से कर उठा लिया गया।

कुछ भड़कीली उपभोक्ता वस्तुओ पर उत्पादन-कर की मात्रा भारी है। उदाहरण के लिए, मोटर गाडियो पर कर की दर १००० रु० या यथामूल्य (एड वलोरम) पर १० प्रतिशत से ३००० रु० तक अथवा १६ हार्स पावर से ज्यादा या कम की स्थिति के अनुसार यथामूल्य पर १५ प्रतिशत है। इसी प्रकार रेफ्रीजीरेटरो और वातानुकूलित यत्रो पर उत्पादन कर यथामूल्य पर लगभग २० प्रतिशत है। इसके विपरीत कुछ वस्तुए जन-उपभोग की है, जैसे दियासलाई, चीनी, साबुन आदि, उन पर हल्का कर वसूल किया जाता है।

सन् १९६३-६४ के बजट मे कुछ वस्तुओ पर उत्पादन कर बढाया गया है, और साथ ही अधिशुल्क भी लगाया गया है। इससे करो की क्रमिक वृद्धिशीलता के सिद्धाँत की और भी पुष्टि हुई है। देखा जाय तो बुनियादी उत्पादन मे यही सिद्धात प्रचलित है। उदाहरण के लिए सुपरफाइन कपडे पर ४७ ५ पैसे प्रति मीटर कर लिया प्रति जाता है, जबकि मोटे कपडे पर यह कर १८ पैसे मीटर है। इसके विपरीत, सन् १९६३-६४ के बजट मे लिखने के कागज, काच, चीनी मिट्टी के सामान, विजली के बल्व आदि पर १० प्रतिशत से लेकर चाय, कहवा, साबुनो और प्रसाधन सामग्री पर २० प्रतिशत तक और रेशमी कपडे, रेडियो, रेडियोग्रामो, मोटर गाडियो आदि पर ३३⅓ प्रतिशत अधिशुल्क लगाया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि उत्पादन कर इस तरह लगाये गये है कि क्रमिक वृद्धिशीलता की प्रणाली जन-उपभोग की वस्तुओ पर ही नही, वल्कि भडकीली उपभोग की वस्तुओ पर भी लागू होती है।

राज्यो मे लगनेवाले करो के बारे मे भी यही प्रणाली अपनाई जा रही है। विक्री कर इस तरह लगाया जाता है कि वह वस्तुओ की प्रवृत्ति और श्रेणी पर निर्भर करता है, चाहे वे विलास की हो या आवश्यकता की। रेफ्रीजिरेटरो, ग्रामोफोनो, वातानुकूलित यत्रो आदि पर १० प्रतिशत विक्री-कर लगाया जाता है। किंतु औपधियो और दवाओ, तिलहनो, साधारण काच की चीजो पर टॅक्स की दर विभिन्न राज्यो मे २ से ५ प्रतिशत है। इससे पता चलता है कि सामान्य उपभोग की वस्तुओ पर कर लगाने मे क्रमिक वृद्धिशील कर-प्रणाली लागू होती है।

क्या धनी और धनी हो रहे हैं ?

कुल मिलाकर, राजस्व कर-नीति और अल्प आयवाले समूहो को दिये जानेवाले अन्य प्रोत्साहनो के फलस्वरूप अल्प आयवाले समूहो मे कमाने-वालो की सख्या मे काफी वृद्धि हुई है। अखिल भारतीय आयकर अको के आधार पर सकलित आगे की तालिका मे पता चलता है कि सन् ५३-५४

से ५६-६० के छह वर्षों मे ५००० रु० वार्षिक से कम कमानेवालो की सख्या मे उच्च आयवाले समूहो के व्यक्तियो की सख्या की तुलना मे तीव्र गति से वृद्धि हुई है ।

करारोपण के पूर्व आयकर प्रदाताओ की कुल सख्या

(अक ००० व्यक्तियो मे)

करारोपित आय का क्षेत्र (रु०)	१९५३-५४	सालभर के कुल का %	१९५६-६०	सालभर के कुल का %
५००० से नीचे	१५७ ६	३१ १	३०६ ०	३४ ४
५००१ से १० ०००	२०१ २	३९ ७	३३६ ९	३७ ८
१०,००१ से २५,०००	१०७ ५	२१ २	१८० २	२० २
२५,००१ से ७०,०००	३२ ०	६ ३	५४ १	६ १
७०,००१ से अधिक	८ १	१ ६	१३ ६	१ ५
योग	५०६ ४	१०० ०	८९० ८	१०० ०

इस तालिका से पता चलेगा कि ५००० रु० से नीचे के आय-समूहो मे आयकर दाताओ का प्रतिशत सन् ५३-५४ मे ३१ १ प्रतिशत से बढकर सन् ५६-६० मे ३४ ४ प्रतिशत हो गया है । इसके विपरीत अन्य-आय समूहो मे यही प्रतिशत कम हुआ है ।

कर न लगनेवाले आय-समूहो के सबध मे कोई निश्चित आकडे उपलब्ध नही है । किंतु निम्नतम आयवाले व्यक्तियो के डाकखानो और परिगणित बैंको के बचत-खातो की सख्या बतानेवाली निम्न तालिका से स्थिति का खासा अनुमान किया जा सकता है ।

सेविंग बैंक अमानत खाते

		१९५१-५२	१९६१-६२	५१-५२ की तुलना में ६१-६२ की
		(करोड रुपयो मे)		प्रतिशत वृद्धि
क	पोस्ट आफिस बचत खातो की राशि वर्ष के अन्त मे	७४ २	३२५ ४	४३८ ६
ख	परिगणित बैंको के बचत खातो की वर्ष के अन्तिम शुक्रवार की राशि	१३५ ७	३३३ ७	२४५ ९
	क+ख का योग	२०९.९	६५९ १	३१४ ०

यह दिखाई देगा कि सन् ५१-५२ से ६१-६२ की दस वर्ष की अवधि मे बचत-खातो की राशि तीन गुनी से अधिक बढी है। डाकखानो के बचतखातो की राशि मे ४३९ प्रतिशत की असाधारण वृद्धि हुई है और यह अनुमान किया जाता है कि निम्नतम आय-समूहवाले व्यक्ति डाकखानो मे ही आमतौर पर बचत-खाते खोलते है। यह सही है कि इन बचतखातो की राशि मे हुई कुछ वृद्धि छोटी बचत सग्रह-अभियान और जन-सख्या की वृद्धि के कारण हुई होगी। किंतु इस तालिका से यह तथ्य प्रकट होता है कि जो व्यक्ति पहले बचत नही कर पाते थे, वे अब करने लगे है।

इन तथ्यो से इस आलोचना का पूरा औचित्य सिद्ध नही होता कि भारत मे आयोजन के बावजूद विभिन्न आर्थिक शक्तियो के फलस्वरूप धनी अधिक धनी और गरीब अधिक गरीब हो रहे है। कम आयवाले समूहो मे व्यक्तियो की आय मे दृश्य परिवर्तन दिखाई देता है, जबकि ऊची आयवाले समूहो मे व्यक्तियो की आय मे गिरावट आई है। इसके

समाज के सामाजिक और आर्थिक ढाचे मे गहरा परिवर्तन आ चुका है, रोजगार, जन-सख्या की विशेषताओ और कौटुविक सवधो मे परिवर्तन हुआ है।" धनी वर्ग विविध प्रकार से कानूनी दाव-पेचो के द्वारा करो से वचने की कोशिश करता है और ये 'सूक्ष्म तरीके' अव आकार मे काफी बढ गए है। भारत मे भी धनी और उच्च मध्यम-वर्ग के परिवार आय-कर और अधिकर की ऊची दरो से वचने के लिए धीरे-धीरे विभक्त हो रहे है। उदाहरण के लिए, हिन्दू सयुक्त परिवारो मे ४०,००० रु० से ऊपर की आमदनियो पर कर-निर्धारण कम हो रहा है। सन् ५३-५४ मे इस श्रेणी मे कर-दाताओ की सख्या २००९ थी। उनकी आय और टैक्स की राशि क्रमश १८ २२ करोड और ८ ४१ करोड रु० थी। सन् ५९-६० मे इस श्रेणी मे करदाताओ की सख्या घटकर १७५९ रह गई और उनकी आय १४ ५६ करोड और देय-कर-राशि ६ ८८ करोड रु० थी। इसलिए आयकर सवधी आकडो को, जिनसे देश मे पहले की अपेक्षा अधिक आर्थिक समानता की दिशा प्रकट होती है, विल्कुल यथार्थ निदर्शक ही नही मान लेना चाहिए।

टैक्सो से बचने के विभिन्न तरीको के अलावा यह मानना होगा कि देश के ऊची आयवाले समूह टैक्सो की खासी मात्रा मे चोरी करते है। करो की इस चोरी की मात्रा के अनुमानो मे अवश्य ही अतर होगा। ५० करोड से लगाकर २०० करोड तक प्रतिवर्ष करो की चोरी होने के अनुमान किये जाते है। किंतु हमे स्पष्टत स्वीकार करना चाहिए कि आयकर की चोरी के विभिन्न छिद्रो के वद करने की काफी गुजाइश है। वर्तमान सकट के समय लोग राष्ट्रीय कोप मे अधिक टैक्सो के रूप मे अपना योगदान करने के लिए राजी है। किंतु वे यह जरूर चाहते है कि सरकार वर्तमान टैक्सो को, विशेषकर समाज के धनी वर्गो से, वसूल करने के लिए सगठित प्रयास करे। इस सवध मे निम्न सुझावो पर सावधानी से विचार किया जाय और जहा सभव हो, उन पर अमल किया जाय।

(१) आयकर-दाताओ की भारत मे कुल सख्या करीब १० लाख है। हमारी जन-सख्या को देखते हुए यह सख्या थोड़ी है। अगर आय-

कर विभाग घर-घर और दुकान-दुकान पर जाकर व्यवस्थित ढग से जाच-पडताल करे तो आयकर-दाताओ की सख्या मे वृद्धि होने की काफी गुजाइश है। वर्तमान मे ऐसी जाच की व्यवस्था है, किंतु इस विषय मे अधिक उत्साह से काम लेने और राष्ट्रीय अभियान चलाने की जरूरत है।

(२) सारे देश मे, शहरो मे भवन-निर्माण की विस्तृत जाच कराना लाभदायक होगा, जिससे पता चल सके कि इस कार्य मे पूजी किन साधनो से प्राप्त हुई और भूतकाल मे प्रकट की गई आमदनी से उसकी सगति बैठती है अथवा नही। आयकर अधिकारियो को यह मालूम करने की कोशिश करनी चाहिए कि ऐसी जायदादो से होनेवाली आय को आय के विवरणो मे घोषित किया जा रहा है अथवा नही। इस विषय मे कुछ चुने हुए शहरो मे नमूने के तौर पर जाच की जा सकती है और उसके बाद इस योजना को सारे शहरी क्षेत्रो मे लागू किया जाय।

(३) रजिस्ट्रारो और नायब रजिस्ट्रारो को हिदायत दी जाय कि वे भूमि और मकानो की जायदाद के लेन-देन का विवरण समय-समय पर आयकर विभाग को भेजे। आयकर अधिकारी सबधित आयकर-दाताओ के आय-विवरणो की जाच-पडताल मे इस जानकारी का उपयोग कर सकते है।

(४) प्रत्यक्ष-कर-समिति ने सिफारिश की है कि ठेकेदारो को जब विभिन्न सरकारी एजेसिया भुगतान करे तो साथ ही आय-कर भी काट लिया करे ताकि कर की चोरी न होने पाये। यह आवश्यक प्रतीत होता है कि इस सिफारिश पर शीघ्र अमल किया जाय। मालूम हुआ है कि पाकिस्तान सरकार ने ठेकेदारो को भुगतान के समय ऐसा करना शुरू भी कर दिया है।

(५) कर से बचने के लिए इस ढग से व्यवसाय किया जाता है, जिसे हिसाब-बहियो मे दर्ज नही किया जाता। यह प्रथा बड़े पैमाने पर प्रचलित है। यह बुराई गत युद्ध के दौरान कीमतो को नियन्त्रित करने सबधी नियमो के कारण पैदा हुई और विभिन्न राज्यो मे बिक्री-कर लागू होने के बाद इसे और भी बल मिला। इस प्रथा के कारण सरकार

को बिक्री-कर के रूप मे ही नही, बल्कि आय-कर मे भी काफी हानि उठानी पडती है । इस प्रकार की करो की चोरी को वेहिसाव प्राप्त हुई सपत्ति की सतत जाच-पडताल करके ही प्रभावशाली रूप से रोका जा सकता है । इस प्रकार की जाच-पडताल बहुसख्यक मामलो मे सभव नही हो सकती । इसलिए सरकार को चुने हुए कर-चोरी के मामलो मे क्षेत्रगत और व्यापार या उद्योगगत आधार पर मुकद्दमे चलाने चाहिए ।

(६) कस्टम विभाग मे जानकारी देनेवालो को उदारतापूर्वक पुरस्कार दिये जाते है और उनसे अच्छे परिणाम निकले है । यह प्रणाली आयकर विभाग मे भी जारी की जानी चाहिए ।

(७) कपनी करो के सवध मे कपनियो की खर्च की छूट की मदो को कडा करके कर-वसूली के छिद्रो को वद किया जा मकता है । इस समय औद्योगिक और व्यावसायिक प्रतिष्ठानो के डायरेक्टरो और वडे अधिकारियो को आवास, परिवहन और आतिथ्य सत्कार के नाम पर काफी उदार सुविधाए दी जा रही हैं । यद्यपि सन् १९६१ के आय-कर कानून ने अतिथि-सत्कार की कुछ सीमा निर्धारित कर दी हे, फिर भी अन्य कुछ मदो मे कमी की गुजाइश है, जिन्हे व्यवसाय को वढाने के लिए उचित खर्च की सज्ञा दी जाती है । एक अधिकारी के वेतन और आनुसगिक सुविधाओ पर ६०,००० रु० वार्पिक खर्च की सीमा निर्धारित कर देने का निर्णय एक सही कदम है ।

भारत को सही अर्थो मे प्रगतिशील लोकतत्र होना चाहिए । लोकतत्र को स्थायी आधार पर सफल होना हो तो उसे 'वहुत अधिक ढीला' और अनुशासन रहित नही होना चाहिए । अपने समस्त नागरिको के लिए उच्चतर जीवन-मान प्राप्त करने के लिए उसे समाज विरोधी प्रवृत्तियो पर तात्कालिक और प्रभावशाली अकुश लगाना चाहिए । कठोर कदम जब उठाये जाते है तो वे हमेशा लोकप्रिय नही होते, किंतु श्री वाल्टर लिपमैन के शब्दो मे "बार-बार के नरम निर्णय ऐसी अवस्था कर देगे, जिसमे स्वतत्रता और लोकतत्र नष्ट हो जाते है ।"

आर्थिक शक्ति का विभाजन

तीसरी योजना ने ऐसी अनेक दिशाओ का निर्देश किया है, जिनके अनुसार कुछ व्यक्तियो अथवा समूहो के हाथो मे आर्थिक शक्ति केंद्रित न होने देने के लिए कदम उठाये जा सकते है। प्रथम, जिन क्षेत्रो में बडी औद्योगिक ईकाइयो की स्थापना और भारी पूजी-विनियोजन की आवश्यकता हो, उनमे राजकीय शक्ति के केंद्रीयकरण को प्रभावशाली रूप में रोका जा सकेगा। दूसरे, उद्योग मे नये सिरे से दाखिल होनेवालो और मध्यम और छोटे आकार की औद्योगिक ईकाइयो को, विशेषकर सहकारी क्षेत्र मे, अधिक अवसर दिये जा रहे है। सन् १९५६ के औद्योगिक-नीति-प्रस्ताव के दायरे मे भारत सरकार को औद्योगिक लाइसेंसो के जरिये निजी पूजी विनियोजन को नियन्त्रित करने के पर्याप्त अधिकार मिले हुए है। इसके अनुसार, नई औद्योगिक ईकाइयो की स्थापना या पुरानी के विस्तार के लिए लाइसेंस कमेटी की पूरी स्वीकृति आवश्यक है। नये लाइसेंस जारी करते समय चुने हुए औद्योगिक समूहो मे उद्योग केंद्रित न होने देकर आर्थिक शक्ति को फैलाने की सावधानी रखी जाती है। इससे अल्पविकसित क्षेत्रो मे उद्योगो की स्थापना मे मदद मिली है और विभिन्न क्षेत्रो मे बहुत से नये और नौजवान व्यवसायियों को प्रोत्साहन मिला है।

राजकीय नियंत्रण

भारत सरकार ने निजी औद्योगिक प्रतिष्ठानो के मैनेजिग एजेटों और मैनेजिग डायरेक्टरो के हाथो मे आर्थिक शक्ति केंद्रित न होने देने के लिए अनेक कदम उठाये है। सन् १९५९ के कपनी कानून के पास होने और उसमे हाल के सशोधनो के वाद राज्य को अतर-कपनी विनियोजन, विभिन्न कपनियो की सह-डायरेक्टरशिप, आतरिक साधनो के उपयोग और डायरेक्टरो तथा उच्च अधिकारियो के पारिश्रमिक के वारे मे पहले से अधिक अधिकार प्राप्त हो गए है। औद्योगिक (विकास और नियमन) कानून १९५९ द्वारा प्राप्त अधिकारो का उत्पादन, वितरण और मूल्यो पर नियत्रण करने के लिए उपयोग किया जा सकता हे। सन् १९६० के सशोधित कपनी कानून के अतर्गत कोई भी कपनी एक साथ सेक्रेटरी और कोपाव्यक्ष, मैनेजिग एजेट, मैनेजिग डायरेक्टर अथवा मैनेजर के रूप मे एक से अधिक प्रवध अधिकारी नियुक्त नही कर मकती। किसी सार्वजनिक लिमिटेड कपनी या उसकी सहायक कपनी मे किसी व्यक्ति को प्रथम वार मैनेजर के रूप मे नियुक्त करने के लिए भी केद्रीय सरकार की मजूरी प्राप्त करना जरूरी है। यदि भारत सरकार खास अनुमति प्रदान न करे तो कोई आदमी पब्लिक या प्राइवेट दो से अधिक कपनियो के मैनेजर के रूप मे काम नही कर सकता। कपनी विनियोजनो के वारे मे भी कानून की व्यवस्थाओ मे सशोधन कर दिया गया है। कुछ मर्यादाओ और अपवादो को छोड कर प्रवध समूहो के वाहर पूजी विनियोजन के लिए सरकार की स्वीकृति आवश्यक होगी। अतर-कपनी विनियोजन मे विनियोजन करनेवाली कपनी अपनी सग्रहीत पूजी का ३० प्रतिशत तक विनियोजन कर सकती है। इस समग्र सीमा के भीतर यह और प्रविधान है कि कोई कपनी किसी दूसरी कपनी के ९० प्रतिशत से अधिक साधारण शेयर नही खरीद सकती। सबसे ताजा सशोधन (१९६३) का उद्देश्य कपनी कानून का समन्वित प्रशासन और भ्रष्ट-प्रणालियो का उन्मूलन है।

यह सुझाया गया है कि औद्योगिक वित्त-निगम जैसी विविध

सरकारी एजेंसियो को सुरक्षित ऋण देने के बजाय ठोस निजी उद्योगो की साधारण शेयर पूजी मे हिस्सा लेने की स्वतत्रता होनी चाहिए। सन् १९६० के सशोधित कानून के अनुसार निगम को ऐसा करने का अधिकार मिल गया है और कोई कारण नही कि समाजवादी नमूने के आतरिक अग के रूप मे उस पर अमल क्यो न किया जाय ! यह सतोष का विषय है कि अब ससद ने उपयुक्त मामलो मे ऋण को साधारण शेयरो मे बदलने की नीति पर चलने का सरकार को अधिकार दे दिया है। यूनिट ट्रस्ट आदोलन को भी भारत मे प्रोत्साहन दिया जा रहा है, ताकि निम्न और मध्यम आय-समूह सट्टे से होनेवाली हानि की जोखिम न उठाते हुए शेयरो के रूप मे सपत्ति हस्तगत कर सके। प्रोफेसर टाने की राय मे सपत्ति का विकेद्रीकरण स्वतत्रता का साधन होता है और मै तो कहूगा कि यह समाजवादी लोकतत्र की दिशा में एक अच्छा कदम है।

छोटे उद्योगो का विकास

छोटे उद्योगो को प्रोत्साहन देना और बडे औद्योगिक प्रतिष्ठानो के मुकाबले उनकी प्रतियोगात्मक स्थिति को सुदृढ करना सरकार की सुनिश्चित नीति रही है। तीसरी योजना के शब्दो मे "छोटे और ग्राम-उद्योगो ने गत दशाब्दि मे अतिरिक्त रोजगार, अधिक उत्पादन और अधिक न्यायोचित वितरण की दिशा मे उल्लेखनीय योगदान दिया है। तीसरी योजना की अवधि मे उनका स्थान और भी महत्वपूर्ण रहनेवाला है। तकनीक और सगठन मे सुधार हो जाने से ये उद्योग राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के अतर्गत कार्यक्षम और प्रगतिशील विकेद्रित क्षेत्र का रूप धारण कर सकते हे और विशेषकर अविकसित क्षेत्रो मे रोजगार और आय के साधन उपलब्ध कर सकते है। किंतु तकनीकी परिवर्तन की रफ्तार इस तरह नियमित करनी होगी कि बडे पैमाने पर तकनीकी बेरोजगारी से बचा जा सके, जो लाखो व्यक्तियो के लिए मुसीबत का कारण होती है।

छोटे उद्योगो के विकास के लिए सरकार विभिन्न तरीको से सहायता दे रही है। उनको कच्चा माल, मशीनें, आवश्यक सेवाए और अपेक्षाकृत सस्ते दर पर ऋण सुलभ करने के लिए कदम उठाये जाते है।

छोटे उद्योगो के विकास को प्रोत्साहन देने के लिए सारे देश मे औद्योगिक बस्तिया स्थापित की गई है। दूसरी योजना की अवधि मे ६० बस्तिया या तो स्थापित की गई या मजूर की गई। तीसरी योजना की अवधि मे विभिन्न आकार की ३०० औद्योगिक बस्तिया स्थापित की जायगी। राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम ने दूसरी योजना की अवधि मे लघु उद्योगो को किराया-खरीद की शर्तों पर ४२० करोड रुपये मूल्य की मशीने सुलभ की है। इसके विपरीत, सरकार ने कुटीर और लघु उद्योगो से जो सामग्री खरीदी, उसका मूल्य सन् ५३-५४ मे ७, ४०,००० रुपये से वढकर सन् १९६०-६१ मे ६ करोड रुपये से अधिक हो गया।

औद्योगिक बस्तियो के अलावा, उद्योग मत्रालय ने तीसरी योजना की अवधि मे, विशेषकर अल्प विकसित क्षेत्रो मे अनेक ग्राम्य औद्योगिक बस्तिया स्थापित करने का निश्चय किया है। गाम्य औद्योगिक बस्तियो मे कारीगरो के उपयोग के लिए मुख्यत कार्य, स्थान और कुछ अन्य समान सेवा-सुविधाओ की व्यवस्था की जायगी।

लघु-उद्योगो का विकास हाल के वर्षो मे भारत मे विकास आयोजन का अत्यत अर्थसूचक चिह्न है। उदाहरण के लिए, सन् १९५६-६० की अवधि मे साइकल निर्माण करनेवाली लघु ईकाइयो की सख्या ४४ से १५०, सिलाई की मशीनो की ३५ से ७५, मशीनी औजारो की ३४४ से ५०० से अधिक, विद्युत मोटरो की ६ से ७४ और बिजली के पखो की २२ से ४७ हो गई। लघु उद्योग द्वारा उत्पादित ग्रेड रहित मशीनी औजारो का मूल्य सन् १९५६ मे १ ३० करोड रुपये से वढकर सन् १९६० मे ४ करोड रुपया हो गया। वर्तमान सकट के समय, लघु औद्योगिक ईकाइयो को सुरक्षा के लिए आवश्यक सामग्री का ...दन करने के लिए विशेष प्रोत्साहन दिया जा रहा है। इस काम

के लिए तकनीकी श्रमिक बडी सख्या मे फिर से प्रशिक्षित करने के लिए अल्प अवधि के पाठ्य-क्रमो की व्यवस्था की जा रही है।

ग्राम्य औद्योगीकरण

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, योजना-आयोग ने ग्राम्य औद्योगीकरण की करीब ५० परियोजनाये शुरू की है और इन परियोजनाओ से प्राप्त अनुभव को अन्य क्षेत्रो मे अनेक गुना प्रसारित किया जायगा। इन योजनाओ का मुख्य उद्देश्य भारतीय देहात का औद्योगीकरण करना है ताकि सहकारिता के आधार पर समाज का कृषि-औद्योगिक ढाचा स्थापित किया जा सके। देहाती क्षेत्रो मे विभिन्न प्रकार के उद्योग पहुचाकर हम गावो और शहरो के बीच की चौडी खाई को पाटने मे सफल हो सकते है। वडे शहरो मे औद्योगिक प्रतिष्ठानो के केद्रित होने के कारण हमारे ग्रामीण क्षेत्रो के परपरागत ग्राम और कुटीर उद्योग नष्ट हो रहे हैं और वेकारी और अर्द्धबेकारी बढ रही है। फलस्वरूप गावो की आवादी शहरो को जा रही है और देहात का सामाजिक और आर्थिक जीवन अस्त-व्यस्त हो रहा है। डॉ० शूमाकर ने शहरी क्षेत्रो और ग्रामीण अथवा 'बची-खुची' अर्थव्यवस्था के बीच चलनेवाले सतत सघर्ष के कारण भारतीय अर्थ-व्यवस्था मे "पारस्परिक विपदान की क्रिया" की ओर विशेष रूप से ध्यान खीचा है। गावो और शहरो के बीच वर्तमान विषमताओ और सघर्षो को कम करने का एक-मात्र प्रभावशाली तरीका यह है कि मध्यम, लघु और ग्राम तथा कुटीर उद्योगो के व्यापक विस्तार द्वारा देहातो मे नाना प्रकार के गैर-कृषि धधे पहुचाकर ग्राम-अर्थव्यवस्था मे विविधता लाई जाय। प्रोफेसर कोल के शब्दो मे, "गाधीजी का खादी-विकास-आदोलन एक कल्पनाशील व्यक्ति का स्वप्न नही है, जो भूतकाल को जीवित करना चाहता हो, बल्कि वह गरीबी का अत करने और भारतीय ग्रामीण के जीवन-मान को उन्नत करने का व्यावहारिक प्रयास है।" नेहरूजी ने भी इस बात पर जोर दिया था कि "अगर विशाल सख्या मे वेकार और अर्द्धबेकार लोगो को तात्कालिक सहायता पहुचानी है, यदि उस सड़ाध को रोकना है कि

जो सारे भारत मे फैल रही है और जन-समूह को पगु बना रही है, यदि ग्रामीणो के जीवन-मान को सामूहिक रूप से थोडा भी उन्नत करना है, और यदि यह सब-कुछ बिना विशेष पूजी के करना है तो ग्रामीण उद्योगो को अपनाना ही होगा।"

फलत, बहुत सारे गावो मे बिजली पहुचाकर ग्रामीण औद्योगीकरण की क्रिया मे सक्रिय मदद दी जा रही है। तीसरी योजना के अत तक ५००० और इससे ऊपर की आबादीवाले सब गावो को और २००० से ५००० तक की आबादीवाले ५० प्रतिशत गावो मे कृषि और ग्रामीण-उद्योग दोनो को पुष्ट करने के लिए बिजली दे दी जायगी। यह अक्सर अनुभव नही किया जाता कि किसी बेकार व्यक्ति को ग्रामीण वातावरण से हटाकर शहर मे बसाने मे जितना खर्च होता है, उससे कही कम उसे अपने ही गाव मे रोजगार देने मे खर्च होगा। जैसा कि वाल्टर लिपमैन ने कहा है, "हमे यह सादा और प्रकट सत्य स्वीकार करना चाहिए कि बडे शहरो मे एकत्र लोगो पर खुले देहात मे रहनेवाले लोगो के मुकाबले सार्वजनिक या सामाजिक मदो पर अधिक खर्च करना पडता है।" योजना आयोग मे किये गए कतिपय अनुमानो से प्रकट होता है कि एक आदमी को अपने ही गाव मे रोजगार देने की तुलना मे उसी व्यक्ति को शहर मे रोजगार देने मे पचास गुना अधिक रुपया खर्च होता है। नि सदेह, भारत जैसा गरीब देश ग्रामीण आबादी के शहरी प्रयाण की वर्तमान रफ्तार को निर्बाध जारी नही रहने दे सकता। आचार्य विनोबा के शब्दो मे हमारी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की सबसे दुखात घटना यह है कि "जब कृषि विफल होती है तो सारा ग्राम-जीवन विफल हो जाता है।" करोडो अधनगे और भूखे व्यक्तियो की इस दुखात घटना को सुखी जीवन मे बदलना होगा। अत ग्रामीण उद्योगो को प्रोत्साहन देने की नीति किसी सकुचित सिद्धातवाद पर नही, बल्कि व्यावहारिक विचारो पर आधारित है।

पिछले दिनो, अनेक हल्को मे सुझाव दिये गए है कि इन ग्रामीण-उद्योगो को जहा एक ओर सहकारी समितिया चला रही है, वहा दूसरी ओर पचायत समितियो और जिला परिषदो के स्वामित्व और प्रबध मे

भी उन्हे चलाया जाना चाहिए । उडीसा सरकार इन आधारो पर ठोस योजना बना चुकी है । इसका अर्थ ग्रामीण क्षेत्रो मे सार्वजनिक क्षेत्र का विस्तार करना होगा । मेरी राय मे यह प्रयोग करने योग्य है । अवश्य ही इसके लिए ऐसे स्थानीय उत्साही औद्योगिको को खोजना और प्रशिक्षित करना होगा, जिन्हे व्यापार और उद्योग के क्षेत्र मे सामुदायिक हित के लिए नियोजित किया जा सके । आवश्यक पथ-प्रदर्शन और देखभाल की जाय तो कोई कारण नही कि यह अच्छा प्रयोग सफल न हो ।

भूमि-सुधार कानून

देहाती क्षेत्रो मे आय और सपत्ति के अधिक न्यायोचित वितरण के लिए भूमि-सुधारो का श्रीगणेश एक मुख्य कार्यक्रम रहा है । जमीदारी, जागीरी और इनामदारी प्रथाओ की समाप्ति, जो खेती योग्य भूमि के ४० प्रतिशत भागपर फैली हुई थी, समाजवाद की दिशा मे हमारी प्रगति की महत्वपूर्ण मजिल थी । इन सुधारो के फलस्वरूप २ करोड से अधिक कृषि-जीवियो का सामाजिक और आर्थिक दर्जा उन्नत हुआ है । इसके अलावा, किसान अब सरकार को पहले की अपेक्षा कम लगान देते है । गत दस सालो मे जो काश्तकारी कानून स्वीकार किये गए है, उनके फलस्वरूप करीब-करीब सभी राज्यो और सघीय क्षेत्रो मे किसानो को भूमि पर खेती करने के अधिकार मिल चुके है । कुछ राज्यो मे किसानो को भूस्वामित्व का अधिकार भी मिला है । सब राज्यो मे भूस्वामित्व की अधिकतम सीमा लागू होने से किसानो मे खेती की जमीन अधिक बुद्धि-सगत और न्यायोचित तरीके से पुनर्विभाजित की जा सकेगी ।

यह सही है कि भूमि-सुधारो के मामलो मे अभी बहुत कुछ होना वाछनीय है । किसानो को भूमि-सुधार सबधी कानूनो से जो कानूनी अधिकार मिले है, उनकी रक्षा करना वास्तव मे बहुत कठिन काम रहा है । इसके अलावा भूमि-सुधारो का लोक-आदोलन के रूप मे विकास नही हुआ है, साधारणतया इसे एकातिक कार्यक्रम समझा गया है । भूमि-सुधारो के विधायक परिणाम लाने के लिए श्री तरलोकसिह के शब्दो मे यह आवश्यक है कि "हर क्षेत्र मे सघन कृषि अभियान चलाया

जाय, सामग्री, ऋण और अन्य सेवाए सुलभ की जाय और सहकारी प्रवृत्तियो के सगठन और ग्रामीण रोजगार कार्यक्रमो पर विशेष जोर दिया जाय। किंतु यह मानना होगा कि भूमि-सुधार कानूनो के अमल मे अनेक त्रुटियो के बावजूद उनके फलस्वरूप हमारे देहाती समाज के सामाजिक और आर्थिक ढाचे मे ठोस परिवर्तन हुए है। जैसा श्री डेनियल थार्नर ने कहा है, "भूमि सुधारो की सफलताए आशा से न्यून रही है। किंतु भारत की पुरानी कृषि-व्यवस्था समाप्त-प्राय हो रही है।"

सहकारी समाजवाद

समाजवाद और लोकतत्र की स्थापना के लिए वचनबद्ध आयोजित अर्थ-व्यवस्था मे सहकारी आदोलन अनिवार्यत आर्थिक जीवन की अधिकाश शाखाओ मे सगठन का मुख्य आधार होना चाहिए। इस आदोलन मे निजी पहल सामाजिक कल्याण और व्यापक प्रबध के लाभो का एक साथ समावेश है। सहकारिता छोटे आदमी को आर्थिक प्रवृत्तियो मे परस्पारिक सहायता द्वारा और जनसख्या के कमजोर अगो, शोपणकर्त्ता के बिचौलियो को हटाकर उच्चतर जीवन-मान हासिल करने मे समर्थ बनाती है। अभी तक भारत और अन्य एशियाई और अफ्रीकी देशो मे सहकारी आदोलन मोटेतौर पर कृषि-क्षेत्र तक सीमित रहा है और उसमे भी उसने मुख्यत ऋण जुटाने का ही काम किया है। हाल के वर्षो मे बिक्री और वितरण, उपभोक्ता सामग्री की उपलब्धि, पक्के माल के उद्योगो और छोटी सिचाई के क्षेत्र मे सहकारिता सिद्धात दाखिल करने पर विशेष जोर दिया गया है। भारत सरकार और योजना आयोग ने अनेक गैर कृषि-क्षेत्रो मे सहकारिता को दाखिल करने का निश्चय किया है। इन क्षेत्रो मे परिवहन, मकान और निर्माण, उद्योग, व्यापार और वाणिज्य शामिल है। उनमे तत्सबधी विस्तृत योजनाए तैयार करने के लिए अनेक कार्यकारी दल नियुक्त किये गए है। इस प्रकार तेजी से विकासोन्मुख सहकारी क्षेत्र छोटे किसान, नागरिक और उपभोक्ता की आवश्यकता पूरी करने पर

विशेष जोर देता हुआ विकासशील अर्थ-व्यवस्था में सामाजिक और आर्थिक न्याय दिलानेवाला महत्वपूर्ण माध्यम हो सकता है। तीसरी योजना देश मे राजकीय और निजी क्षेत्रो के साथ-साथ एक कार्यक्रम और शक्तिशाली सहकारी क्षेत्र कायम होने की कल्पना करती है। प्रोफेसर अम्लान दत्त ठीक ही कहते है, "मनुष्य की आत्मा के सकट का स्थायी हल 'सहकारी समाजवाद' मे ही मिल सकता है।"

किंतु यह याद रखना होगा कि सहकारी आदोलन देश के सामाजिक और आर्थिक ढाचे पर दृष्टव्य प्रभाव तभी डाल सकेगा जब वस्तुत ईमानदार, कार्यकुशल और सुप्रशिक्षित कार्यकर्त्ता बडी सख्या मे इस क्षेत्र मे सगठित रूप से काम करने के लिए आगे आये। ऐसे अनेक उदाहरण मिले है, जिनमे सपन्न व्यक्तियो ने कृषि, उद्योग और परिवहन मे सहकारी सस्थाओ का अपने खुद के व्यक्तिगत स्वार्थो के लिए दुरुपयोग किया है। ऐसे विवरण मिले है कि खुशहाल किसानो ने भूमि-सुधारो के प्रयोग से बचने और सरकार की वित्तीय सहायता का इस धधे मे लाभ उठाने के लिए सहकारी खेती की सस्थाए स्थापित की है। राज्य और समाज का यह कर्त्तव्य है कि वे ऐसी विभिन्न प्रकार की नकली सहकारी सस्थाओ को कडाई के साथ खत्म कर दे। सख्या सबधी विभिन्न लक्ष्यो को पूरा करने की जरूरत के साथ-साथ सहकारी सगठनो की श्रेष्ठता कायम रखने पर उतना ही जोर दिया जाना चाहिए, क्योकि प्रमाणित ईमानदारी वाले योग्य कार्यकर्त्ताओ के अभाव मे इस आदोलन के प्रशसनीय उद्देश्य हवा मे गायब हो जायगे।

भूदान और ग्रामदान

उल्लेखनीय है । हमारे भूमि-सुधारो के अपर्याप्त अमल के कारण विभिन्न राज्य सरकारे खेतीहरो या थोडी जमीनवाले किमानो को वची जमीन वडी मात्रा मे वितरित नही कर सकी है । इन प्रकार विनोवाजी ने अपने इस मूल्यवान रचनात्मक कार्य द्वारा वह मफलता हासिल की है जो राज्य सरकारे गत दो पचवर्षीय योजनाओ की अवधि मे कानून की मदद से हासिल नही कर सकी है ।

ग्रामदान आदोलन भूदान-यज्ञ मे काफी आगे जाता है । कारण, उसके अतर्गत गाव के सव नही तो ७५ प्रतिशत भूम्वामी अपनी जमीन ग्राम-समाज या ग्राम-सभा को सौंप देते हे । ग्राम-समाज उन्हे अपने जीवन-काल के लिए उनकी जरूरतो के अनुमार जमीन पीछी देता है। जरूरत परिवार के सदस्यो की सख्या को ध्यान मे रखकर तय की जाती है । जमीन का एक भाग सामूहिक खेती के लिए सुरक्षित रखा जा सकता है और उसमे गाव की कुछ प्रवृत्तियो के लिए पैसा जुटाया जा सकता है । ग्रामदान मे व्यक्तिगत किसानो के सभी स्वामित्व सवधी अधिकार समाज को सौंप दिये जाते है । इस अर्थ मे, यह आदोलन वस्तुत ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था मे अहिसक और समाजवादी आधार पर क्राति करने मे सफल हुआ है । प्रोफेसर डी० आर० गाडगिल ने लिखा है, "ग्रामदान अभूतपूर्व आदोलन ह और उसके अनेक और जटिल फलितार्थ है एव उसमे वहुत वडी सभावनाए छिपी है ।" श्री चेस्टर वोल्स के शव्दो मे, "चीनियो ने अपने तानाशाही सामूहिक खेती के जो प्रयोग किये है, और कठोर टेढा मार्ग अपनाया है, उसकी तुलना मे यह आकर्षक प्रयोग है ।"

आचार्य विनोबा भारत के देहातो की सभी सामाजिक-आर्थिक समस्याए भले ही हल न कर पाये हो, किंतु इस वारे मे तनिक भी सदेह नही हो सकता, जैसा कि श्री अशोक मेहता ने लिखा है, "विनोवा ने इन समस्याओ के हल के लिए एक नई दृष्टि, प्रेरणाप्रद तरीका और साधनो एव साध्य के वीच मौलिक एकसूत्रता प्रदान की है ।" अनेक अर्थो मे, ग्रामदान आदोलन गाधीजी के 'ट्रस्टीपन' के आदर्श का साकार व्यावहारिक रूप है । यह भारत की प्राचीन सस्कृति और पर-

पराओ के अनुसार समाजवादी और सहकारी समाज की स्थापना की दिशा मे महान और श्रेष्ठ प्रयोग है। श्री लुई फिशर ने ग्रामदान आदोलन को 'पूर्व का सबसे अधिक रचनात्मक विचार' कहा है। आचार्य विनोबा के शब्दो मे "ग्रामदान मे विज्ञान और अध्यात्म का सगम है और वह सामूहिक अहिसा की ओर ले जाता है।" किंतु ग्रामदान आदोलन के कुछ ऐसे पहलू है, जिन पर शुरू मे ही सावधानी के साथ विचार किया जाना चाहिए। अब तक करीब ६००० गाव ग्रामदान मे प्राप्त हुए हैं और उनकी सख्या उडीसा और असम मे अधिक है। अनेक राज्य-सरकारो ने इस आदोलन को मदद देने के लिए ग्रामदान कानून बनाये है और गाव-सभा को प्रशासन और वित्तीय सहायता के लिए एक कानूनी ईकाई स्वीकार किया है। फिर भी यह आदोलन ग्रामीण भारत के आर्थिक जीवन पर प्रभाव नही डाल पाया है। इसका मुख्य कारण यह है कि उस पर थोडे से चुने हुए जिलो मे सघन और आयोजित ढग मे प्रयोग नही किया गया। मालूम हुआ है कि अब सर्व-सेवा-सघ कुछ ग्रामदानी क्षेत्रो मे सघन ढग पर काम करेगा, ताकि ग्राम-पुनर्गठन के नये तत्र की दृश्य तस्वीर स्थायी आधार पर विकसित हो सके। ये कतिपय आदर्श ग्रामदानी गाव निश्चय ही अन्य क्षेत्रो को पुनर्गठन का ऐसा ही प्रयोग करने को प्रेरित करेगे। उस दशा मे यह आदोलन दूसरो को प्रभावित करेगा और देश के अनेक भागो मे फैलेगा। स्वतत्रता, समानता, स्वावलबन, सहकारिता और आध्यात्मिक मूल्यो पर आधारित अहिसक सामाजिक अर्थ-व्यवस्था का नया सदेश देगा। आखिरी निष्कर्ष श्री चेस्टर बोल्स के शब्दो मे यह है कि, "लोगो की शक्तियो को उन्मुक्त करने से ही गावो का विकास हो सकेगा।"

समाजवाद और विशुद्धतया व्यावहारिक विचारो पर आधारित सार्व-जनिक हित की अन्य योजनाओ मे अतर करता है।" जैसा कि प्रोफेसर जे० के० मेहता ने कहा है, "अर्थशास्त्रियो को भी 'अनेक मे एक की खोज' करनी पडती है।"

भारत मे समाजवाद विषयक इस आध्यात्मिक दृष्टिकोण का ही यह नतीजा है कि समाज मे अवसर की समानता और समतामूलक परिस्थितिया शातिमय और अहिसक तरीको से कायम करने की बात सोची जाती है, घृणा और वर्ग-सघर्ष पर आधारित हिंसक साधनो से नही। गाधीजी मानते थे कि केवल सत्य-प्रिय, अहिसक और शुद्ध-हृदयी-समाजवादी ही भारत मे और दुनिया मे समाजवादी समाज की स्थापना कर सकेगे। नेहरूजी ने बार-बार इस पर जोर दिया कि समाजवादी समाज की स्थापना करने के लिए सामाजिक और आर्थिक समस्याओं को शुद्ध साधनो से हल करने की कोशिश की जाय। उन्होने कहा है, "इन सघर्षो के अस्तित्त्व से इकार करना या उनकी उपेक्षा करना एक बेहूदा बात है, कितु हम उनके प्रति सघर्ष का नही, शाति का दृष्टिकोण अपनाकर उनके समाधान की कोशिश कर सकते है।"

न्यूनतम जीवन-मान

अवसर की समानता सुलभ करने के लिए हमे सभी नागरिको को जीवन की आवश्यकताए, यथा, खाना, कपडा, मकान, शिक्षा और चिकित्सा सुविधाए सुलभ करनी होगी। यह बिल्कुल जाहिर है कि समस्त जनता को ये बुनियादी आवश्यकताए राष्ट्र के सीमित साधनो को देखते हुए अमुक स्तर पर पूरी की जा सकती है। फिर अगर सभी स्त्री-पुरुषो के लिए एक न्यूनतम जीवन-मान मुहय्या न किया जा सकेगा तो भारत मे समाजवाद एक खोखला नारा मात्र रहेगा। योजना-आयोग के ताजा अध्ययनो से पता चलता है कि हमारी जनसख्या के करीब ६० प्रतिशत भाग की न्यूनतम आय का स्तर प्रति कुटुम्ब १०० रु० मासिक से कम है। द्वितीय श्रम-जाच-समिति की रिपोर्ट कतिपय अतुलनीय सामग्री के बावजूद यह प्रकट करती है कि भूमिहीन खेत-मजदूरो की

आर्थिक अवस्था मे दो पचवर्षीय योजनाओ की अवधि मे मुश्किल से ही कोई परिवर्तन हुआ है और इनकी देहाती आबादी मे काफी बडी सख्या है। डा० वी० के० आर० वी० राव ने भी पता लगाया है "कि बुनियादी अर्थ मे इस अवधि मे आर्थिक परिस्थितिया कमजोर हुई है" और इसका कारण यह है कि भूमि-सुधारो के फलस्वरूप ग्राम अर्थ-व्यवस्था मे सगठनात्मक परिवर्तन हुए है और उनके कारण वेदखलिया भी हुई है। शहरी क्षेत्रो मे गदी बस्तियो मे रहनेवालो, मेहतरो और सडको पर रहनेवालो की स्थिति काफी शोचनीय है और पचवर्षीय योजनाए उनके जीवन पर कोई ठोस प्रभाव नही डाल सकी है। सब नागरिको के लिए न्यूनतम जीवन-मान सुलभ करने की दृष्टि से देश की स्थिति कितनी गभीर है, यह इन तथ्यो से भली प्रकार स्पष्ट हो जाता है, और न्यूनतम जीवन-मान के बिना वे सादा कितु उत्तम जीवन नही बिता सकते।

समृद्धि का वितरण

सभी अविकसित अर्थ-व्यवस्थाओ मे आम जनता के जीवन-मान को ऊचा उठाने के लिए आर्थिक विकास की रफ्तार को तेज करने की कोशिशे की जा रही है। कितु आबादी के दुर्बल अगो के लिए विधायक और प्रत्यक्ष सहायता के कार्यक्रम के अभाव मे, केवल आर्थिक विकास की रफ्तार तेज करने मात्र से दरिद्रतम वर्गो के आर्थिक जीवन मे अनिवार्यत सुधार नही हो सकता। आचार्य विनोबा की यह निश्चित राय है कि 'समृद्धि प्रवाह' का यह सिद्धात स्थिति की जटिल आवश्यकताओ की पूर्ति नही कर सकेगा। देश के शीघ्रगामी विकास के कारण जो सपत्ति थोडे लोगो के हाथो मे इकट्ठी होती है, वह अनिवार्यत आम जनता तक नही पहुचती। प्रोफेसर जे० के० गालब्रेथ का कहना है कि उत्पादन वढने का अपने-आप यह परिणाम नही हो सकता कि उन लोगो को लाभ मिलेगा जो भवन की निचली से निचली सीढी पर है और जिन्हे चीजो की सबसे अधिक आवश्यकता है।" नेहरूजी ने लिखा है कि यूरोप मे औद्योगिक क्राति के बाद "अधिकाश सपत्ति ऊची श्रेणी के धनी लोगो के हाथो मे रही और उसका बहुत थोड़ा अश गरीब वर्गो तक पहुच

पाया और उनका जीवन-मान बहुत कम उन्नत हुआ।" यही बात अब भारत मे और एशियाई तथा अफ्रीकी देशो मे चरितार्थ हो रही है। इसलिए समाजवादी समाज-व्यवस्था के अदर भारत के लोगो को न्यूनतम जीवनमान सुलभ करने की बुनियादी समस्या पर कुछ क्रातिकारी विचार करने की आवश्यकता है।

काम का अधिकार

सभी लोग यह मानते है कि देश के नागरिको को खाना, कपडा, मकान, शिक्षा, स्वास्थ्य और सफाई विपयक न्यूनतम जीवन-मान तभी सुलभ किया जा सकता है, जब उन्हे लाभदायी रोजगार दे सकने योग्य आर्थिक परिस्थितिया पैदा की जायगी। भारत का सविधान हर व्यक्ति का 'आजीविका के पर्याप्त साधन' पाने का बुनियादी अधिकार स्वीकार करता है और कहता है कि स्त्री-पुरुप दोनो को समान काम के लिए समान वेतन मिलना चाहिए। अत समाजवादी लोकतत्र को अपने सब नागरिको को आत्म-सम्मान और प्रतिष्ठा के साथ उत्पादक काम के जरिये अपनी आजीविका कमाने के पर्याप्त अवसर देने चाहिए। गाधीजी ने कहा है, "भूखो मरनेवाले और बेकार लोगो के सामने काम और मजदूरी की शक्ल मे भोजन बनकर ही ईश्वर प्रकट हो सकता है।" प्रोफेसर गालब्रेथ की राय है कि "बेकारी के साथ अधिक उत्पादन की अपेक्षा पूरा रोजगार अधिक वाछनीय है।" प्रोफेसर हेरल्ड लास्की की दृढ मान्यता है कि आर्थिक समानता और स्वतत्रता व्यर्थ होगी, यदि आदमी को अपनी रोज की रोटी कमाने का अवसर सुलभ न हो। वह कहते है, "हर नागरिक को बेकारी और अभाव के सतत भय से मुक्ति मिलनी चाहिए। कारण, यह भय सभवत और किसी अभाव की अपेक्षा व्यक्तित्व की समस्त शक्ति को खा जाता है।"

यह कितना विचित्र है कि अमरीका जैसे अत्यधिक उद्योग-प्रधान और समृद्ध देश मे बडे पैमाने पर बेकारी विद्यमान है। मार्च १९६३ मे काग्रेस के नाम अपने सदेश मे तत्कालीन राष्ट्रपति केनेडी ने बेकारी को अमरीका की 'पहले नवम्बर की आर्थिक समस्या' बताया था। उन्होने

कहा था, "यद्यपि अमरीकी अर्थव्यवस्था अधिक कार्यक्षम हो रही है, तथापि वह वढती हुई श्रमशक्ति और आवादी के लिए रोजगार जुटाने मे कम सफल हो रही है। वेकारी की वर्तमान रफ्तार के हिसाब से ५५ लाख व्यक्ति अर्थात् उपलब्ध श्रमशक्ति का ७ प्रतिशत भाग रोजगार-विहीन हो जायगा।" जोन मोरगन कहते हैं, "दुनिया के इस सबसे धनी देश मे नये ४० हजार व्यक्ति प्रति सप्ताह अपनी 'वृत्ति' खो देते है और उन्हे दूध-चूर्ण, वनस्पति-मक्खन, पीत अन्न और आटे जैसी वची हुई वस्तुओ पर निर्वाह करना होता हे, लोगो की पक्तिया आहार पाने के लिए मुक्ति-सेना के गलियारो मे गुजरती रहती है।" प्रोफेसर मिर-डिल की नई पुस्तक 'प्रचुरता की चुनौती' मे प्रचुर समृद्धि के मध्य भीषण गरीबी की विचित्र अमरीकी उलझन पर विशद प्रकाश डाला गया है।

भारत मे, यह स्वीकार करना होगा कि जो लोग पारिश्रमिक के साथ रोजगार की माग करते है, उन सवको रोजगार देने की सभावना अभी नजर नही आ रही है। दूसरी योजना के अत मे वेकार लोगो की सख्या करीव ९० लाख थी। तीसरी योजना अवधि मे यह अनुमान किया जाता है कि मोटे तौर पर १ करोड ४० लाख व्यक्तियो को अतिरिक्त रोजगार सुलभ किया जायगा, हालाकि इस अवधि मे नयी श्रमशक्ति १ करोड ७० लाख होने का अनुमान है। अत तीसरी योजना मे एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम यह है कि वेकार जन-शक्ति के लिए, विशेपकर पिछडे क्षेत्रो मे ग्रामीण कार्य-केद्रो की बडी सख्या मे स्थापना की जाय। अगर सब ठीक-ठाक रहा तो हम देहाती कार्य-केद्रो की इन परियोजनाओ मे दस लाख अतिरिक्त आदमियो को खपा सकेगे। फिर भी ९० लाख वेकार व्यक्तियो की समस्या हमारे सामने मुह वाये खडी रहेगी। फलस्वरूप, विविध प्रकार की और वैज्ञानिक कृपि के साथ-साथ ग्राम-उद्योगो के सघन विकास की कतिपय परियोजनाए शुरू करने के कदम उठाये जा रहे है। वास्तव मे समस्या इतनी विशाल है कि दिमाग चकरा जाता है। किंतु रोजगार की माग करनेवाले सब लोगो के लिए काम सुलभ किये विना भारत मे अथवा अन्य किसी देश मे समाजवाद

घुन लगे अन्न के समान होगा। इस नाजुक समस्या को हल करने के लिए कुछ नये तरीके काम मे लाने होगे।

काम बनाम बेकार-वृत्ति

अधिकतर पश्चिमी देशो मे राज्य उन तमाम नागरिको को, जिनके नाम बेकारो की सूची मे दर्ज होते है, साप्ताहिक भत्ता या 'बेकार वृत्ति' देता है। किंतु इस बारे मे दो राये नही हो सकती कि लोगो को बेकारी-भत्ता देने के बजाय उत्पादक काम देना कही अधिक अच्छा है। बर्नार्ड शा के अनुसार, नरक की सर्वोत्तम व्याख्या है 'हमेशा की छुट्टी'। काम के अभाव के फलस्वरूप न केवल शारीरिक, बल्कि मानसिक शक्ति का भी क्षय होता है, वास्तव मे तो मनुष्य के सारे व्यक्तित्व का ही ह्रास होता है। इसके अलावा, भारत की यह दीर्घ सास्कृतिक परपरा रही है कि मनुष्यो को किसी-न-किसी प्रकार के शारीरिक श्रम से अपनी आजीविका कमाना चाहिए। गीता का यह उपदेश है कि जो बिना श्रम किये खाता है वह 'चोर' है। अपनी आजीविका कमाने के लिए मनुष्य जो शारीरिक श्रम करता है, उसे गाधीजी ने रोटी का श्रम कहा है। इसलिए तीसरी योजना शहरो और गावो दोनो मे तमाम नागरिको को लाभदायक रोजगार देने की आवश्यकता पर जोर देती है, भले ही यह रोजगार स्थानीय दरो पर दिया जाय, जो सामान्य सरकारी दरो से कुछ कम हो सकती हैं। आर्थिक दृष्टि से, विकासशील देश अपने बेकार नागरिको को किसी-न-किसी प्रकार का रचनात्मक श्रम करने का अवसर दिये बिना बेकार-वृत्ति मुश्किल से ही दे पायेंगे। बिना काम के उन्हे सहायता देना इन देशो के सीमित साधनो पर बोझ होगा और उनके श्रम से राष्ट्र को जो उत्पादन प्राप्त होगा, वह उनके पिछड़े देश को निश्चय ही ठोस लाभ सुलभ करेगा।

शैक्षणिक सुविधाएं

समाज मे आर्थिक समानता की स्थापना करने के लिए व्यापक शैक्षणिक सुविधाओ के द्वारा, खासकर तकनीकी और व्यावसायिक

शिक्षा द्वारा पर्याप्त रोजगार सुलभ किया जा सकता है। प्रोफेसर गुन्नार मिरडल कहते है "कि शिक्षा का आम स्तर उन्नत करके ही पूरे रोजगार के साथ वित्तीय और स्थिरता की समस्या पूर्णतया सतोषजनक रीति से हल की जा सकती है।" इस दृष्टि से तीसरी योजना ६ से ११ वर्ष की उम्र के तमाम बच्चो के लिए निश्शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान करती है, ११ से १४ वर्ष की उम्र के बच्चो के लिए शिक्षा का प्रबध चौथी और पाचवी योजनाओ मे किया जायगा। यह सोचा गया है कि तीसरी योजना के अत तक देश के तमाम प्राथमिक स्कूलो मे बुनियादी ढग की शिक्षा शुरू कर दी जाय, जिसमें उत्पादक धधे का प्रशिक्षण देने की कुछ-न-कुछ व्यवस्था भी हो। दुर्भाग्यवश, हमारी प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा की कल्पना पर अमल करने मे अधिक सफलता नही मिल सकी है। यह सोचना गलत होगा कि गाधीजी बच्चो को कतवैया और बुनकर बनाना तथा बौद्धिक ओर सास्कृतिक दृष्टि से अभावग्रस्त रखना चाहते थे। गाधीजी ने यह बिलकुल साफ कर दिया था कि वह शारीरिक, मानसिक और आत्मिक समस्त शिक्षा दस्तकारी के द्वारा देना चाहते है। गाधीजी ने कहा था कि बुद्धिपूर्वक किया गया शारीरिक श्रम "बौद्धिक विकास का सर्वश्रेष्ठ साधन है।"

विनोबाजी सामाजिक दृष्टि मे शिक्षा मे उत्पादक श्रम को बहुत कीमती मानते है। उनके कथनानुसार 'पठन और श्रम' को जुदा करने से सामाजिक अन्याय जन्म लेता है। 'कुछ लोगो को केवल पढने का काम करना होता है और दूसरे लोग केवल कठोर श्रम करते है और फलत. समाज दो टुकडो मे बट जाता है।' तीसरी योजना की सिफारिश है कि तमाम प्राथमिक और माध्यमिक स्कूलो मे सादी दस्तकारियो, प्रवृत्तियो और सामाजिक सेवा को पाठ्यक्रम मे दाखिल किया जाय। बुनियादी शिक्षा को स्थानीय समाज की विकास प्रवृत्तियो के साथ जोडने की हर कोशिश की जाय। स्कूल और समाज के मध्य यह घनिष्ठ सबध शिक्षा-सस्थाओ और विकास-कार्यो दोनो को समृद्ध करेगा। श्री थियोडर ब्रामेल्ड ने जोर देकर ठीक ही कहा है कि, "शिक्षा तभी रचनात्मक शक्ति बन सकती है जब वह संस्कृति की राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक

रचनात्मक शक्तियों के साथ जुड जाती है; हर छोटे-बडे समुदाय के विकासोन्मुख सघर्ष रत जीवन का अग बन जाती है।" विश्व-कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर की भी यह मान्यता थी कि "हमारी शिक्षा-सस्थाओं को समाज की केंद्र बिंदु होना चाहिए, उसके विविध धंधों के साथ उसका जीवित सपर्क और गठबंधन होना चाहिए।" नेहरूजी ने प्रधान-मत्री की हैसियत से इस ओर जोरों में ध्यान आकर्षित किया कि सब शिक्षा सस्थाओं को किसी-न-किसी प्रकार का उत्पादन काम हाथ मे लेना चाहिए, जिससे वर्तमान सकटकाल मे विद्यार्थियों के भीतर अनुशासन का वातावरण पैदा किया जा सके। उन्होंने कहा था, "बुनियादी शिक्षा अथवा उत्पादक काम से जुडी हुई शिक्षा अत्यत महत्वपूर्ण है। वह युद्ध, अनुशासन और प्रशिक्षण तीनों दृष्टियों से महत्वपूर्ण है।"

तकनीकी शिक्षा

वैज्ञानिक और तकनीकी शिक्षा के विस्तार की योजनाओं पर भी अमल किया जा रहा है। इन कार्यक्रमों को वर्तमान स्थिति मे सुरक्षा-जरूरतों को पूरा करने की दृष्टि से और पुष्ट किया गया है। तीसरी योजना के अत मे इजीनियरी और तकनीक शास्त्र के स्नातकीय पाठ्यक्रमों के लिए प्रविष्ट होनेवाले छात्रों की वार्षिक सख्या १३,८०० से बढकर १९,००० और डिप्लोमा पाठ्यक्रमों के लिए २,५००० से ३७,००० से अधिक हो जायगी। देश की औद्योगिक प्रशिक्षण देनेवाली सस्थाओं मे प्रवेश सख्या तीसरी योजना के दौरान ४२,००० से एक लाख हो जायगी। गरीब किंतु सुपात्र छात्रों को तकनीकी शिक्षा की इन बढी हुई सुविधाओं का लाभ पहुचाने की दृष्टि से, भारत सरकार ने काफी बडी सख्या मे छात्र-वृत्तियों का प्रबंध किया है। दूसरी योजना के अत मे अनुमान किया जाता है कि इजीनियरी और तकनीक शास्त्र के डिप्लोमा और स्नातकीय छात्रों को ६००० छात्रवृत्तिया दी जा रही थी। तीसरी योजना के अत मे उनकी सख्या ३२,००० से अधिक हो जाने की सभावना है। दस्तकारों की औद्योगिक प्रशिक्षण सस्थाओं मे, सन् १९६०-६१ मे छात्रवृत्तियों की सख्या १४ हजार थी। सन् ६५-६६

मे यह सख्या ३६,००० तक पहुचने की आशा है। जहातक कला, विज्ञान, वाणिज्य की विश्वविद्यालयी शिक्षा का सबध है, दूसरी योजना के अत मे छात्रवृत्तियो पर ६ करोड रुपया खर्च करने का अनुमान था और १,५०,००० छात्रो को छात्र-वृत्तिया मिल रही थी। तीसरी योजना के अंत तक छात्रवृत्तियो पर १३ करोड रुपया खर्च हो चुका होगा और २,००,००० विद्यार्थियो को मदद मिल रही होगी। पूर्व विश्वविद्यालयी स्तर पर सन् ६५-६६ मे १४ करोड रुपया छात्रवृत्तियो पर खर्च होगा और उनसे लाभ उठानेवाले छात्रो की सख्या १३ लाख हो जायगी। वर्तमान अनुमान के अनुसार तीसरी योजना की अवधि मे विभिन्न शिक्षा-स्तरो की विभिन्न और नई योजनाओ के अतर्गत छात्रवृत्तियो पर करीब १ अरब ४० करोड रुपया खर्च किया जायगा।

भारत सरकार ने सुपात्र छात्रो को छात्रवृत्तियो के अलावा ऋण देने की योजना भी मजूर की है। इस काम के लिए ६ करोड रुपये की राशि रखी गई है। ये ऋण छात्रो को उपयुक्त रोजगार मिलने के बाद अनेक किश्तो मे अदा करने होगे। नवयुवको को शिक्षा व्यवसाय अपनाने के लिए प्रोत्साहन देने की दृष्टि से, यह तय किया गया है कि जो छात्र दस वर्ष शिक्षक के रूप मे राष्ट्र की सेवा कर चुकेगे, उनसे सरकार प्रदत्त ऋण वसूल नही करेगी।

स्वास्थ्य-कार्यक्रम

तीसरी योजना मे समस्त जनता के लिए स्वास्थ्य सुविधाओ का विकास करने के लिए अनेक कार्यक्रम शामिल किये गए है। ग्रामीण क्षेत्रो मे प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रो की सख्या बढाई जा रही है, ताकि सब गावो को बुनियादी चिकित्सा-सुविधाए मिल सके। यह जानकर सतोष होता है कि गत दशाब्दि मे जीवन-आयु का औसत ३२ वर्ष से बढकर ४७ वर्ष हो गया है।

मलेरिया और चेचक जैसे छूत के रोगो को समाप्त करने के कार्य-क्रमो के कारण मृत्यु-दर काफी कम हो गई है। अस्पतालो और दवा-खानो तथा अस्पतालो मे रोगी-शैयाओ की सख्या गत दस वर्षो मे

क्रमश १३,००० से और १,८६,००० हो गई है और इस सख्या मे विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रो मे और भी वृद्धि करने की कोशिशें की जा रही है। तीसरी योजना मे स्वास्थ्य-शिक्षा विशेषज्ञ तैयार करने का प्राविधान है, ताकि देशव्यापी आधार पर स्कूलो और वयस्क केंद्रो मे स्वास्थ्य कार्यक्रम शुरू किये जा सके। स्वास्थ्य योजनाओ मे चिकित्सा की वजाय रोगो की रोक-थाम पर विशेष जोर दिया जा रहा है।

देहाती क्षेत्रो मे वुनियादी सुविधाए, खासकर स्वास्थ्यकर पीने के पानी और सपर्क-सडको की सुविधाए करोडो लोगो के लिए सुलभ की जा रही ह। इन कार्यक्रमो के लिए अर्थ-व्यवस्था अव भी नाकाफी हे किंतु देहातो मे ये सुविधाए यथासभव शीघ्र सुलभ करने के लिए हर सभव उपाय किया जायगा।

परिवार-नियोजन

विकासोन्मुख देशो की आर्थिक प्रगति मे इस समय ऊची जन्म दर के कारण वाधा पड रही है। सतत वढती जानेवाली आवादी के लिए जीवन की सुविधाए उपलब्ध कराना गुरुत्तर काम हो जाता हे। जिन देशो मे जन-सख्या वृद्धि की दर ऊची होगी, स्वभावत उनमे प्रति व्यक्ति कीऔसत आय मे स्वल्प सुधार होगा। श्रीसोसेफ मेरियन के शब्दोमे इसका कारण यह है कि "राष्ट्रीय आय मे होनेवाली वार्षिक वृद्धि का वडा भाग जन-सख्या की वार्षिक वृद्धि पर खर्च हो जायगा।" अमरीका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैड और रूस जैसे देशो मे भी दूसरे महायुद्ध के बाद से जन- सख्या की वृद्धि की दरे काफी ऊची रही है हालाकि उतनी ऊची नही जितनी कि अल्पविकसित देशो मे है कि जहा परिवार-नियोजन के व्यापक व्यवहार और तत्सवधी सुविधाओ के वावजूद ऐसा हुआ है।

हमारे अपने देश मे, जन-सख्या वृद्धि की दर सतत वढ रही है। दूसरी योजना के शुरू मे वह १ २५ प्रतिशत अनुमान की गई थी और तीसरी योजना के शुरू मे वह लगभग २ प्रतिशत थी। वर्तमान सकेतो के अनुसार भारत की जन-सख्या सन् १९६६ मे ४९ करोड २० लाख, न् १९७१ मे ५५ करोड ५० लाख और सन् १९७६ मे ६२ करोड

५० लाख हो जायगी। इसलिए 'जन-सख्या के इस विस्फोट' पर तुरत ध्यान दिया जाना चाहिए।

सौभाग्य से परिवार-नियोजन के कार्यक्रम शहरो और गावो दोनो जगह काफी लोकप्रिय हुए है। कुछ भी हो, भारत की जनता परिवार-नियोजन या सतति-निरोध के विचार का मुश्किल से ही विरोध करती है। परिवार-नियोजन के कार्यक्रम को भारत-सरकार और योजना-आयोग ने उच्च प्राथमिकता दी है और हाल मे परिवार-नियोजन पर तीसरी योजना के प्रावधान को १५ करोड रुपये से बढाकर ५० करोड कर दिया गया है। तीसरी योजना की अनुमानित परियोजनाओ के अनुसार परिवार-नियोजन-केंद्रो की सख्या दूसरी योजना के अत के समय १,८०० से बढकर करीब ८,२०० हो जायगी। इसमे से करीब ६,१०० केंद्र ग्रामीण क्षेत्रो मे और २,१०० शहरी क्षेत्रो मे होगे। शहरो के सबध मे यह प्रस्ताव है कि परिवार-नियोजन की सलाह देने, सामग्री का वितरण करने और यथासभव वध्यकरण के कामो मे निजी डाक्टरो की सेवाओ का लाभ उठाया जाय।

किंतु यह जरूरी है कि परिवार-नियोजन के कार्यक्रमो को समग्र विकास की नीति के साथ जोड दिया जाय। दूसरे शब्दो मे, श्री पियरे मूने के कथनानुसार "सतति-नियमन और आर्थिक विकास साथ-साथ चलना चाहिए।" यह सुविदित सामाजिक सकेत है कि गरीब वर्गो मे जन्म-सख्या की दर सामान्यतः ऊची है और जीवन-मान ऊचा होने के साथ उसमे कमी होने लगती है।

अन्तत., शिक्षण-कार्यक्रम के विस्तार पर समस्त परिवार-नियोजन-आदोलन की सफलता निर्भर करती है। इसके अलावा, जैसा कि तीसरी योजना मे इस बात पर जोर दिया गया है, "नैतिक और मनोवैज्ञानिक तत्वो, सयम और ऐसी सामाजिक नीतियो पर सबसे अधिक बल दिया जाय, जिनमे स्त्रियो की शिक्षा, उनके लिए रोजगार के नये अवसर और विवाह की आयु बढाने आदि की बाते शामिल है।"

सामाजिक सुरक्षा

समाजवादी समाज मे सब नागरिको के लिए जीवन की बुनियादी जरूरते सुलभ करने के जो विविध उपाय किये गए है, उनके बावजूद राज्य को अल्प सुविधाभोगी वर्गो के लिए कुछ सामाजिक सुरक्षा-योजनाओ का श्रीगणेश करना चाहिए। अमरीका, ब्रिटेन, रूस और जर्मनी जैसे विकसित देशो मे ये कार्यक्रम काफी विकसित हो चुके है। भारत मे औद्योगिक श्रमिको और सरकारी कर्मचारियो के लिए कुछ सामाजिक सुरक्षा के उपाय शुरू किये गए है और निराश्रितो, अनाथो और शारीरिक दृष्टि से अपगो को थोडी सहायता दी जाने लगी है। चौथी और अगली पचवर्षीय योजनाओ मे इन उपायो का काफी बडे पैमाने पर विस्तार करना होगा।

नशाबदी का अर्थ-शास्त्र

इस विषय मे यह उल्लेख करना उचित होगा कि भारत मे नशाबदी-कार्यक्रम मुख्यत जन-सख्या के दरिद्रतम वर्गो की आर्थिक अवस्था सुधारने की दृष्टि से शुरू किये गए है। गाधीजी का नशाबदी का आग्रह एक महात्मा का 'नैतिक जब्त' नही था। वह हरिजनो, आदिवासियो, मजदूरो और मछुओ की गभीर हित-चिंता से प्रेरित था, जो नशाबदी के अभाव मे अपनी अल्प आय का काफी भाग शराब पीने पर खर्च कर देते है। यह अनुमान किया गया है कि आबकारी-कर से राज्यकोष को मिलने-वाले हर रुपये पीछे नशाखोर मद्यसेवन पर करीब ३ रुपया खर्च करता है। इस समय देश के उन सभी राज्यो की, जहा शराब पीने की पूरी या अधूरी छूट है, आबकारी-कर मे वार्षिक आय करीब ५० करोड रुपया होगी। इसका यह अर्थ हुआ कि लोगो, विशेषकर गरीब लोगो को प्रति-वर्ष अपनी गाढी कमाई मे से करीब १५० करोड रुपया बर्बाद करने का प्रोत्साहन दिया जाता है। शराबखोरी की यह बुराई गरीब लोगो की जेबो से यह विशाल राशि ही नही चुराती, बल्कि उनके शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य का काफी ह्रास करती है।

इसलिए मै विकासशील अर्थ-व्यवस्था के छिद्रो को बद करने के

इसके अलावा महगाई हमेशा अत्यत विषमतापूर्ण होती है। वह दरिद्रतम और निर्बलतम वर्गो पर सबसे अधिक खराब असर डालती है। इसलिए, समाजवादी समाज मे अत्यत महत्वपूर्ण है कि नागरिको को जीवन की आवश्यकताए ऐसी कीमतो पर सुलभ की जाय जो लोगो की सामर्थ्य के भीतर हो। भारत-सरकार ने कीमतो के वारे मे विशेष समिति नियुक्त की है जो आवश्यक वस्तुओ की कीमतो के प्रवाह पर निश्चय ही निगाह रखेगी और सरकार को समय-समय पर उन आवश्यक वस्तुओ की कीमतो पर समुचित नियत्रण और नियमन रखने की दृष्टि से आवश्यक कदम उठाने के वारे मे सलाह देगी।

अत्योदय की दृष्टि

यदि न्यूनतम आय-समूहो के जीवन-मान को न्यूनतम आर्थिक स्तर तक तात्कालिक रूप से ऊचा नही उठाया जायगा तो दर्जे और अवसर की समानता भ्रामक होगी। इसलिए गाधीजी समाज के निम्नतम वर्ग की जरूरतो पर विशेष ध्यान देते थे। भारत जैसे अल्प-विकसित देश मे समाजवादी विचारधारा की यही अत्योदयी दृष्टि होनी चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रो मे, तीसरी योजना विभिन्न परियोजनाओ द्वारा भूमिहीन खेतीहर श्रमिको की आर्थिक दशा सुधारने पर जोर देती है। यह अनुमान किया जाता है कि सन् १९६५-६६ तक कृषि श्रमिको के करीव ७,००,००० परिवार करीव ५० लाख एकड भूमि पर वसा दिये जायगे। भूमिहीन लोगो को देहातो के भीतर सहकारिता के आधार पर लघु, ग्राम और कुटीर उद्योगो मे लगाने की हर सभव कोशिश की जायगी। पूरक ग्राम्य-उद्योग-कार्यक्रम दुर्वल वर्गो को वर्ष के अधिकतर दिनो मे लाभदायी रोजगार प्राप्त करने मे मदद देगे। राज्य सरकारो को कहा गया है कि वे कृषि श्रमिको के लिए गाव के निकट मकान बनाने की जमीन प्राप्त करे। इन लोगो को अपने परिवारो के लिए सादे मकान बनाने के लिए ऋण दिये जायगे।

ढेबर-आयोग की सिफारिशो के फलस्वरूप, भारत-सरकार ने अव फैसला किया है कि विभिन्न राज्यो के अधिकाश आदिवासी-क्षेत्रो मे

तीसरी योजना की अवधि मे 'समन्वित विकास खड' कायम कर दिये जाय। तकनीकी और सामान्य शिक्षा के क्षेत्र मे परिगणित और आदिम-जातियो के बच्चो को बडी सख्या मे छात्रवृत्तिया दी जारही है। अनुमान है कि इन दुर्बल और पिछडे वर्गो को इस समय करीब ६१,००० छात्र-वृत्तिया दी जा रही है।

शहरी क्षेत्रो मे गदी बस्तियो की सफाई और सुधार पर बहुत ध्यान दिया जा रहा है, हालाकि इस कार्यक्रम के लिए वर्तमान प्रावधान काफी नही समझा जा सकता। तीसरी योजना मे मेहतर-वर्ग की काम की परिस्थितियो मे दृश्य सुधार लाने के लक्ष्य को उच्च प्राथ-मिकता दी गई है। इस वर्ग की भलाई की देखभाल करने के लिए सर-कार ने एक केद्रीय समिति नियुक्त की है। यह वर्ग सामाजिक स्तभ की निम्नतम चट्टान है।

जिस समाजवादी लोकतत्र मे अल्प सुविधाभोगी वर्गो को आर्थिक प्रगति का उचित भाग प्राप्त नही होता, वह न्यायोचित और समतामूलक होने का दावा नही कर सकता। अनेक वर्षो पहले गाधीजी ने हमे एक मत्र दिया था, जो मेरी राय में सभी समाजवादियो का ध्रुवतारा होना चाहिए। वह इस प्रकार है "जब कभी तुम्हे शका हो अथवा तुम पर अहम हावी हो रहा है तो यह कसौटी लागू करो सबसे गरीब और दुर्बल मनुष्य के मुख का स्मरण करो, जिसे तुमने कभी देखा हो और अपने से पूछो कि जो कदम तुम उठाने जा रहे हो, वह उसके लिए कुछ लाभदायक होगा अथवा नही।"

शहरी आय की सीमा

भारत मे भूमि-सुधारो के सूत्रपात से, जिसमे भूस्वामित्व की अधिक-तम सीमा निर्धारित करने की योजना भी शामिल है, देहातो मे पहले से अधिक आर्थिक समता आई है, हालाकि तत्सबधी कानूनो के अमल मे बहुत कुछ सुधार की गुजाइश है। किंतु यह स्वीकार करना होगा कि शहरी क्षेत्र मे लोगो की आर्थिक विषमताओ को कम करने के लिए अभी काफी कदम नही उठाये गए है। यह समझ मे आता है कि

शहरो मे आय, सपत्ति और जायदाद की सीमा भूमि के समान कठोरता और यात्रिकता से निर्धारित नही की जा सकती। फिर भी शहरी भूमि और मकानो की जायदादो से होनेवाली अनार्जित आय का पर्याप्त भाग हस्तगत करने की काफी गुजाइश है और इस प्रकार समाज के विनियोजन साधनो को बढाया जा सकता है। यह सोचा गया है कि अगली दो या तीन योजनाओ की अवधि मे शहरी और ग्रामीण दोनो क्षेत्रो मे टैक्स काटने के बाद आय की सीमा औसत पारिवारिक आय की तुलना मे तीस गुना से अधिक नही होनी चाहिए। यदि सभव हुआ तो अपने देश के अधिकतर लोगो की अल्प आय को देखते हुए इस आय की खाई को और भी पाटने का केंद्रित प्रयास किया जायगा।

शहरो मे वर्तमान आर्थिक विषमताओ का मुख्य कारण यह है कि धनी-वर्ग टैक्सो से बचते है या उनकी चोरी करते है। हमारे कर-कानूनो के इन छिद्रो को अविलब प्रभावशाली ढग मे बद करना होगा। मकान-मालिक भी मनमाने ऊचे किराये लेकर मध्यम और निम्न मध्यम वर्गो का अनुचित शोषण करते है। नये बने मकानो के मालिको को प्रथम पाच वर्ष मनमाना किराया लेने की जो रियायत दी गई है, उसका अधिकतर शहरो मे दुरुपयोग हुआ है और इस पर फिर से विचार करना होगा। पचवर्षीय योजनाओ के अतर्गत बडे परिमाण मे इमारतो और परियोजनाओ के निर्माण के फलस्वरूप भारत मे एक नये सपन्न वर्ग का उदय हुआ है। इन ठेकेदारो की शोषक वृत्तियो पर अकुश लगाना होगा, ताकि देश के भीतर आर्थिक विषमताओ को कम किया जा सके।

सतुलित क्षेत्रीय विकास

समाजवादी अर्थतत्र को अपने समस्त नागरिको को केवल समान अवसर देने की ही कोशिश नही करनी चाहिए, बल्किउनके समग्र विकास के लिए विभिन्न क्षेत्रो और राज्यो को आवश्यक सुविधाए भी उपलब्ध करनी चाहिए। यह उल्लेखनीय है कि तीसरी योजना का एक पूरा अध्याय

'सतुलित क्षेत्रीय विकास' के सबध मे है, ताकि देश अल्पविकसित क्षेत्रो मे कृषि और सामाजिक सेवाओ के साथ-साथ उद्योगो के व्यापक विस्तार की ओर विशेष ध्यान दे सके। तीसरी योजना बनाते समय योजना आयोग ने केद्रीय सहायता की मात्रा निर्धारित करने मे पिछडे क्षेत्रो की विशेष आवश्यकताओ को ध्यान मे रखने की बडी सावधानी रखी है। उपलब्ध आकडो से स्पष्ट पता चलता है कि जो राज्य आर्थिक-विकास के विभिन्न क्षेत्रो मे अभी भी पिछडे हुए है, उन्हे उन राज्यो के मुकाबले, जिनकी अर्थ-व्यवस्था उल्लेखनीय प्रगति कर चुकी है, केद्रीय सहायता का अधिक प्रतिशत प्राप्त हुआ है।

विभिन्न क्षेत्रो मे पहली, दूसरी और तीसरी योजनाओ के आधीन प्रति व्यक्ति राज्य की राशि, राज्य के साधन और केद्रीय सहायता का विवरण निम्न तालिका मे दिया गया है

क्षेत्र

	उत्तरी	मध्य	पूर्वी	पश्चिमी	दक्षिणी
राज्य की राशि					
पहली योजना	६७	२९	४२	४७	३५
दूसरी योजना	६९	३८	४६	६८	५७
तीसरी योजना	१२३	७५	७८	१०४	९२
राज्य के साधन					
पहली योजना	९	१२	१२	३०	१७
दूसरी योजना	२७	१६	२१	४५	२८
तीसरी योजना	४२	२३	२४	५७	३४
केद्रीय सहायता					
पहली योजना	५८	१७	३०	१७	१८
दूसरी योजना	४२	२२	२५	२३	२९
तीसरी याजना	८०	५२	५४	४७	५८

नोटः—राज्य पुनर्गठन कानून १९५६ द्वारा निर्धारित क्षेत्रों के अनुसार राज्यों को पाच क्षेत्रो मे विभक्त किया गया है, केवल दक्षिणी क्षेत्र में आध्र, मद्रास, मैसूर और केरल ये चार राज्य और पश्चिमी क्षेत्र मे महाराष्ट्र और गुजरात दो राज्य रखे गए है।

योजना आयोग क्षेत्रो और राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के विकास को एक समग्र क्रिया का ही हिस्सा मानता है। तीसरी योजना कहती है "राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था की प्रगति विभिन्न क्षेत्रो के विकास की दर मे प्रकट होगी और उसी अनुपात मे क्षेत्रीय साधनो का अधिकाधिक विकास समग्र देश की प्रगति की रफ्तार को तेज करने मे योग देगा।" इस वात का ध्यान रखना होगा कि विशिष्ट क्षेत्रो की जरूरतो का समग्र राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था की जरूरतो के साथ मेल विठाये विना उनकी समस्याओ पर अत्यधिक जोर देना और उनके विकास की योजना वनाने की कोशिश करना उचित नही होगा, कारण, देश की मूलभूत ईकाइयो के रूप मे ही विभिन्न क्षेत्र अपना पूरा सभावित विकास होने की आशा कर सकते है। इस प्रकार राष्ट्रीय और क्षेत्रीय विकास घनिष्ठ रूप से एक दूसरे के साथ जुडे है और उन पर समग्र दृष्टि से ही विचार किया जाना चाहिए।

श्री वाल्टर इसार्ड कहते है, "जहा पर्याप्त क्षेत्रीय आर्थिक विकास की योजनाओ और कार्यक्रमो का अभाव है, वहा राष्ट्रीय आर्थिक विकास के कार्यक्रमो की सफलता की सभावना कम हो जाती है और राष्ट्रीय विनियोजनो से समग्र लाभ घट जाता है। इस प्रकार राष्ट्र की हानि होती है और चूकि हर क्षेत्र राष्ट्र का अग होता है, अत साधारण तौर पर क्षेत्र की भी हानि होती है।"

जो भी हो, भारत मे समाजवादी आयोजन का उद्देश्य यह है कि उचित अवधि के भीतर देश के सभी राज्यो और क्षेत्रो को वह जीवन-मान उपलब्ध हो जाय जो सारे देश के जीवन-मान से अधिक भिन्न न हो। इसलिए तीसरी योजना मे हर राज्य की जरूरतो और समस्याओ पर गहराई से विचार करने के वाद ही व्यय की धन-राशिया निर्धारित की गई है। ऐसा करने मे पिछली प्रगति और विकास मे रही कमियो, प्रमुख राष्ट्रीय लक्ष्यो की सिद्धि मे सभावित योगदान, विकास-सामर्थ्य, और अपनी विकास योजना मे राज्य के साधन-योग का भी लिहाज रखा गया है। योजना परिवहन और सचार, शिक्षा, स्वास्थ्य और अन्य सामाजिक सेवाओ के लिए देश के सभी भागो के लिए प्राव-

धान करती है ताकि वे सब यथासभव समान स्तर पर आ सकें। गत दशाब्दि मे विभिन्न राज्यो के विकास-स्तर का और तीसरी योजना के अत में क्या विकास-स्तर रहेगा, इसका विवरण परिशिष्ट (५) में दिया गया है।

उद्योगों का स्थान

जहा तक बडे और भारी उद्योगो का सबध है, आर्थिक और तकनीकी दृष्टि हमेशा महत्वपूर्ण रहती है और व्यवहार मे छुट-पुट अतर ही सभव हो सकता है। इसलिए राजकीय क्षेत्र परियोजनाओ के स्थानो का चुनाव करने मे आवश्यक तकनीकी और आर्थिक कसौटियो को न छोडते हुए जहा कही सभव हुआ है, अपेक्षाकृत पिछडे क्षेत्रो के दावो को ध्यान मे रखा गया है। इस्पात जैसी महत्वपूर्ण परियोजनाओ के स्थानो का चुनाव विशेपज्ञो के अध्ययन और आर्थिक सभावनाओ के आधार पर किया गया है। किंतु उनकी स्थापना औद्योगिक दृष्टि से पिछडे क्षेत्रो मे हुई है, इसलिए उन्हे अवश्य लाभ पहुचेगा। केंद्रीय परियोजनाओ की सपूर्ण सूची उनके स्थानो के साथ परिशिष्ट (६) मे दी गई है।

बुनियादी और महत्व के उद्योगो के लिए स्थान चुनने में कच्चे माल की निकट से उपलब्धि और अन्य आर्थिक कारणो को स्वभावत. ध्यान मे रखा गया है, किंतु विविध प्रकार के उपभोक्ता-सामग्री-उद्योगो और रूपातरीय उद्योगों के मामले मे क्षेत्रीय विकास को प्रोत्साहन दिया गया है। निजी क्षेत्र मे औद्योगिक परियोजनाओं के स्थानो के बारे मे भी अल्पविकसित क्षेत्रो के दावो को उचित महत्व दिया गया है। जो क्षेत्र औद्योगिक दृष्टि से पिछडे हुए हैं, उन्हे बिजली, पानी परिवहन जैसी सुविधाए देने का प्रयास किया जा रहा है। तीसरी योजना में उन पिछडे क्षेत्रो मे 'औद्योगिक विस्तार क्षेत्र' कायम करने का प्रस्ताव है, जिनमे बुनियादी सुविधाए दी जा सकती हो और कारखानो के स्थान विकसित करके लघु और मध्यम व्यवसायियो को बेचे या लम्बे पट्टे पर दिये जा सके। पचवर्षीय योजना हर बडी परियोजना को, चाहे वह उद्योग,

सिंचाई अथवा विद्युत सबधी हो, सघन और समन्वित क्षेत्रीय विकास का केंद्र बिंदु मानती है ।

पंचायती-राज

भारत सरकार और राज्य सरकारो ने विविध प्रकार की प्रगति तथा विकास के लिए भारतीय जनता को और भी अवसर देने की दृष्टि से एक उल्लेखनीय कदम उठाया है । लोकतत्री विकेंद्रीयकरण अथवा पचायती राज की स्थापना ही वह कदम है । यह प्रयोग एक अत्यत क्रातिकारी कदम हे, जो नीव के स्तर पर व्यापक समाजवाद की स्थापना की दृष्टि से उठाया गया है ।

किंतु यह याद रखना होगा कि इस प्रयोग की सफलता प्रोफेसर शुम्पीटर के शब्दो मे 'लोकतत्री स्व-अनुशासन' पर मुख्यत निर्भर करेगी । इसमे बुनियादी रूप से सहिष्णुता और अधिकारो के साथ कर्त्तव्यो पर आग्रह शामिल है । युगोस्लाविया के प्रेसिडेट टीटो ने 'श्रमिक कौसिलो को सत्ता सौपने की साहसिक योजनाओ का श्रीगणेश किया है । किंतु लदन के 'इकोनोमिस्ट' पत्र के अनुसार हाल की घटनाओ ने सिद्ध किया कि अनेक फैक्ट्री प्रबधको और स्थानीय अधिकारियो ने उस उच्च भावना से प्रेरित होकर काम नही किया, जिसकी उनसे आशा की जाती थी । आखिरी बात यह है कि समाजवादी लोकतन्त्र तभी सफलतापूर्वक चल सकेगा, जब बहुसख्यक नागरिको मे गुणो की दृष्टि से ठोस सुधार हो ।

आचार्य विनोबा ने पचायती-राज की स्थापना को सही दिशा मे उठाया गया कदम माना है, किंतु उन्होने एक चेतावनी भी दी है । उनकी यह निश्चित राय है कि ग्राम समाजो को व्यापक आर्थिक और राजनीतिक अधिकार देने के पूर्व भारतीय गावो मे पहले से अधिक सामाजिक और आर्थिक समानता स्थापित होनी चाहिए । सघन खेती के साथ भूमि का अधिक न्यायोचित वितरण और ग्राम-उद्योगो का विकास करके यह लक्ष्य हासिल किया जा सकता है । आर्थिक शक्ति के समुचित वितरण के बिना राजनीतिक शक्ति के विकेंद्रीयकरण से 'विकेंद्रित शोषण' की परिस्थितिया उत्पन्न हो सकती है । अब तक के

अनुमान से भी पता चला है कि अनेक स्थानो में पचायतो पर धनी किसानो अथवा कतिपय समाज विरोधी तत्त्वो या गाव के 'गुडो' ने कब्जा कर लिया है । समय के दौरान, लोगो मे यह शक्ति पैदा हो जायगी कि पचायतो से निहित स्वार्थो को निकाल बाहर फेकेगे और ज्यादा अच्छे सेवा-भावी व्यक्ति इन सस्थाओ को चलाने के लिए आगे आ सकेगे । फिर भी कृषि और उद्योग के दोनो क्षेत्रो मे आर्थिक शक्ति के वितरण से हमारे गावो मे ठोस आधार पर लोकतत्री समाजवाद की स्थापना करने मे वड़ी मदद मिलेगी ।

'पंच परमेश्वर'

यह वाछनीय है कि ग्राम-पचायतो का सचालन सर्व सम्मति से या करीव-करीव सर्व सम्मति से हो, ताकि ग्राम-समाज की आम सहमति और सद्भावना से विविध काम किये जा सके । वहुमत का शासन लोकतत्र का मुख्य सिद्धात है, किंतु यह लोकतत्र धीरे-धीरे 'भीडतत्र' मे वदल जाता है और अपनी मौलिक विशेपता खो देता है । आखिर, श्री एस० आई० वेन के शब्दो मे वहुमत का सिद्धात केवल सख्या की शक्ति का राज वन जाता है और १०० मे से ५१ के वाद शेष ४९ के लिए कोई मौलिक नैतिक सत्ता नही वच रहती । इसलिए यह सुझाया गया है कि भारत की विभिन्न राजनीतिक पार्टिया आपस मे यह 'सज्जनोचित समझौता' करे कि वे पचायती-राज की विभिन्न सस्थाओ के चुनावो मे अपने अधिकृत उम्मीदवार खडे नही करेगी । इन राजनीतिक पार्टियो के प्रत्यक्ष हस्त-क्षेप से निश्चय ही इन स्थानीय सस्थाओ के दैनिक काम-काज मे कटुता उत्पन्न होगी जव कि पुरानी परपरा के अनुसार वे 'पच परमेश्वर' की भावना से काम करती है । इन पंचायतो के निर्णयो की पवित्रता सर्व-सम्मति और सद्भावना में निहित है ।

देश मे राज्य और केद्रीय स्तरो पर ससदीय प्रणाली विटेन से स्वीकार की गई है और पिछले पद्रह वर्षो मे वह संतोपजनक ढग से चली है, किन्तु यह स्वीकार किया जाता है कि यदि लोकतत्र का उसी नमूने पर निचले स्तरो ने भी अमल किया गया तो ग्राम-जीवन के अस्त-

व्यस्त होने का खतरा है और उसके फलस्वरूप आर्थिक और सामाजिक विकास की प्रगति मद हो जायगी । यदि पचायते सत्तावारी पक्ष और विरोधीपक्ष की भाषा मे सोचने लगेगी और प्रश्न-काल, स्थगन प्रस्ताव और वहिर्गमन जैसी वाते उनमे दाखिल हुई तो पचायती-राज की स्थापना वरदान सिद्ध होने के वजाय वस्तुत एक अभिशाप सिद्ध हो सकती है। यह ऐसी दुखद घटना होगी, जिसका शब्दोमे वर्णन नही किया जा सकता। आशा है कि देश की राजनीतिक पार्टिया इन ग्राम-सस्थाओ के साथ वडी सावधानी और कोमल भावना से पेश आयगी और सादियो पुरानी परपरा के अनुसार लोकतत्री विधिया विकसित करने मे सयुक्त रूप से मदद देगी ।

अतिम निष्कर्ष यह है कि इन ग्राम सस्थाओ की स्थायी सफलता इस पर निर्भर करेगी कि वे ग्रामीण आवादी के दारिद्रतम वर्गो के जीवन-मान को ऊचा उठाने मे कहा तक सफल होती है। उनमे भूमिहीन श्रमिको, परिगणित जातियो और आदिम जातियो का समावेश होता है । गावो के अपेक्षाकृत धनी व्यक्तियो को अपना यह पवित्र कर्तव्य समझना होगा कि उन्हे अपने कमजोर भाइयो को मदद देनी है, जिससे वे पचायतो और सहकारी समितियो मे भाग लेकर अपने को गरीवी के दलदल से निकाल वाहर कर सके । जवतक जनता और प्रशासन दोनो पचायती-राज के इस पहलू पर उचित ध्यान नही देगे, तवतक इन ग्राम-सस्थाओ के महत्वपूर्ण योग के वारे मे जो आशाए की जा रही है, वे केवल शुभाशाए मात्र ही रहेगी ।

६

सामाजिक और राष्ट्रीय एकता

यह प्रकट है कि समाजवादी समाज में समाज के सभी वर्गो के अदर राष्ट्रीय-एकता और समानहित एव साझेदारी का सुदृढ आधार होना चाहिए । इसलिए भारत मे समाजवादी इमारत खडी करने के लिए सामाजिक अथवा राष्ट्रीय एकता की नीव जरूरी है । यह स्पष्ट समझना होगा कि राष्ट्रीय एकता का आदर्श केवल भावात्मक प्रेरणा नही है । एकता की भावना आर्थिक दृष्टि से भी जरूरी है । यह जानना दिलचस्प होगा कि अमरीकी राष्ट्रपति को आर्थिक मामलो मे सलाह देनेवाली परिषद् ने जातीय भेद के बारे मे अपनी हाल की रिपोर्ट में कहा है कि यह 'राष्ट्रीय कलक' है, जिससे "राष्ट्र को आर्थिक हानि पहुचती है ।" रिपोर्ट मे आगे कहा गया है, "यह रग-भेद मानव-साधनो के विकास और उपभोग मे बाधक होता है, कार्य-क्षमता घटाता है, अर्थ-व्यवस्था के विकास को धीमा करता है, और आर्थिक प्रगति के नतीजो के वितरण को बदल देता है ।" श्री रेमड फ्रोन्ट कहते है, "राष्ट्र के भीतर एकता का अभाव केवल राजनीतिक परेशानी ही पैदा नही करता, बल्कि आर्थिक हानि का कारण भी होता है । जहा एकता नही होती, सरकार को उसे थोपना और उसका पालन कराना पडता है और एकता को थोपने का खर्च राष्ट्र के आर्थिक साधनों को क्षीण कर सकता है ।"

श्री लुई फिशर का यह उल्लेखनीय कथन है कि एशिया और अफ्रीका के नवोदित स्वतत्र देशो मे राष्ट्रवाद तो है, किंतु राष्ट्रो का पता नही है । भारत मे सभी राष्ट्रीय नेता सामाजिक एकता पर सबसे अधिक जोर देते हैं । हम इन नग्न तथ्य के प्रति आख नही मूद सकते कि धार्मिक असहिष्णुता, जातिवाद, क्षेत्रीयतावाद और भाषावाद जैसी विघटनकारी शक्तिया हमारे देश मे सक्रिय रही है । दुर्भाग्यवश, हर

आम चुनाव के समय इन राष्ट्रीयता विरोधी शक्तियो की ज्वाला पहले से अधिक भडकती दिखाई देती है। निस्सदेह, दूसरी वहुत-सी शक्तिया भी काम कर रही है, जैसे कि शहरो और उद्योगो का विस्तार हो रहा है और उनके कारण, श्री ताया जिन्किन के शव्दो मे, "जाति-प्रथा का अत हो रहा है।" फिर भी हमे साफ-साफ स्वीकार करना होगा कि अनेक विघटनमूलक प्रवृत्तिया हमारे त्वरित आर्थिक विकास के अभियान मे भारी वाधा डाल रही है।

केवल एक नागरिकता

चीनी और पाकिस्तानी आक्रमणो के कारण जो नई स्थिति उत्पन्न हुई है, वह वास्तव मे देश मे सामाजिक और मनोवैज्ञानिक एकता स्थापित करने मे बहुत अधिक सहायक हुई है। यह एकदम नया अनुभव है। इस अर्थ मे, यह सकटकाल छिपा वरदान सिद्ध हुआ हे। किंतु हमको इस बारे मे तनिक भी उदासीन नही होना चाहिए। यदि विभिन्न विघटनकारी शक्तियो का सघठित रूप से मुकावला करने की पर्याप्त सावधानी नही रखी गई तो समाज-विरोधी प्रवृत्तिया अपना कुरूप चेहरा बाहर निकाल सकती है और विना किसी चेतावनी के उभर सकती है। राष्टपति डा० राधाकृष्णन् ने अपने स्वतत्रता-दिवस के एक सदेश मे अपील की है कि हमे एकता, स्वतन्त्रता, न्याय और सहयोग के सिद्धातो पर एक सयुक्त, सोद्देश्य समाज-व्यवस्था का विकास करना चाहिए। इसलिए, भारत को स्थायी आधारो पर ऐसा समाज स्थापित करने की पूरी-पूरी कोशिश करनी चाहिए। यह तभी हो सकेगा, जव हर भारतीय नागरिक की मातृभूमि के प्रति सर्वोपरि निष्ठा होगी, और अपनी जाति, समुदाय, भाषा और राज्य को वह उसके वाद स्थान देगा।

यह सौभाग्य की बात है कि हमारा सविधान देश के सब लोगो के लिए एक ही नागरिकता स्वीकार करता है और सारे देश मे उन्हे समान अधिकार और अवसर देता है। इसलिए जाति, भाषा और क्षेत्रीय विचारो को दूसरा स्थान देना होगा। हमे नेहरूजी के इन सार्थक शव्दो को हमेशा याद रखना चाहिए, "मै चाहता हू कि धर्म अथवा

जाति, भाषा अथवा प्रात के नाम पर होनेवाले वर्तमान सकुचित सघर्ष समाप्त हो जाय और एक वर्गहीन और जाति-विहीन समाज की स्थापना हो, जिसमे प्रत्येक व्यक्ति को अपनी योग्यता और क्षमता के अनुसार विकास करने का पूरा अवसर मिले। खासतौर पर, मै आशा करता हू कि जात-पात का अभिशाप मिटा दिया जायगा, क्योकि जात-पात के आधार पर न लोकतत्र और न समाजवाद ही सभव हो सकता है।"

त्रिभाषी-सूत्र

यह सही है कि राष्ट्रीय एकता अपीलो और मीठे नारो से स्थापित नही हो सकती। राष्ट्रीय-एकता-परिषद् ने सम्प्रदायवाद, क्षेत्रीयतावाद, और अन्य विघटनकारी शक्तियो के बारे मे अनेक कमेटियां नियुक्त की है और उनसे समस्याओ की जड मे जाने और व्यावहारिक हल प्रस्तुत करने का अनुरोध किया है। उदाहरण के लिए, शिक्षा मत्रालय ने जो 'त्रिभाषी-सूत्र' तजवीज किया है, वह सास्कृतिक और सामाजिक समन्वय की दिशा मे सही कदम है। अपनी मातृभाषा जानने के अलावा माध्यमिक स्तर पर हर विद्यार्थी को अग्रेजी और भारतीय सघ की राज-भाषा—हिंदी का ज्ञान होना चाहिए। जिन विद्यार्थियो की मातृभाषा हिंदी हो, अगर वे एक और आधुनिक भारतीय भाषा, विशेषकर दक्षिण की भाषा का ज्ञान प्राप्त करेगे तो उससे राष्ट्रीय एकता का वातावरण पैदा करने मे मदद मिलेगी। किंतु यह ध्यान मे रखना होगा कि केवल अनेक भाषाओ के ज्ञान से ही अतत सास्कृतिक एकता स्थापित नही हो सकती। अतिम निष्कर्ष यह है कि आनेवाली पीढियो की उदारता और दूरदर्शिता से ही राष्ट्रीय एकता का मार्ग प्रशस्त होगा। सकुचितता के वातावरण मे अगर पाठ्यक्रमो मे अनेक भाषाए सिखाने की व्यवस्था की गई तो एकता और मजबूती का स्वस्थ वातावरण पैदा होने के बजाय भाषायी कटुता और प्रतियोगिताए बढ सकती हैं।

अंग्रेजी का स्थान

हिंदी के साथ-साथ सन् १९६५ के बाद भी अंग्रेजी को भारतीय

भारतीय सघ की सहायक राज-भापा वनाने के फैसले ने देश मे अनेक प्रति-क्रियाओ को जन्म दिया है । इस नाजुक प्रश्न पर सहिष्णुता और दूर-दर्शिता से विचार करना होगा ताकि भापा का मवाल राष्ट्रीय मद्-भावना की सर्वोपरि आवश्यकता पर हावी न हो जाय । अगले पाच या दस वर्षो मे केंद्र और राज्यो मे हिंदी का ज्ञान व्यवस्थित रूप से फैलाने की काफी कोशिश करनी होगी । अन्यथा, अंग्रेजी भापा सहकारी राज-भाषा रहने के वजाय हिंदी और अन्य भारतीय भापाओ की कीमत पर अपने को स्थायी वनाने की कोशिश कर सकती है । यह सुझाया गया है कि ससद अग्रेजी के दूसरी भापा के रूप मे व्यवहार की एक अवधि नियत करदे । एक निश्चित अवधि तय करने मे कुछ लाभ हो सकता है, किंतु मेरे विचार से यह मामला अहिंदी भापा क्षेत्रो की सद्भावना पर छोडना ज्यादा अच्छा होगा । वह समय आ गया है जव हिंदी को भार-तीय सघ की एकमात्र राजभाषा वनाने की जिम्मेदारी अहिंदी भापी लोगो पर विश्वास की भावना के साथ छोड देनी चाहिए । जवतक हिंदी भापी लोग हिंदी को राजभाषा वनाने का आदोलन करते रहेगे, तवतक हिंदी को भारतीय राष्ट्रवाद का मूलभूत अग स्वीकार कराने का स्वस्थ वातावरण वनाना कठिन होगा ।

अखिल भारतीय सेवाएं

राष्ट्रीय एकता स्थापित करने के कार्य मे अखिल भारतीय सेवाओ का किस प्रकार उपयोग किया जा सकता है, इस पर व्यवस्थित तरीके से विचार होना चाहिए । राज्य-पुनर्गठन-आयोग ने अपनी रिपोर्ट मे प्रशासन को अच्छा बनाने और अत राज्यीय एकता का विकास करने के लिए अनेक अखिल भारतीय सेवाओ को सगठित करने का सुझाव दिया है । यह सतोप का विषय है कि इस प्रस्ताव का राज्य-सरकारो ने अनुकूल उत्तर दिया है और इजीनियरी, चिकित्सा और वनो के लिए अखिल भारतीय सेवाए सगठित करने की दिशा मे कदम उठाये गए है । शायद यह वाछनीय होगा कि शिक्षा और कृषि के बारे मे दो और अखिल भारतीय सेवाओ का श्रीगणेश किया जाय । यह सुझाया गया

है कि वर्तमान अखिल भारतीय सेवाओ मे करीब ५० प्रतिशत नये अधिकारी सबधित राज्यो से बाहर के होने चाहिए। मेरी राय मे, यह बहुत स्वस्थ परपरा होगी।

शिक्षा का माध्यम

विश्वविद्यालय-स्तर पर शिक्षा का माध्यम क्या हो, इस बारे मे हाल के वर्षो मे काफी विवाद रहा है। एक ओर अनेक शिक्षा-शास्त्रियो की यह दृढ राय है कि हमारे कालेजो और विश्वविद्यालयो मे क्षेत्रीय भाषाओ को शिक्षा का माध्यम बनाया जाय, तो दूसरी ओर बहुत से ऐसे लोग है जो उच्च शिक्षा-सस्थाओ मे हिन्दी को शिक्षा का माध्यम बनाने की उतने ही जोर से हिमायत करते है। उपकुलपतियो और राज्यो के मत्रियो की अनेक कान्फ्रेसो मे इस प्रश्न पर बार-बार और विस्तार से विचार हुआ है, और निष्कर्ष यह है कि विश्वविद्यालयो मे क्षेत्रीय भाषा शिक्षा का माध्यम होनी चाहिए, किंतु साथ ही अग्रेजी और हिंदी दोनो भाषाओ का खासा अच्छा ज्ञान कराना चाहिए। किंतु तकनीकी पाठ्यक्रमो मे, विशेषकर चिकित्सा और इजीनियरी मे, आनेवाले अनेक वर्षो तक शिक्षा का माध्यम अग्रेजी बनी रहनी चाहिए, जबतक कि हिंदी अथवा क्षेत्रीय भाषाए इस काम के लिए काफी विकसित न हो जाय। अनेक राज्यो के शिक्षा-मत्रियो ने यह तीव्र इच्छा प्रकट की है कि केद्रीय सरकार राष्ट्रीय विश्वविद्यालय कायम करे, सभव हो तो हर राज्य मे एक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय हो। इन विश्वविद्यालयो मे शिक्षा का माध्यम हिंदी हो। यह एक ऐसा सुझाव है, जिस पर राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से सावधानी पूर्वक विचार किया जाना चाहिए।

अल्पसख्यको की समस्याए

भाषायी अल्पसख्यको सबधी समस्याओ पर भी सहानुभूति के साथ विचार करना चाहिए। अल्पसख्यको के सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक और सास्कृतिक अधिकारो पर जरूरत से ज्यादा जोर देने की जरूरत नही, क्योकि इससे समान राष्ट्रीयता के विकास मे बाधा पडती है। किंतु

अल्पसख्यको मे यह विश्वास की भावना पैदा करने की सच्ची कोशिश होनी चाहिए कि उनके उचित हितो को पर्याप्त सरक्षण मिल रहा है। उदाहरण के लिए, राज्य-सरकारो को भाषायी अल्पसख्यको के बालको को प्राथमिक स्तर पर उनकी मातृभाषा मे शिक्षा देने की पूरी कोशिश करनी चाहिए। इस विषय मे उर्दू के प्रश्न पर विशेष सहानुभूति से विचार करना चाहिए। इसके अलावा, राज्यो की नौकरियो में भरती की प्रणाली किसी भी रूप मे अल्पसख्यको के न्यायोचित प्रतियोगिता मे शामिल होने के रास्ते मे बाधक नही होनी चाहिए। क्षेत्र-विशेष मे आवास के नियम अक्सर इस तरह बनाये गए है कि अल्पसख्यक समूहो को नौकरियो मे स्थान नही मिल पाता। यह निश्चय ही युक्ति-युक्त नही है और आशा है, राज्य सरकारे अविलब इन नियमो मे सशोधन करेगी।

वर्तमान मे हर राज्य के लिए एक राज्य-सेवा-आयोग है। शायद यह ज्यादा अच्छा होगा कि एक से अधिक राज्यो के लिए एक ही राज्य सेवा-आयोग हो, ताकि राज्यो की नौकरियो के लिए उम्मीदवारो के चुनाव मे सकुचित और क्षेत्रीय विचार हावी न हो।

राज्य-पुनर्गठन-आयोग ने सुझाया है कि वही राज्य एक-भाषी गिना जाय, जिसमे एक भाषी समुदाय का अनुपात कुल जनसख्या के करीब ७० प्रतिशत से अधिक हो। जहा अल्पसख्यक समुदाय जनसख्या के ३० प्रतिशत से अधिक बडा हो, उस राज्य को प्रशासनिक कामो के लिए द्विभाषी माना जाय। इस प्रकार की व्यवस्था क्षेत्र के अल्पसख्यक समुदायो मे विश्वास की भावना पैदा करने मे सहायक होगी।

सबसे बड़ा कलंक

हमारा सविधान अस्पृश्यता की प्रथा को कानूनी अपराध मानता है। गृह-मत्रालय हाल के वर्षो मे देश के विभिन्न भागो मे अस्पृश्यता की प्रथा को खत्म करने की कोशिश कर रहा है। परिगणित जाति और परिगणित आदिम जाति आयुक्त की वार्षिक रिपोर्टो मे बराबर इस बात की ओर ध्यान दिलाया गया है कि यह सामाजिक बुराई अनेक

क्षेत्रो मे, विशेषकर देहातो मे, आज भी बनी हुई है। गाधीजी ने स्वतन्त्रता आदोलन से सबधित राजनीतिक लडाइयो मे व्यस्त रहते हुए भी हिंदू समाज पर लगे इस 'सबसे वडे कलक' को मिटाने के लिए अनेक बार अपने प्राणो की बाजी लगा दी थी। किंतु हमें वास्तविक स्थिति का मुकाबला करना होगा और राज्य सरकारो की मदद से इस सामाजिक बुराई के अमानवी पहलू के बारे मे लोगो को शिक्षित करने का सगठित प्रयास करना होगा और जो लोग सविधान के निर्देश का पालन करने से इन्कार करे, उनके विरुद्ध कड़ी कार्रवाई करनी होगी। गृह-मत्रालय ने हाल मे अनुसूचित जातियो के आधार पर नही, वल्कि आर्थिक पिछडेपन के आधार पर शैक्षणिक छात्रवृत्तियां देने का सही निर्णय किया है। राज्य सरकारो से भी भविष्य मे इस सिद्धात पर चलने का अनुरोध किया गया है। जाति-प्रथा और अस्पृश्यता को बिना किसी दण्ड-भय के सहन करनेवाला समाजवादी समाज निश्चय ही समाजवाद का मजाक होगा।

नेहरूजी ने अपनी आत्मकथा मे कहा है कि हमे भारत में साम्यवाद और सम्प्रदायवाद दोनो से निपटना होगा। यद्यपि साम्यवादी दर्शन के उद्देश्य सराहनीय है. किंतु इन उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए जो साधन अपनाये जाते है, वे हिंसा और वर्ग-संघर्ष पर आधारित्त है। सम्प्रदाय-वाद मे तो सभ्य-समाज के लिए कुछ भी अपनाने योग्य नही है, वह तो आदि से अत तक कुरूप है। जाति-प्रथा, जैसा गाधीजी ने कहा है, प्राचीन भारत मे आर्थिक और सामाजिक दृष्टियो से कुछ लाभदायक रही होगी। उन्होने लिखा है, "वह गरीवी की रामवाण दवा थी और व्यावसायिक सघो के सव लाभ उसमे मौजूद थे।" किंतु यह सामाजिक प्रथा गत कुछ शताब्दियो मे इस देश मे जिस तरह विकसित हुई, उसने अस्पृश्यता की निर्दय-प्रथा को जन्म दिया है। अमरीका समेत पश्चिम के अनेक देशो मे रग-भेद और जाति-भेद का अस्तित्व सचमुच अत्यन्त शोचनीय है। किंतु हमारे समाज मे अस्पृश्यता की प्रथा वास्तव में हमारी सदियो पुरानी सस्कृति और सभ्यता पर सबसे वडा कलक रहा है। उसका अपना युग था, किंतु उसे अव मिटना चाहिए। नेहरूजी

ने कहा है, "अस्पृश्यता के अवशेप और सामाजिक एव धार्मिक श्रेष्ठता पर आधारित घृणा देश को कमजोर बनाते है और प्रगति की दिशा मे उसके प्रवाह मे बाधक होते है।"

स्त्रियो का दर्जा

भारतीय सविधान मे, सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र मे स्त्रियो को पुरुषो के बराबर दर्जा दिया गया है। बुनियादी अधिकारो के अतर्गत यह स्पष्ट निर्दिष्ट किया गया है कि पुरुपो और स्त्रियो को समान रूप से आजीविका के पर्याप्त साधन पाने का अधिकार है। वास्तव मे, गाधीजी ने स्वतत्रता-प्राप्ति के पहले ही भारत मे स्त्रियो को सार्वजनिक मामलो मे सम्मान-जनक स्थान देने को बहुत अधिक महत्व दिया था। उनकी प्रेरणा से ही स्त्रियो ने स्वतत्रता के राष्ट्रीय सग्राम मे प्रमुख भाग लिया था। गाधीजी ने कहा था, "मेरी यह दृढ राय है कि भारत की स्वतत्रता स्त्रियो के त्याग और ज्ञान पर निर्भर करती है।"

नेहरूजी भी भारतीय लोकतत्र मे स्त्रियो के उचित अधिकारो के कट्टर हिमायती रहे। भारतीय ससद मे हिंदू विवाह विधेयक पर बोलते हुए उन्होने कहा था, "अगर आप मानवता के एक बडे अग को, जन-सख्या के ५० प्रतिशत को, काटकरअलग कर देते है और उनकी सामाजिक सुविधाओ आदि की दृष्टि से अलग ही श्रेणी बना देते है तो आप लोकतत्र कायम नही कर सकते।" भारतीय ससद ने हिंदू उत्तराधिकार प्रणाली के अतर्गत लडको के समान ही लडकियो के कानूनी अधिकार सुरक्षित करने के लिए आवश्यक कानून मजूर किया है। हिंदू कोड कानून समाजवाद की व्यापक नीति का मूलभूत अग है और निश्चय ही यह सतोष का विषय है कि भारत मे स्त्रिया सरकार मे और सार्वजनिक जीवन मे उच्च-पद ग्रहण किये हुए है। वस्तुत, यह उल्लेखनीय है कि हमारी ससद मे दुनिया की अन्य ससदो के मुकाबले स्त्रियों का अनुपात अधिक है।

यह कहना सही नही है कि भारत मे स्त्रियो के प्रति जो सम्मान दिखाया जाता है, उसको पैदा हुए थोडा ही समय हुआ है। असल मे, इस देश मे स्त्रियो को अत्यत प्राचीनकाल से बहुत उच्च स्थान दिया

गया है। महान स्मृतिकार मनु ने दो हजार वर्ष पहले लिखा है, "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:'—जहा नारी की पूजा होती है, वहा देवताओ का निवास है। गत कुछ शताब्दियो से देश के अनेक भागो में स्त्रिया पर्दा, दहेज, बालविवाह और विषम उत्तराधिकार अधिकारो जैसी अवाछनीय सामाजिक कुरीतियो की शिकार रही है। किंतु भारत की स्त्री-जाति समाजवादी लोकतत्र के आधीन अपना स्थान ग्रहण कर रही है और पचवर्षीय योजनाओ मे स्त्रियो को शहरी और ग्रामीण दोनो क्षेत्रो मे शिक्षा और अन्य सामाजिक सुविधाए देने पर विशेष जोर दिया जा रहा है। केद्रीय समाज-कल्याण-बोर्ड ने पिछली दशाब्दि मे महिला सगठनो की प्रगति के लिए सराहनीय काम किया है और यह निश्चित है कि ये कार्यक्रम आगामी योजनाओ मे और भी तेज किये जायगे।

बाल-कल्याण

नेहरूजी बच्चो को बहुत प्यार करते थे और यह उचित ही है कि उनका जन्मदिन सारे देश मे बाल-दिवस के रूप मे मनाया जाता है। उन्होने बहुत बार कहा था कि राष्ट्र का भविष्य ज्योतिषियो की जन्म-कुडलियो से नही, बल्कि बच्चो की आखो की चमक मे पढना चाहिए। नेहरूजी ने कहा था, "मुझे ऐसे बच्चे देखकर बेहद तकलीफ होती है, जो शिक्षा से वचित हैं और खाना तथा कपडा भी जिन्हे नसीब नही है।" उनका एक और कथन है, "यदि हमारे बच्चो को आज शिक्षा न मिले तो हमारे कल के भारत की कैसी तस्वीर होगी?"

तीसरी योजना मे, ६ से ११ वर्ष की आयु के तमाम बच्चो के लिए प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य और निश्शुल्क करदी गई है। चौथी योजना की अवधि मे यही सुविधाए ११ से १४ वर्ष की आयुवाले बच्चो को देने की हर संभव कोशिश की जायगी। सन् १९६६ तक करीब ५ करोड बच्चो के नाम देश के प्राथमिक स्कूलो मे दर्ज किये जा चुके होगे और इन स्कूलो की सख्या ४,००,००० जितनी होगी। बालवाड़ी शिक्षको को पर्याप्त सख्या मे प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की जा रही है। बाल-हित की दृष्टि से विभिन्न कल्याण कार्यक्रम बनाये जा रहे है और

राज्य 'पुनर्गठन आयोग की रिपोर्ट ने 'भारत की एकता' वाले अध्याय मे राष्ट्रीय-एकता को वढावा देने के लिए अनेक व्यावहारिक सुझाव दिये है। शिक्षा-मत्रालय द्वारा नियुक्त सपूर्णानद राष्ट्रीय-एकता समिति ने भारत की एकता की रक्षा करने और उसे सुदृढ वनाने के लिए अनेक वहुमूल्य सिफारिशे की है। देश मे लोकतत्री और समाजवादी व्यवस्था की ठोस नीव डालने के लिए इन सिफारिशो पर सच्चे दिल से अमल करना जरूरी है।

क्षेत्रीय परिपदो का उपयोग अभीतक मुख्यत पुलिस और कानून एव व्यवस्था से सबधित समस्याओ पर विचार करने के लिए ही किया गया है। यह देखकर सतोप होता है कि हाल मे भापा, शिक्षा और सिंचाई साधनो से सवधित अनेक प्रश्नो को क्षेत्रीय परिपदो ने सफलता के साथ निपटाया है। इस क्रिया को और आगे वढाना वाछनीय होगा। क्षेत्रीय परिपदो को विविध अतर्राज्यीय समस्याओ को समझौते की भावना से हल करने का प्रभावशाली माध्यम वनाना चाहिए। देश मे आठ नदी बोर्डो का गठन भी पडोसी क्षेत्रो मे पानी के वटवारे की समस्या को हल करने का सुव्यवस्थित माध्यम होगा।

राष्ट्रीय अखंडता

ससद् ने किसी भी राज्य अथवा क्षेत्र को भारतीय सघ से विलग होने की वात न सोचने देने के लिए सविधान मे सशोधन करके सही कदम उठाया है। यदि कोई व्यक्ति, समूह या क्षेत्र भारत की अखडता और प्रभुसत्ता को चुनौती देता या कमजोर करता है तो उसे सख्ती और मजवूती से दवा देना होगा। हमारे राजनीतिक जीवन मे जो तत्व अवतक भारतीय सघ से अलग होने का प्रचार करते आये है, उन्हे अपने तरीके बदलना चाहिए और राष्ट्रीय नेतृत्व का अनुगमन करना चाहिए। जैसा कि पहले कहा गया है, भारत सरकार और योजना-आयोग देश के सभी भागो का न्यायोचित और सतुलित तरीके से विकास करने के लिए वहुत उत्सुक है। अगर किसी राज्य अथवा क्षेत्र को अभी भी

शिकायत हो तो अवश्य ही बहुत सावधानी और सचाई से विचार किया जाना चाहिए। किंतु समाजवादी लोकतंत्री भारत संघ से अलग होने की अनर्गल चर्चा को सहन नहीं कर सकता, क्योंकि ऐसी चर्चा सार्वभौम गणराज्य के मूल अस्तित्व के लिए घातक है।

७

तटस्थता और विश्वशांति

भारत का समाजवाद तटस्थता और पचशील की नीति के द्वारा विश्वशाति और अतर्राष्ट्रीय सहयोग की स्थापना के लिए सचाई से काम कर रहा है। तीसरी पचवर्षीय योजना की पहली वाक्यावली मे ही कहा गया है, "भारत के विकास का वुनियादी लक्ष्य विश्वशाति के साथ गहराई से जुडा हुआ है और उसी पर निर्भर करता है। आधुनिक शस्त्रास्त्रो की मदद से लडा गया युद्ध न केवल प्रगति की आशाओ को समाप्त कर देगा, वल्कि मानव-जाति के अस्तित्व को भी खतरे मे डाल देगा। इसलिए राष्ट्रीय प्रगति के लिए शाति का कायम रहना, निहायत जरूरी और आवश्यक शर्त है।"

भारत की तटस्थता अथवा गुटो से अलग रहने की नीति उसकी अहिसा और विश्व-वधुत्व की प्राचीन परपराओ के अनुकूल है। वह भगवान् बुद्ध की महान् शिक्षाओ, सम्राट अशोक के आदेशो और महात्मा गाधी के आदर्शो के अनुसार है। नेहरूजी दोनो शक्ति गुटो के सैनिक गठ-वधनो से विल्कुल अलग रहकर तटस्थता अथवा 'शातिमय सहअस्तित्व' की नीति के शानदार निर्माता थे। जिस अटूट श्रद्धा और दृढता के साथ भारत इस नीति का अनुसरण कर रहा है, इससे एशिया और अफ्रीका के अनेक नवोदित स्वतत्र राष्ट्रो को प्रेरणा मिली है। यद्यपि हमारी नीति को अनेक पश्चिमी लोकतत्री देशो ने शका और सदेह की दृष्टि से देखा था, किंतु चीनी आक्रमण से उत्पन्न स्थिति ने उसकी उपयुक्तता और व्यावहारिक बुद्धिमत्ता को पर्याप्त मात्रा मे प्रमाणित कर दिया है। यह वडे सतोष का विषय है कि अमरीका और रूस दोनो ही हमसे इस कठिन स्थिति का सामना करने के लिए अव तटस्थ वने रहने का आग्रह कर रहे है। कारण, वे दोनो ही अनुभव करते

है कि भारत यदि किसी शक्ति-गुट मे प्रत्यक्ष रूप मे शामिल हुआ तो विश्व-युद्ध हो जायगा। श्री हुग गेट्सकल के शब्दो मे अनेक एशियाई देशों की तटस्थतावादी नीति के मूल मे यह भावना है कि "उन्हे अपनी अर्थ-व्यवस्थाओ का विकास करने मे अपनी सब शक्ति लगानी चाहिए और रक्षा पर भारी व्यय नही करना चाहिए।" इसलिए यह बहुत जरूरी है कि हम भारत और मानवता के हित मे तटस्थता की नीति पर नई श्रद्धा के साथ डटे रहे। यह कुछ अजीब-सा लगता है कि हमारे देश मे अब भी कुछ ऐसे व्यक्ति और समूह हैं जो भारत के पश्चिमी गुट मे शामिल होने की जोरो से हिमायत करते हैं। चीनी आक्रमण से उत्पन्न सकट के समय अमरीका, ब्रिटेन और अन्य देशो ने जिस तत्परता से हमारी सहायता की, उसके लिए हम उनके आभारी हैं, किंतु हमको बिना किसी शका के यह समझना होगा कि भारत द्वारा तटस्थता की नीति को त्यागने का विचार न केवल विश्वशाति की दृष्टि से खतरनाक होगा, बल्कि भारत की स्वतत्रता और समृद्धि के लिए भी आत्मघातक होगा।

विज्ञान और अहिसा

विज्ञान के इस युग मे अगर कोई राष्ट्र हिसा और अतर्राष्ट्रीय सघर्ष का मार्ग अपनाता है तो उसके फलस्वरूप सर्व सहारकारी विश्व-युद्ध छिड जायगा। गाधीजी ने अणुबम के लिए कहा था कि यह विज्ञान का 'अत्यत राक्षसी' उपयोग है और उन्होने राष्ट्रो के आपसी मतभेदो को अहिसा के जरिये हल करने की हिमायत की थी। विनोबाजी बार-बार यह प्रत्यक्ष किंतु अक्सर भूली हुई बात दोहरा रहे है कि विज्ञान के साथ अहिसा के योग से विश्वशाति स्थापित होगी और यदि उसका हिसा के साथ गठबधन हो गया तो वह विश्वव्यापी विनाश का जनक हो जायगा। आणविक शक्ति के विकास ने दुनिया के देशो को अपने अस्तित्व की रक्षा करने के लिए सही चुनाव करने को विवश कर दिया है। गाधी शाति-प्रतिष्ठान ने जून १९६२ मे नई दिल्ली मे आणविक अस्त्र विरोधी-सम्मेलन का आयोजन करके बहुमूल्य सेवा की थी।

उसके द्वारा भारत ने आणविक युद्ध से होनेवाले महाविनाश के विरुद्ध अपनी आवाज बुलद की और दुनिया की महान् शक्तियो मे अपील की कि वे अपने कदम पीछे हटा ले और मानव-जाति को और आनेवाली पीढियो को 'अकल्पनीय महासकट' से बचा ले। नेहरूजी ने इस सम्मेलन मे भाग लिया था और आणविक अस्त्रो के परीक्षणो को न केवल स्थूल रूप मे बद करने की अपील की थी, बल्कि उन अणुबमो से भी छुटकारा पाने का आग्रह किया था जो "हमारे दिलो और दिमागो मे निरतर रोपे जा रहे है।"

यह अत्यधिक सतोष का विषय है कि भारत सरकार ने युद्ध-कार्यो के लिए आर्थिक शक्ति का उपयोग न करने का दृढ निश्चय किया है। यह निश्चय केवल नैतिक भावना से नही, बल्कि व्यावहारिक आवश्यकतावश किया गया है। भारतीय वाणिज्य और उद्योग मडल की सभा मे बोलते हुए नेहरूजी ने कहा था, "हथियार नित्य बदल रहे है और आधुनिकतम हथियार करीब-करीब कुछ राष्ट्रो के एकाधिकार मे ही है। वही उनका उत्पादन करते है, और उपयोग भी कर सकते है। भारत अपने सब साधन विशेष प्रकार के हथियारो के निर्माण मे नही खर्च कर सकता। हम वर्तमान मे यह नही कर सकते और मै नही चाहता कि भविष्य मे भी ऐसा किया जाय।" लोकसभा मे भी नेहरूजी ने आणविक शस्त्रो का निर्माण न करने की नीति पर चलते रहने के भारत के सकल्प को दोहराया। प्रधान मत्री श्री लालबहादुर शास्त्री का भी यही विचार है कि भारत को फिल्हाल अणुबम नही बनाना चाहिए।

दुनिया के भविष्य के लिए यह शुभ चिह्न है कि अमरीका, रूस और ब्रिटेन ने आणविक परीक्षणो को रोकने की सीमित सधि पर हस्ताक्षर कर आणविक शस्त्रो की समस्या को रचनात्मक दृष्टि से हल करने का प्रयास किया है। यदि इस कदम पर सही भावना से चला गया तो यथा-समय आम निश्शस्त्रीकरण की पूरी सधि की जा सकेगी। अबतक स्पुतनिक "मानव की उपलब्धि और उसकी हताशा' के प्रतीक रहे है। लदन के 'इकोनोमिस्ट' पत्र के शब्दो मे 'यह इस कारण है कि अतरिक्ष को जीतने की वैज्ञानिक दौड सहयोग की भावना से नही, बल्कि शका और विरोधी

प्रतियोगिताओ से प्रेरित रही है।" यह महत्व की बात नही कि अमरीका अथवा रूस कौन सबसे पहले चन्द्रमा अथवा अन्य नक्षत्रो पर पहुचने मे सफल होता है। किंतु यह शत-प्रतिशत निश्चित है कि यदि आधुनिक विज्ञान और अतरिक्ष विद्या का सैनिक क्षेत्र मे उपयोग किया गया तो मानव-जाति के विनाश की घटी बज जायगी। अतिम निष्कर्ष यह है कि राजनीतिक क्षितिज पर से युद्ध की छाया तभी हटाई जा सकती है जब घृणा के समस्त चिह्न मिटा दिये जाय। प्रोफेसर टोयनबी कहते हैं कि वैज्ञानिक शोध के दुरुपयोग का मूल कारण यह है कि "प्रकृति पर मनुष्य की विजय के साथ वैज्ञानिक स्वय पर विजय पाने मे असमर्थ रहा है।" प्रोफेसर डेवी की राय है कि असली युद्ध-क्षेत्र "हमारे और हमारी सस्थाओ के भीतर है।" श्री ममफोर्ड कहते हैं कि प्रकृति पर नियत्रण पाने की कोशिश मे "आत्म-नियत्रण करने की हमारी वुद्धि और इच्छा लुप्त हो गई है और हमने जिस मशीन का निर्माण किया है, उसके हम वेवस पुर्जे वन गए है।"

युद्ध-कला की अर्थ-व्यवस्था

ब्रिटिश दार्शनिक बर्टरड रसेल ने आधुनिक युद्ध-कला की अर्थ-व्यवस्था के बारे मे कुछ आखे खोल देनेवाले अक-प्रकाशित, किये है। उन्होने अनुमान लगाया है कि दुनिया के विभिन्न राष्ट्र सुरक्षा-तैयारियो पर ५० करोड रुपया प्रतिदिन खर्च कर रहे है। प्रमुख अर्थशास्त्रियो ने भी यह अनुमान लगागा है कि दुनिया के अल्पविकसित देशो मे करीव ५० करोड इन्सान भूख और अल्प-पोषण के शिकार है। यह कहने की आवश्यकता नही कि विकसित राष्ट्र यदि सुरक्षा-व्यय मे थोडी बचत करे तो काफी रुपया बच सकता है और विकासोन्मुख देशो को अपना कृषि और औद्योगिक उत्पादन वढाने और अपने करोडो अधभूखे और अध-नगे लोगो को खाना और जीवन की अन्य आवश्यकताए सुलभ करने से उस रुपये का आर्थिक सहायता के रूप मे उपयोग किया जा सकता है। अमरीका की राष्ट्रीय आयोजन सस्था के हाल के प्रकाशन मे बताया गया है कि अभी से लगा कर सन् १९७० तक बडे राष्ट्र हथियारो और

आणविक शास्त्रो पर करीव २०० खर्व डालर खर्च कर चुकेगे। जवतक इस सख्यातीत विनाशक व्यय को सारी दुनिया के जीवन-मान को ऊचा उठाने के लिए उत्पादक और रचनात्मक कामो पर खर्च नही किया जाता, तबतक राष्ट्रीय और अतर्राष्ट्रीय, दोनो क्षेत्रो मे, समाजवादी समाज की कल्पना करना वेकार होगा।

उत्पादन के तकनीक

प्रोफेसर बर्नल ने वडे परिश्रम के साथ यह बताया है कि जितना विज्ञान हम जान चुके है, उसका प्रयोग कर जितनी सपत्ति हम प्राप्त कर सकते है, वह उस सपत्ति से कही अधिक होगी जो हम अत्यत उपजाऊ प्रदेशो की जीत से हासिल कर सकेगे। जिन भौतिक लक्ष्यो के लिए राष्ट्र सदियो लडते रहे है और जिनके लिए लडने को तैयार है, वे उन लक्ष्यो की तुलना मे विल्कुल तुच्छ है, जो शातिकाल मे अधिक तेजी के साथ उतने ही परिश्रम से प्राप्त किये जा सकते है। औद्योगिक कच्चामाल, तेल और कोयला पाने के लिए नये प्रदेश जीतने की कोशिश करने के बजाय डा० बर्नल बताते है कि किस प्रकार आणविक और हवा, पानी और सूरज की किरणो जैसे प्राकृतिक साधनो से प्रचुर शक्ति पैदा की जा सकती है। कृषि के क्षेत्र मे उपयुक्त और अधिक उपज देनेवाले पौधे उगाये जा सकते है और प्रतिरोधक किस्मो को पैदा और विकसित करने के नव-आविष्कृत तरीको से प्रति एकड अतिरिक्त उपज हासिल की जा सकती है। यह अब व्यापक रूप मे स्वीकार किया जाता है कि कृषि-विषयक आधुनिक वैज्ञानिक खोज से ऐसी काफी सभावनाए उत्पन्न हुई है कि अभी की अपेक्षा दूनी-तिगुनी जन-सख्या का भरण-पोषण किया जा सके। उत्पादन के क्षेत्र मे ऐसी असीम सभावनाओ के होते हुए नये उपनिवेश या 'प्रभाव' क्षेत्र हासिल करने के लिए राष्ट्रो के बीच सघर्ष होना बिल्कुल अर्थ-शून्य होगा। ऐसे सघर्षो को 'आत्मघाती पागलपन' की सज्ञा देनी पडेगी।

विश्व-खाद्य काग्रेस के सम्मुख ५ जून १९६३ को बोलते हुए अमरीका के कृषि मत्री श्री ऑरविली फ्रीमैन ने कहा था, "यह शकास्पद है कि इस

पृथ्वी पर बसा हुआ राष्ट्र-समूह अधिक समय तक अधभूखा और अधनगा रह सकेगा।" उन्होने आगे कहा, "दुनिया के सामने एक सर्वाधिक भाग्य-शाली ऐतिहासिक सयोग उपस्थित है। विकासोन्मुख राष्ट्र आत्मनिर्भरता की दिशा मे बढ रहे है। एक ओर उन्हे खाद्य-सामग्री की बेहद जरूरत है और दूसरी ओर विकसित राष्ट्र इतना प्रचुर उत्पादन कर सकते है कि जो उनके लिए परेशानी का कारण होता है।"

वास्तव मे, आधुनिक दुनिया मे समाजवाद की कल्पना उस समय तक अधूरी रहेगी जबतक कि उसमे सभी देशो का समावेश नही होगा। नेहरूजी का यह दृढ विश्वास था कि पहले तो राष्ट्रो की सीमाओ के भीतर और अनतर सारी दुनिया मे समाजवाद की स्थापना होनी चाहिए और उसके साथ-ही-साथ सार्वजनिक हित मे सपत्ति का उत्पादन और वितरण होना चाहिए। चौथाई शताब्दि पूर्व ही उन्होने लिखा था, "भारत किधर जा रहा है? निश्चय ही, वह सामाजिक और आर्थिक समानता के महान मानव-कल्याण की ओर, एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्र और एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग के शोषण मात्र को समाप्त करने की ओर, तथा अतर्राष्ट्रीय सहकारी समाज-वादी विश्व-सघ के अतर्गत राष्ट्रीय स्वतत्रता की ओर जा रहा है।"

समानता की क्रांति

किंतु यह आवश्यक है कि विश्व-समृद्धि लाने और विकासोन्मुख राष्ट्रो को गरीबी, भूख और बेकारी के दलदल से बाहर निकालने के इस महान् अभियान मे विकसित देशो को बिना किसी शर्त अथवा सकीर्ण हेतुओ के सहायता का हाथ आगे बढाना चाहिए। आधुनिक समाजवाद की कल्पना अधूरी रहेगी, यदि वह सब अल्पविकसित देशो को स्पर्श नही करेगी तथा अमीर और गरीब राष्ट्रो के बीच की चौडी खाई को नही पाटेगी। श्री बारबरा वार्ड ने बडे शक्तिशाली रूप मे कहा है कि आधुनिक दुनिया की सब से अर्थ-सूचक क्राति "समानता की, मनुष्य की समानता और राष्ट्रो की समानता की क्राति है।" हरेक विकासोन्मुख देश करोडो लोगो की सामाजिक और आर्थिक दशा तेजी से सुधारना चाहता है ताकि प्रचुरता की अर्थ-व्यवस्था का लक्ष्य सिद्ध

हो सके । इसलिए यह निहायत जरूरी है कि एशिया, अफ्रीका और लेटिन अमरीका के देशो की समृद्ध-राष्ट्र सक्रिय मदद करें, ताकि वे गरीबी की लक्ष्मण-रेखा को लाघ सके और अतर्राष्ट्रीय सहकारी राष्ट्र-मडल गठित करने के महान् काम मे करीब-करीब बराबरी के साझीदार बन सके । वर्तमान मे ये देश न केवल आर्थिक दृष्टि से पिछडे हुए है, बल्कि निरतर बढती हुई जनसख्या की जटिलता भी उन्हे परेशान कर रही है ।

जिस विश्व-समाज मे समृद्धि और गरीबी साथ-साथ रहने दी जायगी, वह शाति और समृद्धि का युग लाने की कभी आशा नही कर सकता । इस दृष्टि से, हर प्रकार का उपनिवेशवाद और शोषण समाप्त होना चाहिए । शक्तिशाली सैनिक सुरक्षा योजनाओ से साम्यवाद की चुनौती का सफल मुकाबला नही किया जा सकता । पश्चिम को साम्यवाद का मुकाबला करने के लिए नीति के बजाय नीति, विचार के बजाय विचार और आदर्श के बजाय आदर्श से काम लेना होगा । डॉ० फ्रॉम ने कहा है, "वर्तमान सघर्ष मनुष्य के दिमागो पर विजय पाने का सघर्ष है, इस सघर्ष मे कोरे नारो और प्रचार की चालो से विजय हासिल नही की जा सकती । "सैनिक खतरे पर ध्यान केंद्रित करके और हथियारो की दौड मे शामिल होकर हम विजय का एक अवसर खो देते है । हमे यह सिद्ध करना चाहिए कि अपने देश मे और एशिया, अफ्रीका और लेटिन अमरीका मे आर्थिक प्रगति और व्यक्तित्व की रक्षा, आर्थिक और सामाजिक आयोजन और लोकतत्र सभव हो सकता है ।" प्रोफेसर कोल ने दो शक्ति-गुटो के बीच आदर्शगत आधार पर शीत-युद्ध जारी रहने पर गहरी निराशा प्रकट की है । वह कहते है, "मै इस दुनिया मे अपने को अकेला और करीब-करीब निराशा की स्थिति मे पाता हू, कारण, मैं जिन्हे समाजवादी मूल्य समझता हू, वे दो भारी-भरकम चक्की के पाटो के बीच निर्दयतापूर्वक कुचले जा रहे है । एक ओर साम्यवाद की निरकुश केंद्रवादी सत्ता है और दूसरी ओर सपत्ति और विशालता की अमरीकी अधपूजा है । यह पूजा अपनी ही खातिर की जा रही है,

मानव बधुत्व की वह माध्यम नही है, जो कि समाजवादी श्रद्धा का मूल आधार है ।"

समाजवादी देशों मे असमानताएं

हमे विश्व राजनीति के एक नये और कुछ अजीब लक्षणो पर भी ध्यान देना चाहिए । वह यह है कि स्वय समाजवादी देशो मे असमानता की खाई बढ रही है । मोशी (टागानीका) मे अफ्रीकी-एशियाई एकता सम्मेलन मे राष्ट्रपति नियरेरे ने कहा था, "समाजवाद का मूल आधार ही यह है कि वह सपत्ति का शक्ति या प्रतिष्ठा के प्रतीक रूप मे उपयोग करने से इन्कार करता है ।" किंतु समाजवादी देशो मे वर्ग और श्रेणिया सतत बढ रही है । अब यहा केवल समृद्ध पूजीवादी देश ही नही है, बल्कि गरीब समाजवादी देश भी है । और, समाजवादी देश स्वय राष्ट्रो के बडे समाज की एक इकाई के रूप मे अब वही गलती कर रहे है जो पहले पूँजीवादी देशों ने की थी । राष्ट्रपति नियरेरे का कहना है कि "अतर्राष्ट्रीय स्तर पर वे समाजवादी देश पूजीवादी कार्यो के निमित्त सत्ता और प्रभाव हासिल करने के लिए सपत्ति का उपयोग कर रहे है ।" उनकी इस चेतावनी पर उन सभी लोगो को गभीरता से विचार करना चाहिए, जो विश्व-समाजवादी समाज कायम करना चाहते है ।

विश्व-नागरिकता

जब हम विश्व-सगठन की बात सोचने लगेगे तभी दुनिया के विभिन्न राष्ट्रो मे सच्ची आर्थिक और राजनीतिक समानता कायम कर सकेगे । इग्लैड के मजदूर नेता श्री एन्यूरिन बेविन ने कुछ वर्षो पहले कहा था, "राष्ट्रीय सार्वभौमिकता ऐसा शब्द है, जिसे इतिहास अर्थ-हीन बना रहा है ।" इस आणविक युग मे एकमात्र व्यावहारिक हल यही हो सकता है, चाहे वह इस समय कितना ही कठिन क्यो न प्रतीत हो कि विश्व-सरकार के अतिम लक्ष्य के हित मे अथवा जैसा कि कवि टेनीसन ने अनेक वर्षो पहले कहा था, 'मानव की पार्लमेंट' की खातिर राष्ट्रीय हितो को गौण स्थान दिया जाय । यह कहने की आवश्यकता नही कि

कोई भी भावी युद्ध जो आज के घातक शस्त्रास्त्रो से लडा जायगा, पीछे विजेता नही, बल्कि पराजित ही छोडेगा । जब प्रसिद्ध वै डॉ० आइन्स्टीन से तीसरे विश्वयुद्ध के शस्त्रास्त्रो के बारे मे पूछ तो उन्होने उत्तर दिया, "मै नही जानता। किंतु मैं जानता हू वि विश्वयुद्ध के शस्त्रास्त्र क्या होंगे—चट्टाने ।"

लबे चलनेवाले सम्मेलनो और 'शिखर सम्मेलनो' ने विश्व- कायम नही किया जा सकेगा । अतत जब राष्ट्र राष्ट्रवाद की कल्पना का विकास करेंगे और विश्व-सस्था के अनुशासन को खुशी से स्वीकार करेंगे तभी शाति और सहयोग का वातावरण पै सकेगा । ११ जून १९६३ को सयुक्त राष्ट्र-सघ की साधारण स विशेष अधिवेशन मे बोलते हुए डॉ० राधाकृष्णन् ने कहा था कि " को विश्व-व्यवस्था के लिए अपनी प्रभुसत्ता का एक अश द चाहिए और अपने मतभेदो का समाधान सधि-चर्चा द्वारा चाहिए ।" इसलिए हर देश के नागरिको को अब दूसरे प्रकार की ' नागरिकता' का विकास करना चाहिए, जिसके अनुसार प्रत्येक राष से अधिक राष्ट्रो से सबध रखनेवाले मामलो मे अतर्राष्ट्रीय सग अनुशासन को मानने के लिए तैयार होगा । हम आशा करते भविष्य मे दुनिया के प्रमुख राष्ट्र ऐसी विश्व-सरकार की रू बनायगे जो स्थायी शाति का मार्ग प्रशस्त करेगी और मानवता व युद्ध के भय से मुक्ति प्रदान करेगी ।

राष्ट्रवाद और अंतर्राष्ट्रीयवाद

जब हम अतर्राष्ट्रीयवाद और विश्वशाति की चर्चा करते है तो यह अर्थ नही कि हम राष्ट्र के रूप मे सोचना बद कर देते है । कि बार-बार कहा गया है, भारत मे हमको ऐसा उदार रा विकसित करने की कोशिश करनी चाहिए जो अतर्राष्ट्रीय सहय अनुकूल होगा । नेहरूजी ने कहा है, "राष्ट्रवाद का हर देश मे स और उसे पुष्ट किया जाना चाहिए । किंतु वह आक्रामक नही चाहिए और अतर्राष्ट्रीय विकास के मार्ग मे बाधक भी नही

चाहिए ।" राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन् ने अपने गणराज्य-दिवस के सदेश मे कहा है, "हमारे सामने यह विकल्प नही है कि हम राष्ट्रवाद अथवा अतर्राष्ट्रीयवाद दोनो मे से किसको स्वीकार करे । अतर्राष्ट्रीयवाद वड़ा आदर्श है, जो हमारी राष्ट्रवाद की कल्पना से मेल खाता है ।" महात्मा गाधी ने इसी विचार को अपने ही अर्थभरे शब्दो मे यो प्रकट किया है, "मैं अपने घर के चारो ओर दीवारे खडी नही करना चाहता और न अपनी खिडकियो को वद करना चाहता हू । मैं चाहता हू कि सब देशो की सस्कृतियो की वायु पूरी स्वतत्रता के साथ मेरे घर के आस-पास वहे । किंतु मैं उनमे से किसी को अपने पाव नही उखाडने दूगा ।"

समाजवाद और युद्ध

यह वास्तव मे दु खजनक है कि जब अमरीका और रूस सहित सारी दुनिया एक विश्व की ओर आम निश्शस्त्रीकरण तथा आणविक युद्ध को समाप्त करने के वारे मे गभीरता से सोच रही है, उस समय चीनी नेता साम्यवाद अथवा समाजवाद के प्रसार के लिए "युद्ध अनिवार्य है" इस सिद्धात की जोरो से हिमायत कर रहे है । वे समाजवादी जगत और साम्राज्यवाद के बीच क्रातिकारी सघर्ष द्वारा आमूल-चूल तस्फिया कर लेना चाहते है । रूस के भूतपूर्व प्रधान-मत्री श्री ख्रुश्चेव और पूर्वी यूरोप के करीव-करीव सभी साम्यवादी देशो के नेताओ ने चीनी नेताओ की कडी आलोचना की थी । श्री ख्रुश्चेव ने क्यूबा के प्रधान-मत्री श्री कास्ट्रो के सम्मान मे क्रेमलिन मे आयोजित समारोह मे कहा था, "अगर कोई कहता है कि क्राति के लिए युद्ध जरूरी है तो उसका उत्तर यह होगा कि युद्ध मे श्रमिक ही सबसे अधिक मरते है । यह पागलो का प्रलाप है । मार्क्सवाद—लेनिनवाद के साथ उसका कोई सरोकार नही है ।" रूसी और चीनी नेताओ मे मतभेद की खाई आज भी उतनी ही चौडी है । यह अर्थ-सूचक है कि मार्क्स और एजेल्स भी मानते थे कि "युद्ध आतरिक क्रातिकारी आदोलनो के विकास मे बाधक होता है और आतरिक प्रगतिशील शक्तियो पर रोक लगाता है ।" वे युद्ध-विरोधी और निश्शस्त्रीकरण पक्षपाती सघर्ष को लोकतत्र और समाज-

वाद के लिए होनेवाले संघर्ष का मूलभूत अंग मानते थे।

चीन ने भारत पर जो अकारण आक्रमण किया, उससे सारी दुनिया के अंत:करण को आघात पहुचा। हिंसा और युद्ध के द्वारा उसकी विस्तार-वादी नीति का साम्यवादी नेताओं तक ने कड़ी और स्पष्ट भाषा मे खडन किया है। यह खेद का विषय है कि चीन की नीति मे कोई परि-वर्तन नही हुआ है और उसने हाल के भारत-पाक संघर्ष मे टाग अड़ाने और स्थिति को पेचीदा बनाने की कोशिश की थी। चीन चाहता है कि एशिया के इस भाग मे गड़बड़ी और उथल-पुथल हो, ताकि उसे अपना प्रभाव बढाने का अवसर मिले। और इस प्रकार चीन विश्व-शाति और विश्व-मैत्री के लिए खतरा बना हुआ है। किंतु हम आशा करते है कि अत मे चीनी नेताओ मे सुबुद्धि का उदय होगा और वे समाजवाद के हित मे उल्टी राह का परित्याग कर देगे।

८

कार्यक्रमों पर अमल की समस्याएं

कृषि और उद्योग के क्षेत्र मे विकास-कार्यक्रम समाजवादी आदर्शो की दृष्टि से हमारी राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था को प्रभावित करने मे उसी अवस्था मे सफल हो सकते है, जब उन पर लक्ष्यो के अनुपात मे अमल किया जाय और अतिरिक्त उत्पादन भौतिक साधनो और लगी हुई पूजी के अनुपात मे हो। यह साफतौर से स्वीकार करना होगा कि आयोजन और अमल, नीति और प्रशासन के बीच दृष्टव्य खाई रही है। डा० देशमुख ने कहा है, "जहा व्यावसायिक प्रशासन मे सुधार हो रहा है, वहा राज्य-प्रशासन की हालत खराब हो रही है।" इसलिए यह जरूरी है कि इस कमी को, विशेषकर हमारी सीमाओ पर उत्पन्न सकट की स्थिति को देखते हुए, जल्दी-से-जल्दी दूर किया जाय।

सिंचाई और बिजली

कृषि के क्षेत्र मे, बहुद्देश्यीय नदी-घाटी-योजनाओ से सिंचाई और बिजली के मामले मे अबतक हम पर्याप्त लाभ प्राप्त नही कर पाये हैं। तीसरी योजना के अततक बडी और मध्यम आकार की सिंचाई परियोजनाओ के लिए राज्य सरकारो के नाम केंद्रीय ऋण की राशि १४५० करोड रुपया, छोटी सिचाई परियोजनाओ के लिए करीब ५०० करोड रुपया और जल-विद्युत एव अन्य विद्युत परियोजनाओ के लिए १८३० करोड रुपया हो जायगी। वर्तमान मे सिचाई और विद्युत परियोजनाओ के सचालन मे काफी घाटा हो रहा है और उसकी पूर्ति राज्य सरकारो के राजस्व के खातो से होती है। जैसा कि स्वर्गीय श्री वी० टी० कृष्णमाचार्य ने कहा था, यह स्थिति अनिश्चित कालतक जारी नही रह सकती। उन्होने लिखा है, "सिचाई और विद्युत प्रणा-

लियो को राज्य सरकारो और विद्युत मडलो को इस तरह चलाना चाहिए कि उनको ठीक हालत मे रखते हुए मुनाफा हो, जिससे ऋणो का सूद दिया जा सके और घिसाई-कोष का भी निर्माण हो सके। सिंचाई और बिजली के व्यावसायिक आधार पर अलग हिसाब रखे जाय और उन्हे प्रति वर्ष विधान सभा के सामने रखा जाय और उस पर चर्चा हो। राज्य सरकारो की वार्षिक योजनाओ को जब योजना-आयोग के सामने रखा जाय, उस समय यह सिंहावलोकन उनका अग होना चाहिए।"

सिंचाई-सुविधाओ के पूरे उपयोग की समस्या देश के सामने उपस्थित है और उस पर तुरत ध्यान देने की आवश्यकता है। अगर किसान आवश्यक खेतो की नालिया खोद लेते है तो यह अनुमान किया जाता है कि वर्तमान बडी और मध्यम आकार की सिंचाई परियोजनाओ से करीब ३० लाख एकड अतिरिक्त भूमि मे सिंचाई हो सकती है। योजना-आयोग राज्य सरकारो से अनुरोध करता आ रहा है कि वे किसानो से उनके परपरागत दायित्वो का पालन कराने के लिए आवश्यक कानून बनाये। पिछले दिनो, योजना और सबधित केद्रीय मत्रालयो के वरिष्ठ अधिकारियो के दल राज्यो मे गये थे। उनका उद्देश्य था कि सकट-काल के कारण जो अनुकूल वातावरण पैदा हुआ है, उसका लाभ उठा कर खेतो की नालिया तेजी से खुदवाई जाय। हमे निश्चित आशा है कि स्थिति मे सतोषजनक सुधार होगा।

साम्प्रदायिक-विकास-आंदोलन

सामुदायिक-विकास-आदोलन को कृषि उत्पादन बढाने के अपने आर्थिक लक्ष्य की पूर्ति मे जुट जाना चाहिए। पचायती-राज का बुनियादी लक्ष्य यह है कि हमारे करोडो किसान नकदी और खाद्यान्नो की फसलो मे खेती का उत्पादन बढाने मे हाथ बटाये। यह देखा गया है कि अनेक स्थानो मे पचायत-सस्थाए ग्राम-उत्पादन योजनाओ की अपेक्षा प्रशासनिक समस्याओ पर अधिक ध्यान देती है। राज्य सरकारो को इस प्रवृत्ति पर निरतर अकुश लगाना चाहिए, अन्यथा इस क्रांतिकारी कार्यक्रम को शुरू के करने के

वांछित परिणाम लाने का सारा उद्देश्य ही विफल हो जायगा।

पिछले दिनो, सकटकालीन स्थिति को ध्यान मे रखते हुए भारत सरकार ने ग्राम स्वयसेवक दल का देशव्यापी कार्यक्रम शुरू किया। उस योजना का भी बुनियादी लक्ष्य कृषि-पैदावार बढाने के काम में देहातो की जन-शक्ति का उपयोग करना है। यदि शुरू से ही उचित ध्यान नही दिया गया तो यह कार्यक्रम भी नागरिक सुरक्षा और शारीरिक प्रशिक्षण के अधिक दिखाऊ पहलुओ पर ध्यान देकर अपने रास्ते से भटक सकता है। सरकार ने यह निश्चय किया है कि ग्रामसेवको अथवा ग्रामीण कार्यकर्त्ताओ का सारा समय और शक्ति कृषि-पैदावार कार्यक्रमो मे खर्च हो। विकास-कर्मचारियो की कार्य-सूची मे सशोधन करके और परिणामो पर नियत्रण रखकर और उनका मूल्याकन कर इस आदेश पर विस्तार से अमल किया जाय।

स्थानीय आयोजन

कृषि-आंकड़े

सामुदायिक विकास खड की सफलता का अनुमान और मूल्याकन करने के रास्ते मे एक मुख्य कठिनाई यह रही है कि हर वर्ष के विकास-खडीय और ग्राम-स्तरीय कृषि-पैदावार के विश्वस्त आकडे नही मिलते। इस समय, जिला-स्तरीय-उत्पादन के आकडे ही उपलब्ध है। और फल-स्वरूप सामुदायिक विकास-खडो के कर्मचारियो के अच्छे-बुरे या साधारण कामो का मूल्याकन नही किया जा सकता। योजना-आयोग ने खाद्य और कृषि मत्रालय, सामुदायिक विकास और सहकारिता मत्रालय और केद्रीय-अक-सगठन की सहायता से एक ऐसी व्यावहारिक योजना बनाई है जिसके द्वारा हर विकास-खड और यदि सभव हो तो हर गाव की मुख्य फसलो के विश्वस्त उत्पादन-आकडे उपलब्ध हो सकेंगे। वर्तमान ग्रामसेवको, पटवारियो और विस्तार कर्मचारियो को फसल कटाई की तकनीक का व्यापक पैमाने पर प्रशिक्षण देकर यह उद्देश्य सिद्ध किया जा सकेगा। एक बार योजना पर अमल शुरू हो गया कि सामुदायिक-विकास-आदोलन मे फुर्ती की भावना उत्पन्न हो जायगी और सरकारी एव गैर सरकारी दोनो प्रकार के कर्मचारी अपनी-अपनी जिम्मेदारियो को अधिक गभीरतापूर्वक निभाने को बाध्य होगे। तब, व्यक्तिगत अधि-कारियो की जिम्मेदारी स्थिर की जा सकेगी और समुचित कार्रवाई की जा सकेगी।

मूल्य-नीति

तीसरी पचवर्षीय योजना का एक पूरा अध्याय मूल्य-नीति के सबध मे है, विशेषकर उसमे कृषि मूल्यो की चर्चा की गई है। उसमे कहा गया है, "उत्पादको को पूरा भरोसा होना चाहिए कि पैदावार बढाने के लिए जो अतिरिक्त परिश्रम और पूजी विनियोजन करना होगा, उसका उन्हे पर्याप्त प्रतिफल मिलेगा।" योजना की अवधि मे महत्वपूर्ण खाद्यान्नो और नकद फसलो—चावल, गेहू, कपास, गन्ना, पटसन-की न्यूनतम लाभदायक कीमत मिलने का आश्वासन पैदावार बढाने के लिए आवश्यक प्रेरणा देगा। यह निर्णय किया गया है कि सरकार विभिन्न

फसलो को किस कीमत पर खरीदेगी, इसकी घोपणा बुआई के मौसम से बहुत पहले कर देनी चाहिए। बहुत से कदम उठाये गये है, खास कर पटसन के सबध मे, और उनके सतोषजनक परिणाम आये है।

खाना, कपडा और अन्य आवश्यक उपभोक्ता सामग्री की कीमते उचित स्तर पर स्थिर करने के लिए तीसरी योजना मे पर्याप्त सचित भंडार बनाने पर जोर दिया गया है। इन भडारो का उपयोग समय-समय पर किसानो और शहरी उपभोक्ताओ के हितो की रक्षा करने मे किया जा सकता है। जब खाद्यान्नो की कीमते लाभदायक स्तर से नीची जाय तो भडार-सग्राहक-एजेसी को बाजार मे आकर अनाज की खरीद करना चाहिए और जब कीमते अनुचित रूप से बढने लगे तो उसी एजेसी को कीमतो के स्तर को गिराने के लिए अपना माल बाजार मे बेचना शुरू कर देना चाहिए। तीसरी योजना का कहना है, "यह खरीद-बिक्री की कार्रवाई लचीले ढग से और अनेक स्थानो पर होनी चाहिए, ताकि जहा जरूरी हो, वहा उसका प्रत्यक्ष असर पडे।"

भडार बनाने की योजना के लिए स्वभावत सरकार के सीधे नियत्रण मे पर्याप्त गोदामो की आवश्यकता होगी। तीसरी योजना की अवधि मे, केद्रीय सरकार की माल को जमा रखने की क्षमता करीब ५० लाख टन करने का लक्ष्य स्थिर किया गया है। इसमे से ३५ लाख टन के लिए सरकार अपने गोदाम बनायगी और शेप के लिए स्थान किराये पर लेगी। इसके अलावा, क्रय-विक्रय सहकारी सस्थाओ और प्राथमिक सस्थाओ के गोदामो की क्षमता करीब २० लाख टन हो जायगी।

केद्रीय और राज्यो के गोदाम-निगम भी प्रति वर्ष अपनी क्षमता बढा रहे है। किंतु यह चिता का विषय है कि इन गोदाम-निगमो के ८० प्रतिशत स्थान का उपयोग किसान और उनकी क्रय-विक्रय सहकारी सस्थाए नही करते, जिनके लिए कि उसका निर्माण हुआ है, बल्कि निजी व्यापारी करते है। इस कमी को जल्दी-से-जल्दी दूर करना आवश्यक है, ताकि किसानो को अपनी पैदावार की अच्छी कीमत मिल सके और बिचौलिये बीच से हट जाय। चावल और गेहू के सग्रह की मात्रा भी काफी बढाने की आवश्यकता है।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने १० जनवरी १९६२ को भुवनेश्वर अधिवेशन मे 'लोकतत्र और समाजवाद' पर जो प्रस्ताव स्वीकार किया है, उसमे कम आयवाले वर्गों और गरीव वर्गों के महत्वपूर्ण हितो की रक्षा करने के लिए आवश्यक वस्तुओ की कीमतो को नियत्रित करने पर उचित जोर दिया गया है। उसमे यह ठोस सिद्धात भी प्रतिपादित किया गया है, "समाज के व्यापक हितो के लिए आवश्यक होने पर ही नियत्रण लागू किये जाय।" प्रस्ताव का कहना है, "कार्य-कुशल और ईमानदार प्रशासन के द्वारा और जन-सहयोग हासिल करके नियत्रणो के अमल को सफल बनाने की हर कोशिश की जानी चाहिए।"

भारत सरकार ने खाना, कपडा और दूसरी चीजो की कीमते स्थिर करने के लिए अनेक कदम उठाये हैं। इसमे सचित भडार बनाने, थोक व्यापार को नियत्रित करने, मूल्य-सूची प्रदर्शित करने और उपभोक्ता एव विभागीय बिक्री भडार कायम करने आदि बातें शामिल हैं। किंतु यह मानना होगा कि ये उपाय स्थिति का भली प्रकार मुकाबला करने मे समर्थ नही हुए है। इस दिशा मे कही अधिक प्रयत्न करने होगे और आवश्यक होने पर भारत-रक्षा नियमो का उपयोग करने मे भी संकोच नही करना होगा। थोक व्यापार का समाज के हित मे कडाई के साथ नियत्रण और नियमन करना होगा।

प्रगतिशील किसानो का योग

यद्यपि भारत मे कुछ महत्वपूर्ण खाद्यान्नो और नकद फसलो का उत्पादन करीब-करीब दुनिया मे सबसे कम है, किंतु देश के विभिन्न क्षेत्रो मे प्रगतिशील किसानो ने अधिकतम पैदावार करके दिखाई है। इसलिए यह आवश्यक है कि विभिन्न प्रगतिशील किसानो के मूल्यवान अनुभव को हमारे लाखो-करोडो किसानो मे लाभदायिक रीति से फैलाया जाय। योजना-आयोग के कृषि विशेषज्ञ दल के आदेश पर हमारे किसानो के परिपक्व अनुभव को विकास-खडो और जिलो मे और विभिन्न राज्यो मे भी फैलाने की एक योजना बनाई गई है।

आवश्यक सामग्री की उपलब्धि

बेशक, कृषि-क्षेत्र मे हमारी विकास योजनाओ की सफलता के लिए यह बहुत जरूरी है कि किसानो को समय पर ऋण, बीज, खाद्य और सिंचाई तथा पौध-सरक्षण की सुविधाए दी जाय। इसके लिए विभिन्न स्तरो पर प्रशासन की मशीनरी को चुस्त बनाना होगा। राज्यो के कृषि और सामुदायिक विकास-मत्रियो की सयुक्त कांफ्रेंस द्वारा नियुक्त उच्च स्तरीय कार्यकारी दल ने किसानो को ज्यादा अच्छी मदद देने के लिए समन्वित प्रशासन तत्र की स्थापना के बारे मे मूल्यवान सुझाव दिये है। इनमे से अनेक सिफारिशो को राज्य-सरकारे कार्यान्वित कर चुकी हैं।

केंद्रीय सरकार ने पिछले दिनों एक कृषि-उत्पादन-बोर्ड नियुक्त किया है। उसमे सबधित केंद्रीय मत्रालयों और योजना-आयोग के प्रतिनिधि हैं। यह कृषि-कार्यक्रमों की प्रगति का सिंहावलोकन करेगा और कठिनाइयो और बाधाओ को दूर करेगा, विशेषकर किसानो को जरूरी चीजे पाने मे जो दिक्कत पेश आती है, उसे हल करेगा। बोर्ड के अध्यक्ष केंद्रीय खाद्य और कृषि मत्री है। उसने जोरो से काम शुरू कर दिया है और आशा है वह भारतीय कृषि को पुरानी लीक से बाहर लाने मे महत्वपूर्ण योग देगा।

मानवी तत्त्व

और अतिम, किंतु जरूरी बात यह है कि हमे अपने आयोजन में किसी भी मजिल पर कृषि-उत्पादन के सबध मे मानवी तत्त्व को नजर-अदाज नही करना चाहिए। हम किसानो को उत्पादन बढाने के लिए अच्छे बीज, खाद, ऋण, सिंचाई की, और दूसरी सुविधाए दे सकते हैं, किंतु हम तबतक किसान में अपने उत्पादन-कार्य के प्रति 'उत्साह की चमक' नही देख सकेंगे जबतक कि अपनी खेती की जमीन पर उसका और उसके परिवार का अधिकार नही होगा। खेती का यही मनोवैज्ञानिक और मानवी पहलू है, जो खेती की पैदावार बढाने की समस्या

के सतोपजनक हल की कुजी है । इस दृष्टि मे, भूमि-सुधारो पर शीघ्रता से अमल होना तथा भूदान, ग्रामदान और कानून के जरिये जोतनेवालों मे भूमि को न्यायोचित रीति से बाटना निर्णायक महत्व रखता है और इस कार्य को कृषि के समाजवादी आयोजन मे सर्वोच्च प्राथमिकता मिलनी चाहिए। यह मानवी पहलू बीज और खाद सुलभ करने के स्थूल काम जितना प्रत्यक्ष भले ही प्रतीत न हो, किंतु भारत तथा एशिया और अफ्रीका के अन्य विकासोन्मुख देशो के खाद्य मोर्चो पर स्थायी सफलता हासिल करने के लिए बहुत जरूरी है।

राजकीय उद्योग

उद्योगो के क्षेत्र मे, तीसरी योजना ने राजकीय उद्योगो की सचालन कार्यकुशलता मे सुधार लाने के लिए अनेक सुझाव दिये हे । इस्पात, खनिज और इजीनियरी मे मत्रालय ने अलग-अलग उद्योगो को पहले से अधिक स्वय प्रेरणा और जिम्मेदारी सौंपने के लिए अनेक निर्णय किये है और वित्तीय कार्य-विधियो को सरल बनाया है ताकि उद्योग जल्दी से कार्रवाई कर सके । यह तय किया गया है कि इन उद्योगो के मुख्य प्रबधको को काफी समय तक अपने पदो पर बने रहने दिया जाय, जिससे उनकी कार्यकुशलता उनकी सफलता या विफलता के आधार पर आकी जा सके । इन उद्योगो से यह भी आशा की जाती हे कि वे खासा-अच्छा मुनाफा कमाये । मुनाफे की यह राशि इन उद्योगो के भावी विकास और विस्तार मे खर्च की जा सकती है और उससे पचवर्षीय योजनाओ के लिए राष्ट्रीय साधनो के कोष मे भी काफी वृद्धि हो सकती है ।

प्रशासकीय कार्य-कुशलता सुधारने की क्रिया एक सतत क्रिया है और उसके वेग को तभी कायम रखा जा सकता है जब हर उद्योग के कार्य-कलाप का उचित मूल्याकन किया जाय। योजनातर्गत परियोजना समिति कुछ वर्षो से यह काम काफी सफलता के साथ कर रही हे । सार्वजनिक हिसाब समिति और प्राक्कलन समिति के समान ससद ने राजकीय उद्योगो के कार्य-सचालन की सूक्ष्म समीक्षा और मूल्याकन

करने के लिए एक विशेष कमेटी नियुक्त की है। हमे अपने औद्योगिक विकास से सबधित तकनीकी सगठनो को मजबूत बनाने की आवश्यकता है। हमे बडे राजकीय और निजी उद्योगो में लागत निर्धारण-पद्धति जारी करनी होगी, ताकि उत्पादन के सामान्य नियमो और मानदडो का पालन करके कार्य-सचालन मे कुशलता लाने के लिए अधिक जागरूकता पैदा की जा सके। श्री आर० एच० टॉनी के शब्दो मे "लागत और मुनाफे का विवरण प्रकाशित करने का आग्रह रखा जाय तो उसका अच्छा असर होगा। क्योकि प्रकाशन आर्थिक और राजनीतिक बुराइयो की अच्छी दवा सिद्ध होगी।" डॉ० रॉबसन लिखते है, "जन-सपर्क की कला अगर पूर्णतया विकसित हो तो वह इन राजकीय उद्योगो और सेवाओ के सचालन मे अतत अत्यत महत्वपूर्ण योग दे सकती है।"

लेखा-जोखा : एक तुलना

राजकीय क्षेत्र में चलनेवाली कपनियो के वित्तीय परिणामो के बारे में मोटा लेखा-जोखा निकालना और उनकी निजी क्षेत्र की कपनियो से तुलना करना लाभदायक होगा। योजना-आयोग ने ३१ केंद्रीय सरकार की और २२ राज्य-सरकारो की औद्योगिक और खनिज कपनियो का अध्ययन किया है। नतीजो से पता चलता है कि २६ कपनियो ने पूजी पर २ प्रतिशत से २६ प्रतिशत तक मुनाफा कमाया। रिजर्व बैंक ने हाल में निजी क्षेत्र की १००१ कपनियो की पूजी पर मुनाफे की दर का विश्लेषण किया था। उससे पता चला कि सन् १९६०-६१ में इन कपनियो का औसत मुनाफा १० प्रतिशत रहा। इस तुलना से मालूम होता है कि जहा सुस्थापित सरकारी कपनिया निजी कपनियो के औसत मुनाफे की तुलना मे ज्यादा मुनाफा कमा रही थी, वहा नये सरकारी उद्योगो को बहुत थोडा मुनाफा हुआ।

यह भी ध्यान मे रखना होगा कि रिजर्व बैंक के अध्ययन में शामिल निजी कपनिया काफी लबे समय से काम कर रही थी। उनकी वर्तमान स्थायी सपत्ति ऐसे समय हस्तगत की गई, जब भूमि, इमारती सामान, यत्र और साजो-सामान की कीमते बहुत कम थी। इसके विपरीत, अधिकाश

सरकारी कपनियो की स्थायी सपत्ति वढी हुई कीमतो पर हाल के वर्षो मे प्राप्त की गई है। इसके अलावा रिजर्व वैक के अध्ययन मे निजी कपनियो का पूर्ण प्रतिनिधित्व नही हुआ है। उसमे वडी और मध्यम आकार की १००१ कपनिया शामिल थी, जव कि निजी क्षेत्र मे ३१ मार्च १९६० को कपनियो की सख्या २६,७९६ थी। वास्तव मे रिजर्व वैक के अध्ययन मे निजी क्षेत्र की चुनी हुई अच्छी कपनियो को शामिल किया गया। यदि उसमे सारे निजी क्षेत्र का ठीक-ठीक प्रतिनिधित्व करनेवाली कपनियो को शामिल किया जाता तो उनके कारोवार के परिणाम कम सन्तोपजनक ही निकलते।

सक्षेप मे, निजी और राजकीय क्षेत्रो मे लगी पूजी पर मुनाफे की दर सवधी आकडो की आसानी से तुलना नही की जा सकती। फिर भी यह जाहिर है कि अनेक राजकीय उद्योगो ने प्रारभिक कठिनाइयो और वाधाओ के वावजूद अच्छी सफलता प्राप्त की है। और भी सुधार की हमेशा ही काफी गुजाइश रहती है और हमे उदासीनता की भावना नही आने देना चाहिए और प्रयत्नो को ढीला नही करना चाहिए। भारत की मिश्रित अर्थ-व्यवस्था के अतर्गत राजकीय और निजी दोनो ही क्षेत्रो मे प्रगति करनी होगी। उन्हे स्वस्थ प्रतिस्पर्धा और अनुकरण की भावना के साथ अपनी कार्यकुशलता को वढाने की निरतर कोशिश करनी चाहिए।

श्रम-नीति

किंतु विभिन्न औद्योगिक परियोजनाओ का सफल सचालन वडी हद तक ठोस श्रम-नीति पर निर्भर करेगा। अधिक उत्पादन तभी सभव होगा, जव मजदूर-सघो और उद्योग-सचालको के सवध मधुर रहे। इस दृष्टि से, गत पाच वर्षो से एक अनुशासन सहिता पर अमल किया जा रहा है। इसे मालिको और मजदूरो के केद्रीय सगठनो ने स्वेच्छा से स्वीकार किया था। आचार-सहिता प्रवधको और श्रमिको के लिए निश्चित दायित्व निर्दिष्ट करती है। उसके अनुसार हडतालो और मुकदमे-वाजी से वचना चाहिए और शिकायतो और विवादो का निपटारा

पारस्परिक सधिचर्चा, बीच-बचाव और स्वेच्छिक पच-फैसले से करना चाहिए और इस प्रकार मालिको और मजदूरो के प्रतिनिधियो में सभी स्तरो पर रचनात्मक सहयोग की स्थापना की जानी चाहिए ।

जहा निजी और राजकीय दोनो क्षेत्रो मे प्रबधको को मजदूर वर्ग का सहयोग हासिल करने की दृष्टि से अनुकूल वातावरण बनाने की अनिवार्य आवश्यकता पूरी तरह अनुभव करनी चाहिए, वहा मजदूर-सघो को भी अपने सदस्यो को यह कठोर आर्थिक सत्य समझाना चाहिए कि अधिक उत्पादन होने पर ही अधिक मजदूरी मिल सकेगी । मजदूरी और उत्पादन के मध्य यह महत्वपूर्ण सबध जोडे बिना देश मे आर्थिक विकास की रफ्तार को तेज करना असभव होगा । औद्योगिक प्रतिष्ठानो में उचित अनुशासन उसी दशा मे कायम रखा जा सकेगा जब मजदूर अपने अधिकारो के साथ-साथ उत्पादन का उच्च-स्तर कायम करने की बुनियादी जिम्मेदारियो को भी पूरी तरह अनुभव करेगे । इसके लिए यह बिल्कुल जरूरी है कि व्यक्तिगत अथवा समूहगत बोनस दिये जाय और जहा सभव हो, काम के हिसाब से मजदूरी देने की प्रथा जारी की जाय ।

जहातक उद्योगो के प्रबध मे मजदूरो को शामिल करने का प्रश्न है, कुछ राजकीय उद्योगो ने प्रशासन के साथ मजदूर सघो को सबद्ध करने की दिशा मे कदम उठाये है । किंतु यह अनुभव करना होगा कि उद्योगो के प्रबध के साथ श्रमिक वर्ग का सपर्क तभी यथार्थ और व्यावहारिक होगा जब मजदूरो का औद्योगिक ईकाई के हानि-लाभ मे प्रत्यक्ष हिस्सा होगा । यदि उद्योग की पूजी मे धीरे-धीरे मजदूर वर्ग का भी हिस्सा हो तो जिम्मेदारी की यह भावना पैदा की जा सकती है । पहले कदम के रूप मे विशेष बोनस या वेतन वृद्धि की राशि स्थायी कर्मचारियो को कपनी के साधारण शेयरो के रूप मे दी जा सकती है । प्रारभिक अवस्थाओ मे प्राप्त अनुभवो के अनुसार मजदूरो द्वारा कपनियो की शेयर पूजी मे हिस्सा लेने की क्रिया को धीमे-धीमे आगे बढाया जा सकता है ।

हाल के वर्षो मे, ब्रिटेन और जर्मनी मे उद्योग का स्वामित्व व्यक्तिगत

व्यवसायियो के पास से कपनी के काम में भाग लेनेवाले सभी व्यक्तियों को सौपने के कुछ प्रयोग किये गए है। एक प्रशसनीय उदाहरण है स्काट वाडर एड कपनी का। यह इग्लैड की रासायनिक निर्माता-कपनी है। इसने स्वामित्व की 'विवियतापूर्ण अनेकातिक' कल्पना विकसित करने का प्रयास किया है और उसका उद्देश्य पूजी सग्रह की क्रिया को सामाजिक रूप देना है। इन प्रयोगो की प्रगति को निश्चय ही हम सब दिलचस्पी से देखेगे।

कभी-कभी यह सोचा जाता है कि उद्योगो को क्रमिक सहकारी रूप देने से कर्मचारियो की आर्थिक दशा अपने-आप सुधरेगी। यह ठीक खयाल नही है। अनेक सहकारी उद्योगो मे भी प्राय पूजीपति-कारखानो के समान ही मजदूरो का शोषण होता रहता है। इसलिए यह जरूरी है कि सहकारी उद्योगो मे भी मजदूरो को पूजी और प्रबध दोनो मे साझेदार बनाना चाहिए, जैसा कि ब्रिटेन के मजदूर नेता फेनर ब्राकवे का कहना है, "किसी उद्योग मे और उसकी आय मे जब छोटे-से-छोटे मजदूर का न्यायोचित हिस्सा होगा, तभी उसे सहकारी उद्योग कहा जा सकेगा और वह समाजवादी नमूने का उद्योग होगा।"

निर्माण मे किफायत

तीसरी योजना ने निर्माण मे किफायत पर काफी जोर दिया है और इस लक्ष्य को सिद्ध करने के लिए विस्तृत सुझाव दिये है। किंतु यह गहन चिंता का विषय है कि इस दिशा मे अधिक प्रगति नही हुई है। कृषि, उद्योग परिवहन, सचार और सामाजिक सेवाओ के क्षेत्रो मे विभिन्न प्रकार के निर्माणो पर कुल लागत का करीब ४० प्रतिशत खर्च होता है और इसलिए यह बहुत जरूरी है कि इमारतो, सडको, कारखानो, बाधो और अन्य परियोजनाओ के निर्माण-व्यय को कम करने के लिए विशेष कदम उठाये जाय।

गत दशाब्दि मे देश मे विकास-कार्यक्रमो के वेग ने ठेकेदारो के एक नये वर्ग को जन्म दिया है जिसने आर्थिक विषमताओ और आर्थिक शक्ति के केंद्रीयकरण को कम करने के बजाय बढाया ही है। योजना-आयोग

ने इसलिए सारे देश मे बडे पैमाने पर मजदूर सहकारी समितिया सगठित करने का आग्रह किया है। भारत सेवक समाज नाम-मात्र के मुनाफे पर विभिन्न निर्माण कार्यो में ठेका लेकर इस क्षेत्र मे मूल्यवान सेवा करने की कोशिश कर रहा है। आशा है, विभिन्न स्तरो पर अमल करनेवाले सबधित अधिकारियो का हमारे विकास-आयोजन के इस पहलू पर विशेष ध्यान जायगा।

सहकारी बिक्री और वितरण

व्यापार और वाणिज्य के सबध मे यह बार-बार दोहराया गया है कि सहकारी बिक्री और सहकारी वितरण पर कही अधिक जोर दिया जाय। आज की परिस्थितियो मे बिचौलिये उत्पादन और उपभोग दोनो स्तरो पर आम लोगो को उन लाभो से वचित करते है जो आयोजन की क्रिया मे साधारणतया उन्हे मिलने चाहिए। बिचौलिया द्वारा आर्थिक शोषण के इन प्रकारो को खत्म करके और उनके स्थान पर सहकारी एजेसिया कायम करके ही समाजवादी समाज की स्थापना की जा सकती है।

यह सोचा गया है कि तीसरी योजना के अत तक सभी २५०० मडियो में किसानो के आर्थिक हितो की रक्षा करने के लिए सुगठित क्रय-विक्रय सहकारी सगठन कायम हो जायगे। आवश्यक वस्तुओ की कीमतो मे अवाछनीय वृद्धि से उपभोक्ताओ को बचाने के लिए सरकार एक लाख से अधिक आबादीवाले देश के सभी शहरो मे २०० थोक-भडार और ४००० प्राथमिक सहकारी भडार कायम करने की योजना बना चुकी है। यह भी अनुमान किया गया है कि अगले दो वर्षो में ग्रामीण क्षेत्रो मे करीब १ लाख प्राथमिक सहकारी और क्रय-विक्रय समितियां गावो की जरूरतो को पूरा करने के लिए उपभोक्ता भडार खोल देगी।

दुर्भाग्यवश, भारत अनेक कारणो से सहकारिता के क्षेत्र मे उल्लेखनीय परिणाम प्राप्त नही कर सका है। प्राथमिक सहकारी समितियो की काफी बडी सख्या मृतप्राय अवस्था में चल रही है और उन्हे सजीवित करना होगा। क्रय-विक्रय सस्थाओ के पास रुपये और प्रशिक्षित

कर्मचारियो का अभाव है । कृषि-फसलो की कीमतो मे होनेवाले उलट-फेर का सहकारी क्रय-विक्रय-कार्य की स्थिरता पर प्रतिकूल असर पडता है । किंतु हमे अर्थ-व्यवस्था के सभी क्षेत्रो मे सहकारी आदोलन को पूरे जोश और दृढ सकल्प के साथ आगे बढाना चाहिए । मुख्यत समाजवादी व्यवस्था के लिए व्यापक आधार तैयार करने के लिए कार्यकुशलता और ईमानदारी दोनो ही दृष्टियो से हमे इन्सानो को समृद्ध, प्रशिक्षित और विकसित करना होगा ।

सबसे महत्वपूर्ण काम

भारत सरकार ने प्रशासन के सबध मे एक कमेटी नियुक्त की है और मत्री-मडल के सचिव उसके अध्यक्ष है । यह उच्च-स्तरीय कमेटी विलब को टालने और विभिन्न विधियो को सरल बनाने के लिए विभिन्न समस्याओ पर विचार कर रही है । यह जरूरी है कि इस कमेटी को और भी सक्रिय बनाया जाय और वह सुरक्षा और विकास दोनो की जरूरतो को पूरा करने के लिए प्रशासन यत्र को चुस्त बनाने का प्रभावशाली माध्यम बन जाय । सक्षेप मे, केद्रीय और राज्य सरकारो के सामने सबसे महत्वपूर्ण काम यह है कि सब स्तरो पर प्रशासन कार्य-कुशल और ईमानदार हो, ताकि आयोजन और अमल की खाई को, विशेषकर कृषि और उद्योग के क्षेत्र मे, पाटा जा सके ।

भारत सरकार ने प्रशासन के मानदड को ऊचा करने के लिए अनेक कदम उठाए है । सतर्कता-आयोग की नियुक्ति से आशा है, लोगो मे प्रशासन की सामान्य ईमानदारी और कार्य-कुशलता के बारे मे पहले से अधिक भरोसा पैदा होगा । अनेक राज्य सरकारो ने भी अनेक कदम उठाए है, जिसके सन्तोषजनक परिणाम निकलेगे । किंतु योजना-आयोग का यह कथन बिल्कुल सही है, कि "कार्य का उच्चस्तर कायम करने के लिए सगठित और सतत प्रयास किया जाय, कर्मचारियो को उत्तम प्रशिक्षण दिया जाय, प्रगति का व्यवस्थित वर्णन और मूल्याकन किया जाय और प्रशासन सगठन मे काम करनेवाली एजेसिया पहले से अधिक जिम्मेदारी और स्वयं प्रेरणा का परिचय दे ।"

९

उपसंहार

पिछले अध्यायो मे जनसाधारण को पहले से अधिक सामाजिक और आर्थिक लाभ सुलभ करने के लिए भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रो मे जो विभिन्न कदम उठाये गए है, उन पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया गया है । यद्यपि अनेक दिशाओ मे उत्साहवर्द्धक परिणाम आये है, किंतु आनेवाले वर्षो मे अभी काफी मंजिल तय करनी होगी । निरुत्साह तथा निराश होने का कोई कारण नही है । साथ ही हम थककर भी नही बैठ सकते । सच्चा समाजवाद छोटे अथवा सरल रास्तो पर चलकर कायम नही किया जा सकता । नेहरूजी ने हमे बार-बार याद दिलाया था कि भारत लंबे समय तक कठिन और ठोस परिश्रम करके ही समाजवाद के लक्ष्य की ओर आगे बढ सकता है । पूंजीवादी और साम्यवादी दोनो प्रकार के देशो मे केवल कठोर परिश्रम, त्याग और कार्य-कुशलता से ही उल्लेखनीय परिणाम हासिल हुए है । कोई राष्ट्र आर्थिक चमत्कारो द्वारा प्रगति और समृद्धि के शिखर पर पहुचने की आशा नही कर सकता ।

धर्म की कल्पना

सबसे बड़ी बात यह कि भारत मे समाजवाद की स्थापना मनुष्यो को धर्म की प्राचीन कल्पना की ओर मोड़कर ही करनी होगी । दूसरे शब्दो मे लोगो मे यह भावना पैदा करनी होगी कि उन्हे निष्ठा और उत्साह के साथ समाज के प्रति अपने कर्तव्यो का पालन करना है । श्री मैक्लेलैंड आधुनिक अर्थशास्त्रियो को यह समझाना चाहते है कि "आर्थिक विकास के मूल मे कार्य करनेवाली सर्वोपरि शक्तियां यदि बिल्कुल ठीक-ठीक कहना हो तो आर्थिक क्षेत्र से बाहर है ।" ये गैर-

आर्थिक शक्तियां मानव विकास के उन पहलुओं को प्रभावित करती हैं जो सबके हित अर्थात् सर्वोदय के लिए कार्य-कुशलता, ईमानदारी, सचाई और पारस्परिक सहयोग से संबंध रखते है। श्री कासलैंड ठीक ही कहते है, "हम केवल समृद्धि के उस युग मे प्रवेश करना नही चाहते, केवल यह पाने के लिए कि हमने उन मूल्यों को गवा दिया है जो हमे उस समृद्धि का कैसे उपयोग किया जाय, यह सिखाते है।" हम समाजवादी समाज की भाषा मे सचाई के साथ चर्चा करें, उसके पहले हमे आयोजन के इस नैतिक तत्व का अत्यंत सावधानी और चितापूर्वक विकास करना चाहिए। आयोजित आर्थिक विकास में "वस्तुओ की प्रचुरता की अपेक्षा जीवन-गुणो पर जोर देना" बहुत जरूरी है।

सामाजिक और आर्थिक अनुशासन

गत दशाब्दि के अनुभव से यह पता चला है कि एक राष्ट्र के रूप मे भारत के पास उस बुनियादी सामाजिक और आर्थिक अनुशासन का अभाव-सा है जो हमारी योजनाओं की सफलता के लिए जरूरी है। जापान अभूतपूर्व प्रगति करने मे सफल हुआ है। उसके वार्षिक विकास की रफ्तार १५ प्रतिशत तक पहुची है। इसका मुख्य कारण यह है कि वह राष्ट्रीय आर्थिक अनुशासन का उच्च मानदंड कायम कर पाया है। जापान की सरकार ने अगले दस वर्षो मे अपने सामने राष्ट्रीय आय को दुगुना करने का लक्ष्य रखा है। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए वह व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा के विकास-कार्यक्रम पर अमल करेगी और बडी सख्या मे छात्रवृत्तिया देगी, ताकि आनेवाली युवा-पीढी राष्ट्र की कुशलता और निष्ठा के साथ सेवा कर सके। निश्चय ही यह आश्चर्य-जनक बात है कि जापानी समाज पराजय और तबाही के कठिन वर्षो मे एक सूत्रता कैसे कायम रख सका। निश्चय ही जापानी लोगो की स्वाभाविक शक्ति और स्फूर्ति इसके मूल मे है, जिसका उन्होने गत दशाब्दि मे विकास किया है।

संगठनगत परिवर्तन

अंतिम निष्कर्ष यह है कि आर्थिक अनुशासन तभी विकसित हो

सकता है जब वर्तमान सगठनो को सामाजिक परिवर्तन का शक्तिशाली माध्यम वना दिया जाय। उदाहरण के लिए, देश मे सहकारी और पचायत-सगठन उस समय समाजवादी व्यवस्था के दो स्तभ नही वन सकते, जबतक कि वे शक्तिशाली रूप में लोगो की समाजवादी आकाक्षाओ का प्रतिनिधित्व नही करेगे। यह स्पष्ट है कि मानवी सगठनो का यह रूपान्तर होने मे काफी समय लगेगा। फिर भी यदि हम समाज के बुनियादी आचरण को वदलने के लिए शक्तिशाली कदम उठाने का इरादा कर ले तो हम काफी जल्दी परिणाम हासिल करने की आशा कर सकते है। दूसरे शब्दो मे, आर्थिक न्याय, सहकारी प्रयास और त्याग की भावना पर आधारित सुदृढ सामाजिक कार्य द्वारा समाज-व्यवस्था मे परिवर्तन ला सकते है। यह मानना नितान्त भ्रामक होगा कि 'निजी आर्थिक शक्ति पर नियत्रण कर लेने से अपने-आप स्वतत्र और सुखी मानव-समाज की स्थापना हो जायगी।'

भारत का यह सौभाग्य है कि उसे गाधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, जवाहरलाल नेहरू और विनोवा जैसे महापुरुषो का प्रेरक पथ-प्रदर्शन प्राप्त हुआ। वर्तमान सकट ने राष्ट्रीय-निष्ठा और उत्साह को फिर से जगाने मे सहायता दी है और हमे भरोसा है कि लोग अवसर के अनुकूल ऊचे उठेगे और महान् नेताओ द्वारा स्थापित उच्च और महान् परपराओ के योग्य सिद्ध होगे। स्वतत्रता-प्राप्ति के वाद सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र मे भारत की सफलताए अनुकरणीय रही है और भविष्य के गर्भ मे और भी वडी समानताओ की आशा छिपी है।

राष्ट्रीय सुरक्षा और समाजवाद

इस समय जव भारत को अपने दो सिद्धातहीन पडोसियो के आक्रमण का मुकावला करने के लिए अपनी सुरक्षा-शक्ति वनाने का कठिन काम करना पड रहा है, कोई यह सोच सकता है कि अव समाजवादी आदर्श के अनुरूप देश के आर्थिक जीवन की योजना वनाना सभव नही रह गया है। हमारे वुद्धि-जीवियो मे एक ऐसा वर्ग है जो कहता है कि हमारी पचवर्षीय योजनाओ मे समाविष्ट औद्योगिक-नीति सवधी प्रस्ताव

को अब अलविदा कहना चाहिए और औद्योगिक तथा सुरक्षा-उत्पादन के लिए निजी क्षेत्र के साधनो को विकसित करने की हर मुमकिन कोशिश करनी चाहिए। यह कानाफूसी भी है कि भारत जैसे गरीब देश के लिए, विशेषकर युद्ध-काल मे समाजवाद का लक्ष्य एक प्रकार का शौक होगा। ये अभिमत आधुनिक-युद्धो, आर्थिक आयोजन और समाजवाद के बारे मे सर्वथा भ्रामक खयालो पर आधारित है।

आधुनिक जमाने मे, युद्ध केवल मोर्चो पर ही नही लडे जाते, खेत मे काम करनेवाले किसानो और कारखानो मे काम करनेवाले मजदूरो को मोर्चो पर लडनेवाले सैनिको की सक्रिय मदद करनी पडती है। नेहरूजी ने कहा था कि इस सकट की घडी मे हर किसान और मजदूर को अपने-आपको राष्ट्र के जीवन-मरण के सग्राम का सैनिक समझना चाहिए। समाजवादी अर्थ-व्यवस्था का एक बुनियादी लक्ष्य यह है कि कृषि और उद्योगो का उत्पादन तेज रफ्तार से बढाया जाय। स्थूल राष्ट्रीय आय को बढाने के लिए ही नही, बल्कि अर्थ-व्यवस्था के त्वरित विकास की मजबूत नीव डालने के लिए भी ऐसा करना जरूरी है। ऐसी समाजवादी व्यवस्था के विकास मे जहा निजी क्षेत्र को महत्वपूर्ण योग देना होगा, वहा जाहिर है कि राजकीय क्षेत्र का नियोजित तरीके से विस्तार होना चाहिए। उसे भारी उद्योगो की स्थापना करनी होगी और ये उद्योग विविध प्रकार के बडे, मध्यम और लघु उद्योगो के लिए अनुकूल परिस्थितिया उत्पन्न करेगे। इसलिए वर्तमान कठिनाइयो के दबाव के आगे राजकीय क्षेत्र मे ऐसे बुनियादी उद्योगो के विकास की गति को मद करना अदूरदर्शितापूर्ण और आत्मघातक भी होगा। यह सकटकाल काफी लबे समयतक रहेगा। फलस्वरूप, यह जरूरी है कि राजकीय औद्योगिक क्षेत्र को कमजोर और सकुचित करने के बजाय मजबूत और विस्तृत बनाया जाय। यह स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि अगर औद्योगिक-नीति-प्रस्ताव मे सशोधन करना ही हो तो यह होना चाहिए कि इस समय जो क्षेत्र अभी निजी उद्योगो के लिए सुरक्षित है, उनमे भी राजकीय क्षेत्र को दाखिल करने पर पहले से अधिक जोर दिया जाय। इसके अलावा, विकेद्रित सहकारी क्षेत्र को उपभोक्ता उद्योग

कायम करने के लिए अधिक सुविधाए दी जानी चाहिए ।

विनोबाजी ने अपने एक भापण मे कहा है कि आधुनिक युद्ध तीन मोर्चो पर लडे जाते है—एक लडाई का मोर्चा, दूसरा घरेलू मोर्चा और तीसरे आदर्शो का मोर्चा होता है। यद्यपि सीमाओ पर रक्षा-सेनाओ को मजबूत बनाना बहुत जरूरी होता है और घरेलू मोर्चो पर उत्पादन बढाना भी सर्वोपरि महत्व रखता है, किंतु राष्ट्रीय अर्ज-व्यवस्था को आदर्श का जामा पहनाना भी बहुत जरूरी है। समाजवादी समाज का बुनियादी लक्ष्य लोगो की सामाजिक और आर्थिक विषमताए कम करना है। इसलिए, यह जरूरी है कि हम न केवल विदेशी आक्रमण को विफल करे, बल्कि सामाजिक और आर्थिक मोर्चो पर शाति को भी जीते। ग्रामीण और शहरी दोनो क्षेत्रो मे आम जनता के मनोबल को भली प्रकार तभी कायम रखा जा सकेगा जब सामाजिक और आर्थिक न्याय और समानता के आधार पर नये भारत के निर्माण के महान् प्रयास में उसे सक्रिय साझीदार बनाया जायगा। प्रोफैसर टिटमस कहते है कि युद्ध को सफलतापूर्वक चलाने के काम मे जन-सहयोग प्राप्त करने के लिए "विपमताओ को कम किया जाय और सामाजिक विषमताओ के आधार पर निर्मित भवन को भूमिसात किया जाय।" ससद को सबोधित करते हुए राष्ट्रपति डॉ० राधाकृष्णन् ने राष्ट्र से साग्रह अनुरोध किया है कि हमे लोकतत्री और समाजवादी व्यवस्था के लक्ष्य की ओर अपनी यात्रा को मद न करते हुए विदेशी आक्रमण का सामना करना चाहिए। काग्रेस के 'लोकतत्र और समाजवाद' विषयक प्रस्ताव मे जोरो से कहा गया है, "यह बहुत जरूरी है कि हर व्यक्ति की बुनियादी जरूरतो को पूरा करने का प्रबध किया जाय और एक न्यूनतम राष्ट्रीय स्तर यथा-सभव शीघ्र कायम किया जाय। उसमे खाना, कपडा, मकान, शिक्षा और स्वास्थ्य सबधी आवश्यक जरूरतों का समावेश होना चाहिए।"

तीसरी योजना मे ऐसी अनेक योजनाए है, जिनका उद्देश्य हमारी आबादी के अपेक्षाकृत गरीब और सुविधाहीन वर्गो के जीवन-मान को उन्नत करना है। खेतिहर मजदूरो की आर्थिक दशा को कई लाख एकड भूमि को बाट कर और ग्रामोद्योगो को प्रोत्साहन देकर सुधारना होगा।

देहातो मे वेकारी और अर्द्ध-वेकारी की समस्या को ग्राम-निर्माण कार्यो के साहसिक कार्यक्रम को हाथ मे लेकर हल करना होगा, भले ही ऐसा आशिक रूप मे किया जा सके। शहरी क्षेत्रो मे गदी वस्तियो मे रहनेवालो और मजदूरो की आर्थिक अवस्था विधायक तरीके से सुधारनी होगी। गावो की अर्थ-व्यवस्था मे विविधता लाने के लिए ग्राम-उद्योगो का जाल विछाना होगा। सुपात्र किंतु गरीव विद्यार्थियो को वडी सख्या मे छात्रवृत्तिया दी जा रही ह, विशेषकर तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा पाने के लिए सहकारी आदोलन को न केवल कृषि-क्षेत्र मे, वल्कि उद्योग, व्यापार-वाणिज्य, मकान और परिवहन के क्षेत्र मे भी फैलाना होगा, ताकि छोटे किसानो और मजदूरो का विचौलिये शोषण न कर सके। ये सारे कार्यक्रम मद करने या सकुचित करने के वजाय और भी जोरो से चलाने चाहिए, जिससे समाज के दुर्वल अगो को समान अवसर मिल सके। सपत्ति के कुछ ही हाथो मे सचय को करो और अन्य लोकतत्रीय तरीको द्वारा अधिक प्रभावशाली रूप से रोकना होगा। यदि हम श्रेष्ठतर सामाजिक और आर्थिक न्याय की परिस्थितिया पैदा कर जन-साधारण का मनोवल कायम नही रखेगे और सैनिक तैयारिया करते रहेगे तो हम अपनी राष्ट्रीय रक्षा-व्यवस्था की मजवूत नीव नही डाल पायगे। अत लोकतत्रीय तरीको से भारत मे समाजवाद की गति को तेज करने के लिए हमे वर्तमान सकट का पूरा फायदा उठाना चाहिए। ससद को सवोधित करते हुए नेहरूजी ने कहा था, "लोकतत्री क्षेत्र मे, देश को पूरी ताकत के साथ समाजवादी व्यवस्था की ओर बढना चाहिए और राष्ट्र की शक्ति का उपयोग उत्पादक प्रयत्नो मे करना चाहिए। चीनी आक्रमण का लोगो ने जिस शानदार ढग से उत्तर दिया है, उसे देखते हुए हमारे लिए यह जरूरी हो जाता है कि हम न्याय करे और उन्हे सामाजिक न्याय प्रदान करे।"

सन् १९६४-६५ के भारतीय वजट मे ऐसे अनेक प्रस्ताव है जो देश को सामाजिक और आर्थिक न्याय की प्राप्ति की दिशा मे एक मजिल और आगे वढायगे। व्यक्तिगत आय-कर की दरो मे ऐसा सशोधन किया गया है कि थोडी आयवाली श्रेणियो पर कर-भार कम होगा। सपत्ति-

कर और उपहार-कर की दरो को पूर्णतया बदल दिया गया है; अधिकतम दर अब २ लाख से अधिक मूल्य की सपत्तियो पर ८५ प्रतिशत तक पहुंचेगी। प्रदर्शनात्मक उपभोग पर अकुश लगाने के लिए उपहार-कर फिर से लगाया गया है। सरकार ने भारतीय अर्थ-व्यवस्था मे एकाधिकारो और आर्थिक शक्ति के केद्रीयकरण की जाच-पडताल करने के लिए एक आयोग नियुक्त किया है। योजना आयोग द्वारा नियुक्त आय-वितरण कमेटी वर्तमान तथ्यो के आधार पर निश्चित परिणामो पर नही पहुच पाई है, इसलिए उपरोक्त एकाधिकार-जाच-आयोग की रिपोर्ट आर्थिक और औद्योगिक गठन के उन पहलुओ पर प्रकाश डाल सकेगी, जिनमे जल्दी सशोधन करने की आवश्यकता है।

समाजवाद का भारतीय रूप

अत मे, मै यह दोहराना चाहता हू कि भारतीय आयोजन मे जिस प्रकार के समाजवादी समाज की कल्पना की गई है, वह पश्चिम के लोकतत्री देशो अथवा साम्यवादी देशो मे विद्यमान किसी खास किस्म के समाजवाद की यथावत या अधी नकल नही हे। डॉ० एरहर्ड ने कहा है, "भारत का सामाजिक और आर्थिक विकास किसी अन्य देश के नमूने पर नही किया जा सकता, क्योकि, स्वय इस देश और उसके लोगो की रचनात्मक शक्ति ही उसके विकास का मार्ग निर्धारित कर सकती है।" जैसा कि पहले बताया जा चुका है, भारतीय समाजवाद ने अन्य देशो की सामाजिक और आर्थिक प्रगति की अच्छी बातो को पचाने की कोशिश की है। फिर भी उसकी जडे अपनी ही धरती मे है और वह देश की प्राचीन सास्कृतिक विरासत से प्रेरणा लेता है। हमारे आर्थिक विकास के भारतीय रूप पर जोर देते हुए नेहरूजी ने सविधान सभा को कहा था, "मै किसी बात को रद्द नही करता, किंतु मै भारत से विलग होने की बात को जरूर रद्द करता हू, मे नही चाहता कि भारत उष्ण कमरे का पौधा बने, जो उस कमरे मे तो सुदर प्रतीत हो, किंतु जिसकी जडे देश मे कही न हो।"

तीसरी योजना मे हमारी सभ्यता और सस्कृति के 'कुछ विशिष्ट तथ्यो' का जिक्र किया गया है, जो वास्तव मे "नैतिक मूल्यो का एक

समूह ही है । इन मूल्यो ने भारतीय जीवन को सदियो प्रभावित किया है, भले ही लोग उन पर चल न पाये हो ।" ये मूल्य भारतीय चिंतन के अग है । जब हम वैज्ञानिक और तकनीकी सभ्यता के प्रभाव पर विचार करते है, तब भी उन मूल्यो का अधिकाधिक महत्व स्पष्ट होता है । तीसरी योजना मे कहा गया है, "आधुनिक दुनिया मे शायद ही ऐसा कोई देश हो, जिसने गाधी जैसा व्यक्ति पैदा किया हो । रवीन्द्रनाथ ठाकुर भी किसी ने पैदा नही किया, जिनका जीवन की समस्याओ के प्रति विशिष्ट आधुनिक दृष्टिकोण था, किंतु जो साथ ही भारत की पुरानी सस्कृति और चिंतन के भी गहन अभ्यासी थे । इस प्रकार उनका सदेश दोनो के मध्य समन्वय का सदेश है ।"

भारत के आयोजित आर्थिक विकास मे जिस समाजवाद की कल्पना की गई है उसका विशिष्ट रूप यह है कि वह नये और पुराने, विज्ञान और आध्यात्मिकता, भौतिक प्रगति और नैतिक पुनरुत्थान के मध्य समन्वय करता है । जहा देश के करोडो लोगो के लिए न्यूनतम जीवन-मान हासिल करना जरूरी है, वहा कतिपय गैर आर्थिक और आध्यात्मिक मूल्यो को अपनाना भी उतना ही जरूरी है, जिसके बिना आर्थिक प्रगति शुद्ध भौतिक अर्थ मे भ्रामक और सारहीन होगी । 'लोकतत्र और समाजवाद' विषयक काग्रेस-प्रस्ताव कहता है, "केवल भौतिक समृद्धि ही मानव जीवन को समृद्ध और सार्थक नही बनायगी ।" भारतीय समाजवाद की मुख्य विशेषताओ का मूल्याकन करने के लिए दो बातो को उचित महत्व और मान्यता देना चाहिए । एक तो यह कि वह उच्च उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए अहिसा और साधनो की शुद्धि पर जोर देता है। दूसरे, उसके अतर्गत आर्थिक और राजनीतिक सत्ता को बडे पैमाने पर विकेंद्रित करने का व्यवस्थित प्रयत्न किया जा रहा है । सबसे बडी बात यह है कि भारत मे समाज ने उस सत्य से अमर प्रेरणा प्राप्त की है और सदियो करता रहेगा, जिसकी ऋषियो ने महाभारत मे अटूट श्रद्धा से घोषणा की है :

"असत्याचरण से मनुष्य फलता-फूलता है, इच्छित लाभो को प्राप्त करता है, शत्रुओ को पराजित करता है, किंतु आत्मा का हनन करता है।"

परिशिष्ठ—क

बुनियादी दृष्टिकोण

(श्री जवाहरलाल नेहरू)

हमारे सामने काफी तादाद मे घरेलू सवाल है। वे सवाल काफी नाजुक है। उनका हमे सामना करना है। लेकिन जब हम उन घरेलू सवालो पर जरा भी गौर करेगे, तो हमे काफी दूर तक सोचना पडेगा। जबतक हम अपने आपमे उन सवालो की तरह स्पष्ट नही होगे, और हममे दृष्टिकोण की स्पष्टता नही होगी, हमारा भ्रम दूर न होगा, जिसने दुनिया को दूषित कर रखा है। मै नही कहता कि मुझ मे विचारो की वह स्पष्टता, और इन बडे-बडे सवालो के जवाब मौजूद है। विनम्र भाव से मै सिर्फ इतना ही कह सकता हू कि मै इन सवालो पर लगातार सोचता जरूर रहता हू। एक तरह से मुझे उन लोगो से ईर्ष्या भी होती है, जिनके अपने निश्चित विचार है और जो मौजूदा समस्याओ की गहराई मे जाकर विचार करने की जहमत नही उठाते। चाहे वह मजहब की वजह से हो, या विचारधारा की वजह से, वे उन दिमागी संघर्षो से कतई प्रभावित नही होते, जो बडी-बडी तब्दीलियो के जमाने में हमेशा होते रहते है।

यह सही है कि कुछ निश्चित खयाल या संतोष रखना काफी आराम-देह है, लेकिन यह न कोई अच्छी बात है, और न उसकी तारीफ ही की जा सकती है। उससे सिर्फ स्थिरता और लगातार पतन ही पैदा होगा। आज की बुनियादी बात यह है कि इन्सान की जिदगी मे एक बडी तब्दीली हुई है। खुद अपनी जिदगी मे ही मैंने अजीब-अजीब तब्दीलिया देखी है, और मुझे पूरी उम्मीद है कि अगली पीढी की जिदगी मे तब्दीलिया इनसे भी बडी होगी, बशर्ते कि इन्सानियत आणविक जग से पीडित या प्रताडित नही हुई।

भौतिक दुनिया पर इन्सान के दिमाग की लगातार फतह या उसके

बारे मे उसकी पैठ से बढकर आज के जमाने मे कोई दूसरी उल्लेखनीय चीज नही और यह क्रम भयानक गति मे लगातार जारी है। अब आदमी को काफी हद तक बाहरी माहौल का शिकार होने की जरूरत नही रह गई है, हालाकि बाहरी कुदरती हालात पर इतनी फतह हासिल कर ली गई है, लेकिन, उसके साथ-ही-साथ, इन्सान मे समूचे रूप मे अपने-आप पर काबू पाने और नैतिक तत्वो की कमी का एक अजीब नजारा दरपेश है। भौतिक दुनिया पर फतह हासिल करते हुए भी वह खुद अपने-आप पर फतह पाने मे नाकामयाब रहा है।

इस आणविक और अतरिक्ष युग का यही दुखद विरोधाभास है। अणु-परीक्षण लगातार जारी है, हालाकि यह अच्छी तरह से मान लिया गया है कि मौजूदा जमाने मे और भविष्य के लिए भी यह बहुत ही नुकसानदेह है। हर तरह के सर्वनाशक हथियारो का बनाना और सग्रह करना जारी है, हालाकि दुनिया भर मे यह मान लिया गया है कि उनके इस्तेमाल से मानव-जाति का पूरा विनाश हो सकता है। यही बाते साफ-साफ इस विरोधाभास को सामने ला देती है। विज्ञान इतनी तेजी से आगे बढ रहा है कि उसे अधिकाश मानव-जाति समझ ही नही सकती और वह ऐसे मसले पैदा कर रहा है कि जिन्हे हल करने की बात तो अलग रही, हम समझने मे भी असमर्थ है। हमारे जमाने की अदरूनी कशमकश और शोर-शराबे की बुनियाद यही है। एक ओर तो विज्ञान और तकनीक शास्त्र की इतनी ज्यादा और बेकाबू कर देनेवाली तरक्की और उनके बेइतहा नतीजे है, और दूसरी ओर खुद तहजीब की कुछ दिमागी थकान है।

मजहब विवेक और अक्लमदी से टकरा रहा है। मजहबी अनुशासन और सामाजिक रिवाज मिटते जारहे है, लेकिन उनकी जगह नैतिक और आध्यात्मिक अनुशासन कायम नही हो सका है। व्यवहार मे मजहब का सबध ऐसे मामलो से है, जिनका हमारी आज की जिदगी से कोई ताल्लुक नही है। और इस तरह वह एक ऐसा नजरिया अख्तियार कर रहा है, जो हाथी-दात जैसा सिर्फ दिखावटी ही है या उसका ताल्लुक कुछ ऐसे सामाजिक रिवाजो से है, जो हमारे मौजूदा जमाने से मेल नही

भावना को पराजित कर दिया और धर्म के प्रति लोगो की श्रद्धा हटी । धर्म के प्रति आस्था कमजोर हुई तो साम्यवाद का आगमन हुआ और उसने इन्सान मे एक किस्म की आस्था और कुछ अनुशासन पैदा किया । कुछ हदतक उसने एक खाली जगह भरी । एक हदतक उसने इन्सान की जिदगी मे कुछ उद्देश्य पैदा किया । लेकिन अपनी ऊपरी कामयाबी के बावजूद, यह नाकामयाब रहा—कुछ अपनी कडाई की वजह से, लेकिन ज्यादातर इसलिए कि वह इन्सान के स्वभाव की बुनियादी जरूरतो की उपेक्षा करता है । साम्यवाद की विचारधारा मे पूजीवादी समाज के विरोधाभासो की चर्चा है, और इस विश्लेपण मे काफी कुछ सचाई भी है । लेकिन हैरत की बात तो यह है कि हमे साम्यवाद के कठोर ढाचे के भीतर भी विरोधाभसा बढते हुए नजर आरहे है । उसमे व्यक्तिगत आजादी को दबाया जाता है, जिससे जबरदस्त प्रतिक्रियाए पैदा होती है । उसमे न सिर्फ जिंदगी के नैतिक और आध्यात्मिक पहलुओ की उपेक्षा की जाती है, जो कि इन्सान की जिदगी के लिए बुनियादी बाते है, बल्कि वह मानवीय व्यवहार के लिए कोई मानदड और मूल्य भी निर्धारित नही करता । दुर्भाग्यवश, उसका हिंसा के साथ रिश्ता है, जिससे मानव-प्राणियो मे कुछ बुरी प्रवृत्ति को बढावा मिलता है ।

मै सोवियत सघ की कई कामयाबियो की तारीफ करता हू । उन बडी कामयाबियो मे एक यह है कि वहा बच्चो और जनसाधारण को काफी महत्व दिया जाता है । उनकी तालीम और स्वास्थ्य की प्रणाली शायद दुनिया मे सबसे अच्छी है । लेकिन यह कहा जाता है, और ठीक कहा जाता है, कि वहा व्यक्ति की आजादी को दबाया जाता है, लेकिन फिर भी, यह मानना पडेगा कि खुद तालीम का प्रसार अपने सभी रूपो मे आजादी देनेवाली एक जबरदस्त ताकत है, और जाहिर है कि आखिर मे चलकर यह ताकत आजादी का दमन नही सहेगी । साम्यवादी प्रणाली का यह एक दूसरा विरोधाभास है । दुर्भाग्यवश, साम्यवाद हिसा की आवश्यकता से बध गया है । इस वजह से उसने दुनिया के सामने जो आदर्श रखा, वह दोषपूर्ण हो गया । साधनो ने लक्ष्यो को खराब कर

दिया । हमारे सामने गलत साधनो और तरीको के असर का यह स्पष्ट सबूत है ।

साम्यवाद पूजीवादी समाज पर आरोप लगाता है कि वह हिसा और वर्ग-सघर्ष पर आधारित है । मेरा खयाल है कि यह बुनियादी तौर पर सही है, हालाकि यह पूजीवादी ढाचा भी लोकतत्रीय और दूसरी ताकतो की वजह से तब्दील हो चुका है, और लगातार तब्दील होता जारहा है । फिर भी यह सच है कि उसमे वर्गसघर्ष और असमानताए पाई जाती है । सवाल यह है कि इसमे कैसे छुटकारा पाया जाय और कैसे एक वर्गहीन समाज बनाया जाय, जिसमे सभी को बराबर मौके हासिल हो । क्या यह मकसद हिसा के तरीको से हासिल होगा, या ये तब्दीलिया शातिपूर्ण तरीको के जरिये मुमकिन हो सकती है ? इसमे शक की तनिक भी गुजाइश नही है कि साम्यवाद और हिसा के नजरिये मे मजबूत गठजोड है । अगर आम तौर पर वह शारीरिक हिसा नही करता तो भी कम-से-कम उसकी जबान तो हिसा की है ही । उसके विचार हिसक है । उसे समझा-बुझाकर, राजी करके, या अमन के लोकतत्रीय तरीको के जरिये तब्दीली लाने मे विश्वास नही है, बल्कि वह दबा-धमका कर, विनाश करके तब्दीली लाने मे यकीन करता है । फासिस्टवाद भी भद्दे-से-भद्दे किस्म के हिसा और घृणा के तरीको, और उनके सभी बुरे पहलुओ मे विश्वास करता है । लेकिन, साथ-ही-साथ उसका कोई आदर्श नही है कि जिसे स्वीकार किया जा सके ।

गाधीजी ने हमे जो अमन का दृष्टिकोण दिया है उसके यह एकदम खिलाफ है । कम्युनिस्ट और कम्युनिस्ट-विरोधी, दोनो ही यह सोचते है कि किसी सिद्धात का मजबूती से तभी बचाव किया जा सकता है जब हिसा की भाषा का प्रयोग किया जाय या उन लोगो को बुरा-भला कहा जाय जो उस सिद्धात को स्वीकार नही करते । इन दोनो तरह के लोगो के लिए कोई रग नही है, सिर्फ काला और सफेद रग है । दरअसल, यह वही नजरिया है, जो कुछ मजहबो के कट्टर पहलुओ मे पहले पाया जाता था । यह सहनशीलता का नजरिया नही है । वह यह नही सोचता कि शायद दूसरे लोग भी कुछ सच कहते है । जहातक

मेरा ताल्लुक है, मुझे यह नजरिया एकदम अवैज्ञानिक, अनुचित और असभ्य मालूम होता है, चाहे उसे मजहब के या आर्थिक सिद्धात के या किसी और चीज के क्षेत्र मे लागू किया जाय। मैं सहनशीलता के पुराने सीधे-सादे नजरिये को, इसके मजहबी पहलू को छोडकर, तरजीह देता हू। लेकिन, इसके बारे मे चाहे हमारे खयाल जो भी हो, हम आज की दुनिया मे एक ऐसे स्थल पर पहुच गये है, जहा जनता के बडे वर्ग पर जबर्दस्ती विचार लादने की कोशिश आखिर मे नाकामयाब होकर ही रहेगी। इससे आज के हालात मे लडाई और बेइतहा बरबादी होगी। किसी के लिए भी जीत या फतह नही होगी, हर आदमी के लिए हार-ही-हार होगी। हमने पिछले दो-एक वर्षो मे भी यह देखा है कि बडी-बडी ताकतो के लिए भी अब उन क्षेत्रो पर औपनिवेशिक नियत्रण लागू करना आसान नही रह गया है, जिन्होने अभी हाल मे आजादी हासिल कर ली है। १९५६ मे स्वेज की घटना ने इसे साबित कर दिया है। फिर हगरी मे जो कुछ हुआ उसने भी साफ-साफ दिखला दिया कि राष्ट्रीय आजादी की इच्छा किसी भी विचारधारा से ज्यादा मजबूत है, और आखिर मे इसे दबाना बिल्कुल नामुमकिन है। हगरी मे जो कुछ हुआ, साम्यवाद या साम्यवाद-विरोधी शक्तियो के बीच सघर्ष न था। बुनियादी तौर पर वह राष्ट्रवाद का द्योतक था, जो विदेशी नियत्रण से आजाद होने की कोशिश कर रहा था।

इस प्रकार आज हिंसा से किसी बडे सवाल को हल कर लेना कतई मुमकिन नही है, क्योकि हिंसा बेहद भयानक और विनाशक हो गई है। इस सवाल के नैतिक पहलू को अब व्यावहारिक पहलू ने और भी बल दिया है।

अगर हमारे स्वप्नो का समाज बडी हिंसा से स्थापित नही हो सकता, तो क्या छोटे पैमाने की हिंसा से काम चल सकेगा? हर्गिज नही—कुछ तो इसलिए कि उससे खुद बडे पैमाने की हिंसा का जन्म होगा और कुछ इसलिए कि वह सघर्ष और तोडफोड का माहौल पैदा करती है। यह सोचना गलत है कि सघर्ष से समाज की प्रगतिशील ताकते जरूर कामयाब होगी। जर्मनी मे हिटलर ने कम्युनिस्ट पार्टी

और सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी, दोनो को ही, उखाड फेका था। यही बात दूसरे मुल्को मे भी हो सकती है। और भारत मे तो हिंसा की बात करना खास तौर पर खतरनाक है, क्योकि इसमे बुनियादी तौर पर विनाशक भावनाए छिपी हुई है। हम लोगो मे अलगाव और फूट पैदा करनेवाली इतनी ज्यादा प्रवृत्तिया काम कर रही है कि अब हम और ज्यादा जोखिम उठाने के लिए तैयार नही। लेकिन यह सभी तुलनात्मक दृष्टि से कम महत्वपूर्ण पहलू है। यकीनन बुनियादी बात यह है कि गलत साधनो से कभी भी सही नतीजे हासिल नही हो सकते, और यह कोई मजहबी सिद्धात नही है, बल्कि एक व्यावहारिक धारणा है।

हम मे से कुछ लोग इस सामान्य पृष्ठभूमि पर, और खासतौर पर भारत के हालात पर विचार करते रहे है। अक्सर यह कहा गया है कि भारत मे एक तरह की निराशा और नाउम्मेदी की भावना फैली हुई है और कही भी पुराना जोश-खरोश दिखाई नही पडता, जबकि हमारे लिए उत्साह और मेहनत करने की सबसे ज्यादा जरूरत है। लेकिन सिर्फ हमारे ही मुल्क मे ऐसी बात नही है। दरअसल, एक माने मे, यह स्थिति दुनिया भर मे पाई जाती है। मेरे एक पुराने और प्रतिष्ठित साथी ने कहा कि यह हालत इसलिए पैदा हो गई है कि हमारे पास कोई जीवन-दर्शन नही है। दरअसल, सारी दुनिया एक दार्शनिक दृष्टि-कोण के अभाव से पीडित है। अपने देश को भौतिक-दृष्टि से खुशहाल बनाने की कोशिश मे हमने मानवीय स्वभाव के आध्यात्मिक तत्त्वो पर कोई ध्यान नही दिया है। इसलिए व्यक्ति और राष्ट्र को उद्देश्य की भावना देनी होगी, कुछ ऐसा देना होगा जिसके लिए मनुष्य जीवित रहे और अगर जरूरत हो तो मृत्यु का भी आलिंगन कर सके। हमे एक प्रकार के नये जीवन-दर्शन का निर्माण करना होगा, और व्यापक-अर्थ में चिंतन-मनन के लिए एक आध्यात्मिक पृष्ठ-भूमि प्रदान करनी होगी। हम कल्याणकारी राज्य, लोकतत्र और समाजवाद की बाते करते है। यह सभी अच्छी धारणाए है, लेकिन उनके मतलब साफ और स्पष्ट नही है। तो, यह दलील पेश की गई। और फिर, सवाल उठा कि हमारा आखिर मकसद क्या होना चाहिये। लोकतत्र और समाजवाद किसी

लक्ष्य के साधन है, खुद लक्ष्य नही है । हम समाज के कल्याण की बात करते है । क्या यह समाज मे रहनेवाले व्यक्तियो से अलग और उनके कल्याण से परे कोई चीज है ? अगर समाज के लिए कल्याणकारी चीजो के लिए व्यक्ति की उपेक्षा की जाय और उसके हितो का बलिदान किया जाय तो क्या इस मकसद को अच्छा कहा जायगा ?

यह मान लिया गया कि व्यक्ति का बलिदान नही होना चाहिए, और दरअसल, असली सामाजिक तरक्की उसी हालत मे हासिल होगी, जब व्यक्ति को विकसित होने का मौका दिया जायगा, बशर्ते कि व्यक्ति एक चुना हुआ पृथक्-वर्ग न हो, बल्कि समूचे समाज का प्रतिनिधित्व करता हो, इसलिए असली कसौटी यह होनी चाहिए कि कोई भी राजनीतिक या सामाजिक सिद्धात व्यक्ति को अपने स्वार्थ के निम्न स्तर से ऊपर उठने मे कहा तक मदद देता है, ताकि वह सभी लोगो की भलाई के रूप मे सोच सके । जिदगी का नियम प्रतिस्पर्धा या सचय-वृत्ति पर नही, बल्कि सहकारिता पर आधारित होना चाहिए, जिसके भीतर हर इकाई की भलाई सबकी भलाई मे योग देती हो । ऐसे समाज मे फर्जो पर जोर होगा, हको पर नही । फर्ज अदा करने पर अपने-आप हक मिलने लगेगे । हमे तालीम को एक नई दिशा देनी होगी और एक नये किस्म की मानवता का निर्माण करना होगा ।

इस तर्क से हम वेदात की पुरानी कल्पना पर पहुचे कि इस जगत् मे हर जड या चेतन वस्तु का एक निश्चित स्थान है, हर तत्त्व मे वह रोशनी मौजूद है, जिसे दैवी प्रेरणा या बुनियादी शक्ति या जीवनशक्ति कहा जा सकता है और जो सारी सृष्टि मे व्याप्त है । इस कल्पना से हम सूक्ष्म भावनाओ के क्षेत्र मे पहुच जाते है । वह हमे जिदगी के उन व्यावहारिक मसलो से दूर खीच ले जाती है, जिनका हमे मुकाबला करना है । मेरा खयाल है कि अगर किसी भी विचारधारा का अनुगमन किया जाय तो हम कुछ-न कुछ हद तक आध्यात्मिक क्षेत्र मे पहुच जाते है । यहा तक कि आज का विज्ञान भी ऐसे किनारे पर पहुच गया है, जहा सभी तरह की अविश्वसनीय और अचितनीय बातो का अस्तित्व है । मै इन भावात्मक पहलुओ की चर्चा करना नही चाहता, लेकिन खुद

यह दलील बतलाती है कि किस तरह हमारा दिमाग भौतिक दुनिया की नीव मे पडे हुए बुनियादी तत्वो को ढूढ रहा है। अगर हम जीवन-सिद्धात की इस सर्वव्यापी धारणा मे सचमुच यकीन रखते है तो इससे हमे जाति, फिर्का और वर्ग की हमारी कुछ सकुचित सीमाओ से छुटकारा पाने मे मदद मिल सकती है और हम जिदगी के मसलो के बारे मे अपना दृष्टिकोण अधिक सहिष्णु और अनुकूल बना सकते है।

लेकिन जाहिर है कि इससे हमारे मौजूदा मसले हल नही होते और एक अर्थ मे, हम जहा-के-तहा खडे रह जाते है। भारत मे हम कल्याणकारी राज्य और समाजवाद की बात करते है। एक दृष्टि से हर देश, चाहे वह पूजीवादी हो, समाजवादी हो या साम्यवादी, कल्याणकारी राज्य के आदर्श को स्वीकार करता है। कम-से-कम कुछ देशो मे तो पूजीवाद ने इस सामाजिक कल्याण को काफी हदतक हासिल कर लिया है, हालाकि वह खुद अपने मसले हल नही कर सका है और लगता है कि उसमे जैसे किसी बुनियादी चीज की कमी हो। इसमे सदेह की गुजाइश नही है कि पूजीवाद से जुडे हुए लोकतत्र ने पूजीवाद की कितनी ही बुराइयो को कम कर दिया, और दरअसल, पूजीवाद वही नही रह गया है जो दो एक पीढियो पहले था। औद्योगिक दृष्टि से विकसित देशो मे आर्थिक विकास की एक सतत और मजबूती से आगे बढने की प्रवृत्ति रही है। विश्व-महायुद्धो के कारण भी भयानक नुकसान हुए, उनसे भी इस प्रवृत्ति मे कोई रुकावट पैदा नही हुई है। कम-से-कम इन विकसित देशो के मामलो मे तो यह बिलकुल नही है। इसके अलावा, यह आर्थिक विकास सभी वर्गों मे फैला हुआ है, हालाकि उनमे मात्राओ का अतर है। लेकिन यह बात उन देशो पर लागू नही होती, जो औद्योगिक दृष्टि से आगे नही बढे है। सच तो यह है कि इन देशो मे विकास की कशमकश बहुत कठिन है और कभी-कभी तो कोशिशो के बावजूद आर्थिक असमानताए न सिर्फ कायम रही है, बल्कि और भी बढने लगी है। सामान्य तौर पर यह कहा जा सकता है कि अगर बिना किसी रुकावट के पूंजीवादी समाज की ताकतो को सक्रिय छोड दिया जाय तो वे सम्पन्न लोगो को ज्यादा सम्पन्न और विपन्न लोगो को ज्यादा विपन्न बनाने लगती

है। इसलिए, उनके बीच की खाई और चौडी हो जाती है। यह बात न सिर्फ देशो पर, बल्कि देशो के भीतर भिन्न-भिन्न वर्गो, क्षेत्रो और समूहो पर भी लागू होती है। लेकिन इन सामान्य प्रवृत्तियो के रास्ते मे भी मुख्तलिफ लोकतत्रीय प्रतिक्रियाए दखलदाजी करती है। इसलिए, स्वय पूजीवाद ने कुछ समाजवादी विशेषताओ को विकसित किया, हालाकि पूजीवाद के खास-खास पहलू कायम है।

बेशक, समाजवाद जान-बूझकर सामान्य प्रक्रियाओ मे हस्तक्षेप करना चाहता है, और इस तरह न सिर्फ उत्पादक शक्तियो को बढाता है, बल्कि असमानताए भी कम करता है। लेकिन यह समानताए है क्या चीज ? इसका ठीक-ठीक जवाब देना मुश्किल है और इसकी बेइन्तिहा व्याख्याए की गई है। शायद कुछ लोग मोटे तौर पर समाजवाद को ऐसी चीज समझते है, जिससे भलाई होती है और जिसका मकसद समानता पैदा करना है। लेकिन इससे हम बहुत आगे नही बढते। बुनियादी तौर पर, समाजवाद का दृष्टिकोण पूजीवादी दृष्टिकोण से मुख्तलिफ है। मेरे खयाल से यह सही है कि उनके बीच की चौडी खाई इस वजह से कम हो रही है कि समाजवाद के कितने ही आदर्श पूजी-वादी ढाचे मे शामिल होते जा रहे है। आखिर, समाजवाद केवल जिंदगी का एक तरीका ही नही है, बल्कि सामाजिक और आर्थिक मसलो को हल करने का एक निश्चित वैज्ञानिक दृष्टिकोण है। अगर समाजवाद किसी पिछडे और अर्द्ध-विकसित देश पर लागू किया जाय, तो उसकी वजह से उसमे अचानक कोई तरक्की नही होगी, और उसका पिछडापन कम नही होगा। सच तो यह है कि उस हालत मे हमारा समाजवाद पिछडा हुआ और गरीबी मे फसा हुआ समाजवाद होगा।

दुर्भाग्यवश, साम्यवाद के कितने ही राजनीतिक पहलुओ ने हमारे साम्यवाद सबधी दृष्टिकोण को खराब कर दिया है। यही नही, साम्यवाद ने जद्दोजहद का जो तरीका अख्तियार किया है, उसमे हिंसा को प्रमुख भूमिका प्रदान की ग है। इसलिए समाजवाद पर इन राजनीतिक तत्त्वो या हिंसा की अपरिहार्यता से पृथक रूप मे विचार करना चाहिए। इससे हमे यह सबक मिलता है कि किसी समाज के सामाजिक, राजनीतिक

और बौद्धिक जीवन का सामान्य स्वरूप उसके उत्पादक साधनो द्वारा अनुशासित होता है। जिस तरह उत्पादक साधन तब्दील और विकसित होते है, उसी तरह समाज का जीवन और चिंतन तब्दील होता रहता है।

साम्राज्यवाद अथवा उपनिवेशवाद ने प्रगतिशील सामाजिक शक्तियो को दबाया और इस समय भी दबा रहा है। उसका स्वभाव ही ऐसा है कि वह कुछ अधिकारयुक्त वर्गो या तबको का पक्ष लेता है, क्योकि यह सामाजिक और आर्थिक स्थिति को यथावत कायम रखने मे दिलचस्पी रखता है। आजादी पा लेने के बाद भी कोई देश दूसरे मुल्को पर आर्थिक दृष्टि से आश्रित रह सकता है, लेकिन इस तरह की चीज को मुलम्मे के साथ यह कहा जाता है कि उनके बीच सास्कृतिक और आर्थिक सबध है।

हम कभी-कभी गाव की आत्म-निर्भरता की बात करते है। इस सवाल को विकेद्रीकरण के विचार से सयुक्त कर देना ठीक नही है, हालाकि यह उसका अग हो सकता है। मेरा खयाल है कि यद्यपि अधिक सीमा तक विकेद्रीकरण वाछनीय है, लेकिन अगर उसकी वजह से हम उत्पादन के पुराने और रूढिवादी तरीको से ही चिपके रह जाय, तो उसका साफ-साफ मतलब यह होगा कि हम उन आधुनिक तरीको का इस्तेमाल नही करेगे, जिनसे पश्चिम के कुछ देशो मे जबर्दस्त भौतिक विकास हुआ है। मतलब यह कि हम गरीब के गरीब बने रह जायगे। यही नही, बल्कि हम बढती हुई आबादी के दबाव के कारण और भी ज्यादा गरीब हो जायगे। हम शक्ति के नये साधनो का प्रयोग करे, जो हमे विज्ञान से हासिल हुए है। इसके सिवाय गरीबी के इस दुश्चक्र से बाहर आने का मुझे कोई रास्ता नही दिखलाई देता। गरीब होने की वजह से हमारे पास इतनी पूजी नही बची है कि हम उसका विनियोजन कर सके। इसलिए हम लगातार गरीबी मे डूबते जारहे है।

हमे शक्ति और आधुनिक तरीको से उपलब्ध नये साधनो से फायदा उठाकर इस बाधा को पार करना है। लेकिन ऐसा करने मे हमें बुनियादी मानव-तत्व को, और इस बात को हरगिज नही भुला देना चाहिए कि

हमारा मकसद व्यक्ति का विकास करना है और असमानता को कम करना है। हमें जिंदगी के नैतिक और आध्यात्मिक पहलुओं को नहीं भूलना चाहिए जो असल संस्कृति और सभ्यता की बुनियाद हैं और जिन्होंने जिंदगी को सार्थकता प्रदान की है।

याद रखना होगा कि समाजवादी या पूंजीवादी तरीकों में ही कोई ऐसा जादू नहीं है कि उसे अपना लेने पर अचानक गरीबी खत्म हो जायगी और खुशहाली बढ़ जायगी। खुशहाली का एक मात्र रास्ता कठिन श्रम है, राष्ट्र की उत्पादकता में वृद्धि करना है और उसके उत्पादन के न्यायोचित बटवारे की व्यवस्था करना है। यह सारी प्रक्रिया लम्बी और मुश्किल है। एक ऐसे मुल्क में जिसका विकास बहुत ही कम हुआ है, पूंजीवादी तरीके से कोई मकसद हासिल करना मुश्किल है। सिर्फ समाजवादी तरीके पर आयोजित दृष्टिकोण अपना करके ही हम मजबूत और लगातार तरक्की कर सकते हैं हालांकि उसमें भी काफी समय लगेगा। जब यह प्रक्रिया चालू हो जायगी तो उसके दौरान हमारी जिंदगी और हमारे चिंतन का ढांचा धीरे-धीरे तब्दील होता जायगा।

इसके लिए आयोजन बहुत जरूरी है, क्योंकि ऐसा न होने पर हमारे सीमित साधनों की काफी बरबादी होगी। आयोजन का मतलब परियोजनाओं अथवा योजनाओं को इकट्ठा कर देना नहीं बल्कि तरक्की की बुनियाद और रफ्तार को बेहतर बनाना है, ताकि हर पहलू से समाज आगे बढ़े। भारत के कितने ही बड़े-बड़े इलाकों में, अत्यधिक गरीबी की भयंकर समस्या है, हालांकि सामान्य गरीबी कुछ हद तक सारे मुल्क में पाई जाती है। हमारे सामने हमेशा एक मुश्किल चुनाव करने की समस्या है। सोचना यह है कि क्या हम कुछ चुने-चुनाए और सुविधाप्राप्त क्षेत्रों में उत्पादन बढ़ाने पर ही अपने प्रयासों को केंद्रित करें और इन समय गरीब इलाकों को छोड़ दें या साथ-साथ गरीब इलाकों को भी विकसित करते चलें, ताकि विभिन्न प्रदेशों के बीच किसी तरह की असमानता ना रहे या कम होती जाय। हमें इन दोनों के बीच का रास्ता निकाल लेना है, और एक समन्वित राष्ट्रीय योजना तैयार करनी है। वह राष्ट्रीय योजना किसी भी हालत में कठोर नहीं होनी चाहिए। किसी रूढ़ि पर

उसे आधारित करना ठिक नही, वल्कि उसका निर्माण मौजूदा तथ्यो और स्थितियो को ध्यान मे रख कर ही होना चाहिए। मेरा खयाल है कि उसे कई क्षेत्रो मे निजी उद्योगो को भी बढावा देना चाहिए। खास-तौर पर आज के भारत मे, हालाकि यह निजी उद्योग-क्षेत्र भी अनिवार्य रूप से राष्ट्रीय योजना के अनुकूल होना चाहिए और उस पर उतनी रोक-थाम अवश्य होनी चाहिए, जितनी जरूरी हो।

भूमि-सुधारो का एक खास महत्व है, क्योकि इनके वगैर, खासतौर पर भारत जैसे उचे घनत्ववाले देश मे, खेती की उत्पादिता मे कोई वडा सुधार नही हो सकता। लेकिन भूमि-सुधारो का असली मकसद इससे भी ज्यादा गहरा है। इनका उद्देश्य एक स्थिर समाज के पुराने वर्गीय ढाचे को भग करके उसे नया रूप देना है।

हम सामाजिक सुरक्षा चाहते है, लेकिन हमे यह मजूर करना होगा कि सामाजिक सुरक्षा सिर्फ उसी हालत मे सभव है, जब कुछ हद तक विकास हो चुका हो। अन्यथा, न तो हम विकास ही कर सकते है, और न हमे सामाजिक सुरक्षा ही हासिल हो सकती है।

जाहिर है कि आखिरकार मानव प्राणियो की क्षमता और गुणो का ही महत्व है। मनुष्य ही किसी राष्ट्र की सपदा और उसकी सांस्कृतिक उन्नति का निर्माता है। इसलिए तालीम और स्वास्थ्य का महत्व वहुत अधिक है, ताकि मानव प्राणियो मे आवश्यक गुण उत्पन्न किया जा सके। इस मामले मे भी साधनो की कमी से हमारे सामने कठिनाइया है, लेकिन, फिर भी, हमे हमेशा याद रखना है कि सिर्फ सही किस्म की तालीम और अच्छे स्वास्थ्य से ही किसी देश के आर्थिक, सास्कृतिक और आध्यात्मिक उत्थान की बुनियाद का निर्माण होता है।

इस प्रकार, राष्ट्रीय आयोजन का उद्देश्य, अल्पकालीन और दीर्घ-कालीन, दोनो ही होना चाहिए। दीर्घकालीन उद्देश्य हमारे सम्मुख सच्ची तस्वीर पेश करता है। उसके वगैर, अल्पकालीन आयोजन विलकुल फिजूल होगा। और हम ऐसी जगह पहुच जायगे जहा अधेरा ही अधेरा होगा। इसलिए आयोजन हमेशा पूर्वकल्पित आयोजन होगा और उसके समक्ष वे सभी भौतिक मकसद होगे, जिनके लिए इस समय हम प्रयन्नशील है।

दूसरे शब्दो मे, यह एक भौतिक आयोजन होगा, हालाकि वित्तीय साधनो और आर्थिक परिस्थितियो से वह जाहिरा तौर पर सीमित होगा ।

इस समय भारत के सामने जो मसले पेश है, वे कुछ हद तक दूसरे देशो मे भी मौजूद है। लेकिन इससे भी ज्यादा अहम बात यह है कि उन मे कुछ ऐसी नई समस्याए भी है, जो अपना सानी नही रखती या इतिहास मे उनका कोई दृष्टात नही मिलता। औद्योगिक दृष्टि से विकसित देशो मे भूतकाल मे जो कुछ हुआ है, वह हमारे लिए आज की स्थिति मे कुछ विशेष महत्व नही रखता। दरअसल, आज जो देश विकसित है, वे भूतकाल मे भी आज के भारत की अपेक्षा अच्छी हालत मे थे। औद्योगीकरण शुरू होने के पहले भी उनकी प्रति-व्यक्ति आय भारत से ज्यादा थी। इसलिए, पश्चिमी अर्थशास्त्र उपयोगी होने के बावजूद, हमारी आज की समस्याओ की दृष्टि से बहुत कम महत्व रखता है। यही बात मार्क्सवादी अर्थशास्त्र पर भी लागू होती है, हालाकि आर्थिक प्रक्रियाओ पर वह काफी रोशनी डालता है। फिर भी, दोनो आज के लिए पुराने ही है। इसलिए हमे दूसरो की मिसालो से फायदा उठाते हुए अपने तरीके से सोचना है और ऐसे रास्ते निकालने है जो खुद हमारे हालात के लिए उपयुक्त हो।

अपने मसलो के इन आर्थिक पहलुओ पर विचार करते समय हमे हमेशा शातिमय साधनो के बुनियादी दृष्टिकोण को याद रखना होगा, और शायद हम प्राणशक्ति के पुराने वेदाती आदर्श को भी दृष्टिगत रख सकते है जो दरअसल, इस दुनिया की हर वस्तु का आतरिक आधार है।

परिशिष्ट—ख

औद्योगिक नीति-प्रस्ताव

भारत सरकार, नई दिल्ली, ३० अप्रैल, १६५६

सख्या ६१/सी एफ/४८—भारत-सरकार ने ६ अप्रैल, १६४८ के अपने प्रस्ताव मे वह नीति प्रस्तुत की है, जिस पर वह औद्योगिक क्षेत्र में चलना चाहती है । प्रस्ताव मे कहा गया है कि अर्थ-व्यवस्था के लिए उत्पादन मे वृद्धि और न्यायोचित वितरण करना जरूरी है और बताया गया है कि राज्य को उद्योगो के विकास मे उत्तरोत्तर सक्रिय-योग देना चाहिए। उसमे निर्धारित किया गया कि हथियार और गोला-बारूद, आणविक-शक्ति और रेल-परिवहन तो केंद्रीय-सरकार के एकाधिकार में रहेगे ही, उनके अलावा छह बुनियादी उद्योगो के क्षेत्र मे नये प्रयास स्थापित करने की जिम्मेदारी एकमात्र राज्य की होगी, सिवाय उस अवस्था मे जब राज्य खुद राष्ट्रीय हित में निजी उद्योग का सहयोग हासिल करना जरूरी समझे । शेष औद्योगिक क्षेत्र निजी प्रयास के लिए छोड दिया गया था, हालाकि यह भी स्पष्ट कर दिया गया था कि राज्य भी इस क्षेत्र मे उत्तरोत्तर भाग लेगा ।

२ औद्योगिक-नीति सबधी इस घोषणा को हुए आठ साल का समय गुजर चुका है । इन वर्षो मे भारत में अनेक परिवर्तन और घटनाए हुई हैं । भारत का सविधान स्वीकृत हुआ है, जो कतिपय बुनियादी अधिकारो की गारटी देता है और राज्य-नीति के निर्देशक-सिद्धातो का बखान करता है । आयोजन-व्यवस्थित आधार पर हुआ है और प्रथम पचवर्षीय-योजना हाल मे पूरी हुई है । ससद ने समाजवादी ढग की समाज-व्यवस्था को सामाजिक और आर्थिक-नीति का लक्ष्य स्वीकार किया है । इन महत्वपूर्ण घटनाओ के कारण जरूरी हो गया है कि औद्योगिक-नीति को फिर से प्रकट किया जाय, खासकर इसलिए भी कि दूसरी पच-

वर्षीय-योजना शीघ्र ही देश के सामने पेश की जायगी। यह नीति सविधान मे निर्धारित सिद्धातो, समाजवाद के लक्ष्य और इन वर्षो मे प्राप्त अनुभवो के अनुसार होगी।

३. भारत के सविधान ने अपनी भूमिका मे, घोपित किया है कि वह अपने समस्त नागरिको के लिए

सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतत्रता,

दर्जे और अवसर की समानता, और व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता कायम रखते हुए उन सब मे भाईचारे की स्थापना करना चाहता है।

राज्य-नीति सबधी अपने निर्देशक सिद्धातो मे यह कहा गया है कि

"राज्य अपनी शक्ति भर ऐसी समाज-व्यवस्था की स्थापना और सरक्षण द्वारा लोगो का हित-साधन करेगा, जिसमे राष्ट्र-जीवन की हर सस्था सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय की भावना से प्रेरित होगी।"

"राज्य विशेष रूप से अपनी नीति को इस प्रकार चलायेगा

(क) सब नागरिको को, स्त्रियो और पुरुपो को समान रूप से आजीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त हो,

(ख) भौतिक साधनो का स्वामित्व और नियत्रण इस तरह विभाजित किया जाय कि सामूहिक हित की सर्वोत्तम ढग से पूर्ति हो सके,

(ग) आर्थिक प्रणाली का सचालन ऐसा न हो कि सपत्ति और उत्पादन के साधनो का सामूहिक हित के विपरीत केद्रीयकरण हो,

(घ) स्त्रियो और पुरुषो को समान काम मिले।

(ङ) पुरुष और महिला-मजदूरो के स्वास्थ्य और शक्ति और बच्चो की कोमल आयु का दुरुपयोग न हो और नागरिको को आर्थिक आवश्यकताओ से बाध्य होकर ऐसे व्यवसाय न अपनाने पडे जो उनकी आयु और शक्ति के लिए अनुपयुक्त हो,

(च) बाल-अवस्था और जवानी को शोषण एव नैतिक और भौतिक हानि से बचाया जाय।"

४. इन बुनियादी और आम सिद्धातो को अधिक निश्चित दिशा उस समय मिली जब ससद ने दिसबर १९५४ मे समाजवादी ढग की समाज-व्यवस्था को सामाजिक और आर्थिक-नीति का लक्ष्य स्वीकार किया। यह औद्योगिक-नीति और अन्य नीतिया इन सिद्धातो और निर्देशो के अनुसार चलनी चाहिए।

५ इस उद्देश्य को हासिल करने के लिए, यह जरूरी होगा कि आर्थिक विकास की गति को तेज किया जाय और औद्योगीकरण शीघ्रता से किया जाय, खासकर भारी उद्योगो और मशीन-निर्माता उद्योगो का विकास किया जाय, राजकीय औद्योगिक क्षेत्र का विस्तार किया जाय और एक बडे और विकासशील सहकारी क्षेत्र का निर्माण किया जाय। इससे आम जनता के लिए लाभदायी रोजगार के अवसर बढाने और उसके जीवन-मान और काम की परिस्थितियो को सुधारने के आर्थिक आधारो का निर्माण होगा। उतना ही जरूरी यह भी है कि आय और सपत्ति की वर्तमान विषमताओ को कम किया जाय और विभिन्न क्षेत्रो मे मुट्ठी भर लोगो के हाथो मे आर्थिक शक्ति के केंद्रीयकरण और निजी एकाधिकारो को रोका जाय। तदनुसार राज्य नये औद्योगिक सस्थान कायम करने और परिवहन सुविधाओ का विकास करने की उत्तरोत्तर प्रमुख और प्रत्यक्ष जिम्मेदारी अपने सिर पर लेगा। वह अधिकाधिक पैमाने पर राजकीय व्यापार की भी शुरुआत करेगा। साथ ही, देश की विकासशील अर्थ-व्यवस्था के सदर्भ मे आयोजित राष्ट्रीय-विकास की एजेसी रूप मे निजी औद्योगिक क्षेत्र को विकास और विस्तार का अवसर मिलेगा। जहा सभव हो, सहकारिता के सिद्धात पर अमल किया जाय और निजी क्षेत्र के कामो के सतत बढ़ते हुए अनुपात का सहकारी आधार पर विकास किया जाय।

६ समाजवादी ढग की समाज-व्यवस्था को राष्ट्रीय लक्ष्य स्वीकार कर लेने और आयोजित एव शीघ्र विकास की आवश्यकताओ को ध्यान मे रखते हुए बुनियादी और सुरक्षा-सबधी महत्वपूर्ण उद्योगो अथवा सार्वजनिक उपयोग की सेवाओ सबधी उद्योगो को राजकीय क्षेत्र में चलाया जाय। ऐसे उद्योग, जो जरूरी है और जिनमे बडी मात्रा मे

पूजी लगाना होगा, और वर्तमान परिस्थितियो मे राज्य ही उनकी व्यवस्था कर सकेगा, उन्हे भी राजकीय क्षेत्र मे ही रहना होगा। इस-लिए राज्य को व्यापक क्षेत्र मे उद्योगो के भावी विकास की प्रत्यक्ष जिम्मेदारी लेनी होगी। फिर भी कुछ मर्यादाए है, जिनकी वजह से इस समय राज्य को वह क्षेत्र बता देना होगा, जिसमे वही भावी-विकास के लिए एकमात्र उत्तरदायी होगा और उन उद्योगो का चुनाव करना होगा, जिनके विकास मे वह प्रमुख भाग लेगा। योजना-आयोग के परामर्श से, समस्या के सब पहलुओ पर विचार करने के बाद भारत-सरकार ने हरेक उद्योग मे राज्य के सभावित योग को ध्यान मे रखते हुए उद्योगो को तीन श्रेणियो मे विभक्त करने का फैसला किया है। ये श्रेणिया कुछ हद तक एक-दूसरे के क्षेत्र मे दखल देगी, और बहुत अधिक कठोरता लक्ष्य की प्राप्ति मे बाधक हो सकती है। किंतु बुनियादी सिद्धातो और लक्ष्यो को हमेशा ध्यान मे रखना होगा और आगे उल्लिखित आम हिदायतो पर अमल करना होगा। यह भी याद रखना होगा कि राज्य किसी भी प्रकार के औद्योगिक-उत्पादन को हाथ मे ले सकता है।

७. पहली श्रेणी मे ऐसे उद्योग होगे, जिनके भावी-विकास की जिम्मेदारी एकमात्र राज्य की होगी। दूसरी श्रेणी मे ऐसे उद्योग होगे, जो उत्तरोत्तर राज्य के स्वामित्व मे चलेंगे, और जिनमे राज्य नये औद्योगिक सस्थान स्थापित करने मे आमतौर पर पहल करेगा, किंतु जिनमे निजी उद्योगपतियो से राज्य के प्रयास मे पूरक बनने की अपेक्षा रखी जायगी। तीसरी श्रेणी मे शेष सब उद्योग होगे और उनका भावी विकास आमतौर पर निजी क्षेत्र की पहल और प्रयास पर छोड दिया जायगा।

८ पहली श्रेणी के उद्योगो को इस प्रस्ताव की (सूची-क) मे शामिल किया गया है। इन उद्योगो मे सभी नई ईकाइया केवल राज्य स्थापित करेगा। वे ईकाइया अपवाद होगी, जिन्हे स्थापित करने की मजूरी पहले से निजी क्षेत्र को दी जा चुकी है। अगर राष्ट्रीय हित मे जरूरी होगा तो मौजूदा निजी स्वामित्व मे चल रही ईकाइयो का विस्तार किया जा सकेगा अथवा नयी ईकाइयो की स्थापना मे राज्य निजी प्रयास का सह-

योग हासिल कर सकेगा। किंतु रेल और वायुयान परिवहन, हथियारों और गोला-बारूद और अणु-शक्ति उद्योगो को केद्रीय-सरकार के एकाधिकार मे विकसित किया जायगा। जब कभी निजी-प्रयास से सहयोग जरूरी होगा, उद्योग की पूजी मे प्रमुख हिस्सा लेकर अथवा अन्य प्रकार से राज्य ऐसी व्यवस्था करेगा कि उस औद्योगिक ईकाई की नीति का निर्देशन और कार्य-सचालन करने की उसे आवश्यक सत्ता प्राप्त हो जाय।

९ दूसरी श्रेणी मे वे उद्योग होगे, जिनकी गणना (सूची-ख) मे की गई है। भावी विकास की गति तेज करने की दृष्टि से, राज्य इन उद्योगो मे नई ईकाइया स्थापित करेगा। साथ ही निजी उद्योगपतियों को अपने-आप या राज्य की हिस्सेदारी में इस क्षेत्र मे विकास का मौका दिया जायगा।

१० शेष सब उद्योग तीसरी श्रेणी मे आयगे और यह आशा की जाती है कि आमतौर पर उनका विकास निजी क्षेत्र की पहल और प्रयास से हो, अवश्य ही राज्य को यह स्वतन्त्रता होगी कि वह इस श्रेणी मे भी किसी उद्योग की शुरुआत कर सके। राज्य की यह नीति होगी कि पचवर्षीय योजनाओ मे निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार इन उद्योगों के विकास के लिए सुविधाए और प्रोत्साहन दे। इसके लिए राज्य परिवहन, बिजली और अन्य सेवाओ का विकास करेगा और कर-सबधी और अन्य उचित कदम उठायगा। राज्य ऐसी सस्थाओं के निर्माण मे योग देता रहेगा जो इन उद्योगो को वित्तीय सहायता देगी और औद्योगिक और कृषि-कार्यो के लिए सहकारी आधार पर सगठित उद्योगो को विशेष सहायता दी जायगी। उपयुक्त मामलो मे, राज्य निजी क्षेत्र को वित्तीय सहायता भी दे सकता है। इस प्रकार की सहायता, विशेपकर जब सहायता की राशि काफी बडी हो, प्रधानतः उद्योग के साधारण हिस्से खरीदकर दी जायगी, हालाकि कुछ मदद कपनी के बॉण्ड खरीद करके भी दी जा सकती है।

११. निजी क्षेत्र के औद्योगिक सस्थानो को लाजमी तौर पर राज्य को सामाजिक और आर्थिक नीति के दायरे मे अपना स्थान लेना होगा

और वे औद्योगिक (विकास और नियत्रण) कानून और अन्य सवधित कानूनो के नियत्रण और नियमन मे रहेगे। किंतु भारत सरकार मानती है कि आम तौर से इन उद्योगो को राष्ट्रीय योजना के लक्ष्यो और उद्देश्यो के अनुसार अपने विकास की यथासभव अधिक-से-अधिक स्वतत्रता दी जाय। जहा एक ही उद्योग मे निजी और राजकीय दोनो के स्वामित्व मे चलनेवाली ईकाइया हो, वहा राज्य की यह नीति जारी रहेगी कि उन दोनो के साथ निष्पक्ष और विना किसी भेदभाव के व्यवहार किया जाय।

१२ उद्योगो को श्रेणियो मे विभक्त करने का यह मतलव नही है कि उन्हे किसी चुस्त चौखट मे रख दिया गया है। अनिवार्यत ऐसा क्षेत्र तो होगा ही, जिसमे एक श्रेणी का उद्योग दूसरी श्रेणी मे जा सकेगा, वल्कि राजकीय और निजी क्षेत्रो के उद्योगो के मध्य काफी मात्रा मे गठवधन भी होगा। अगर आयोजन की आवश्यकताओ के लिए जरूरी होगा और अन्य महत्वपूर्ण कारण होगे तो राज्य ख-श्रेणी मे शामिल नही हुए किसी भी उद्योग को शुरू कर सकेगा। उपयुक्त मामलो मे, निजी स्वामित्व मे चलनेवाली ईकाइयो को क-सूची मे शामिल किसी वस्तु को अपनी खुद की जरूरत पूरी करने या उप-उत्पादन के रूप मे तैयार करने की इजाजत दी जा सकती है। अगर निजी स्वामित्व मे चलने-वाली छोटी ईकाइया छोटी मोटर, नौकाए अथवा अन्य हल्के जलवाहन बनाये और स्थानीय जरूरतो के लिए और लघु खनिज कार्यो के निमित्त बिजली पैदा करे तो सामान्यत इस पर कोई रोक नही होगी। इसके अलावा राजकीय क्षेत्र के भारी उद्योग हल्के पुर्जो की अपनी कुछ जरूरते निजी क्षेत्र से हासिल कर सकते है और इसी प्रकार निजी क्षेत्र अपनी अनेक जरूरतो के लिए राजकीय क्षेत्र पर निर्भर कर सकता है। यही सिद्धात और भी अधिक जोर के साथ वडे और लघु उद्योगो के आपसी सवधो पर लागू होगा।

१३ भारत सरकार, इस सदर्भ मे, राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के विकास मे कुटीर, ग्रामीण और लघु उद्योगो के योग पर जोर देगी। जिन समस्याओ को तत्काल हल किया जाना है, उनमे से कुछ के वारे में

इन उद्योगो मे कुछ विशेष सुविधाए मौजूद है। वे तुरत बड़ी सख्या मे लोगो को रोजगार देते हैं, वे राष्ट्रीय आय को अधिक न्यायोचित आधार पर वितरित करने का उपाय प्रस्तुत करते है और पूजी और कार्यकुशलता सबधी ऐसे साधनो का उपयोग सभव बनाते है, जो अन्यथा बेकार पडे रह सकते है। शहरो के अनियोजित विस्तार से जो समस्याए पैदा होती है, उनमे से कुछ को सारे देश मे औद्योगिक उत्पादन के लघु केन्द्रो की स्थापना करके टाला जा सकता है।

१४ राज्य कुटीर, ग्राम और लघु उद्योगो को मदद देने की नीति पर चल रहा है। इसके लिए वह बडे उद्योगो के उत्पादन की मात्रा पर प्रतिबन्ध लगाता है, दोनो पर भिन्न तरीके से कर लगाता है, और प्रत्यक्ष वित्तीय अनुदान देता है। जहा कही जरूरी होगा, ऐसे कदम उठाये जाते रहेगे, किंतु राज्य की नीति का उद्देश्य यह होगा कि विकेंद्रित क्षेत्र स्वावलबी बनने की पर्याप्त शक्ति हासिल कर ले और उसका विकास बडे उद्योगो के साथ समन्वित हो जाय। इसलिए राज्य लघु उत्पादन की प्रतियोगी शक्ति को बढाने के लिए अधिकाधिक कदम उठायेगा। इसके लिए यह जरूरी है कि उत्पादन-तकनीक मे निरतर सुधार किया जाय और उसे आधुनिक बनाया जाय, और परिवर्तन को इस तरह नियन्त्रित किया जाय कि जहातक सभव हो, तकनीकी बेकारी उत्पन्न न हो। तकनीकी और वित्तीय सहायता तथा उपयुक्त कार्य-स्थान का अभाव और औजारो की मरम्मत एव उन्हे ठीक हालत मे रखने की सुविधाए लघु उत्पादको के मार्ग की कुछ मुख्य कठिनाइया हैं। इन कमियो को दूर करने के लिए औद्योगिक बस्तियो और ग्राम सामुदायिक उद्योग-गृहो की स्थापना करके एक कदम उठाया गया है। गावो मे बिजली पहुचाने से और बिजली ऐसी कीमत पर सुलभ करने से जिसे श्रमिक अदा कर सके, लघु उत्पादको को काफी मदद मिलेगी। औद्योगिक सहकारी समितियो के गठन से लघु उत्पादन सबधी अनेक कामो को बडी मदद मिलेगी। ऐसे सहकारी सगठनो को हर प्रकार से मदद दी जाय और राज्य कुटीर, ग्राम और लघु उद्योगो के विकास के लिए निरतर ध्यान दे।

१५ उद्योगीकरण से देश की अर्थव्यवस्था को समग्र रूप से लाभ पहुचे, इसके लिए यह जरूरी है कि विभिन्न क्षेत्रो के विकास-स्तरो की विषमताओ को उत्तरोत्तर कम किया जाय। देश के विभिन्न भागो में उद्योगो का अभाव बहुधा इसलिए है कि वहा आवश्यक कच्चा माल और अन्य प्राकृतिक साधन उपलब्ध नही है। कुछ क्षेत्रो मे उद्योगो की भीड इसलिए है कि उनमे बिजली, पानी और परिवहन की सुविधाए आसानी से उपलब्ध है, जिनका उन क्षेत्रो मे विकास किया गया है। राष्ट्रीय आयोजन का एक उद्देश्य यह है कि जो क्षेत्र अभी औद्योगिक दृष्टि से पिछडे हुए है अथवा जहा रोजगार के अवसर उपलब्ध करने की अधिक जरूरत है, वहा ये सुविधाए बराबर सुलभ की जाय। अवश्य ही यह देखना होगा कि उद्योगो का स्थान अन्यथा उपयुक्त हो। हर क्षेत्र की औद्योगिक और कृषि-व्यवस्था के सतुलित और समन्वित विकास से ही सारा देश उच्चतर जीवन-मान हासिल कर सकेगा।

१६ औद्योगिक-विकास के इस कार्यक्रम को अमल मे लाने के लिए देश को बडी सख्या मे तकनीकी और प्रबध-कर्मचारी तैयार करने होगे। राजकीय क्षेत्र के विस्तार की तेजी से बढती हुई जरूरतो को पूरा करने और ग्राम तथा लघु-उद्योगो के विकास के लिए राजकीय सेवाओ मे योग्य-प्रबधक और तकनीकी दल स्थापित किये जा रहे है। देख-रेख करने-वाले कर्मचारियो की कमी को दूर करने, राजकीय और दोनो प्रकार के उद्योगो मे बडे पैमाने पर उम्मीदवार प्रशिक्षित करने की योजनाओ पर अमल करने तथा विश्वविद्यालयो और अन्य सस्थाओ मे व्यावसायिक प्रबध की शिक्षा-सुविधाओ का विस्तार करने के लिए भी कदम उठाये जा रहे है।

१७ यह जरूरी है कि उद्योग मे काम करनेवाले सब लोगो को उचित सुविधाए और प्रोत्साहन दिया जाय। मजदूरो की रहन-सहन और काम की परिस्थितियो मे सुधार किया जाय और उनकी कार्य-कुशलता का मापदड ऊचा किया जाय। औद्योगिक प्रगति के लिए यह बहुत जरूरी है कि औद्योगिक शाति बनी रहे। समाजवादी लोकतन्त्र में मजदूर विकास के सामूहिक काम मे साझीदार होता है और उसमे उसे

उत्साहपूर्वक भाग लेना चाहिए। औद्योगिक सबधो का नियमन करने के लिए कुछ कानून बनाये गये है और प्रबधक और मजदूर दोनो अपनी जिम्मेदारियो को अधिकाधिक समझते जा रहे है और इसके फलस्वरूप सामूहिक दृष्टिकोण का विकास हुआ है। सयुक्त परामर्श की व्यवस्था होनी चाहिए और जहा कही सभव हो, श्रमिको और तकनीक जाननेवालो को उत्तरोत्तर प्रबध मे भागीदार बनाना चाहिए। इस विषय मे राजकीय क्षेत्रो को उदाहरण उपस्थित करना होगा।

१८ उद्योग और व्यापार के क्षेत्र मे राज्य के अधिकाधिक हिस्सा लेने के कारण यह बहुत महत्वपूर्ण हो गया है कि उन कामो को किस तरह चलाया जाय और कैसे उनका प्रबध किया जाय। यदि उन उद्योगो को कामयाब बनाना है तो निर्णय जल्दी लेने होगे और जिम्मेदारी स्वीकार करने की तैयारी रखनी होगी। इसके लिए, जहा भी सभव हो, सत्ता को विकेंद्रित किया जाय और उनका प्रबध व्यावसायिक आधार पर चलाया जाय। यह आशा की जायगी कि राजकीय उद्योग राज्य के राजस्व मे वृद्धि करें और नये क्षेत्रो मे अधिक विकास के लिए साधन उपलब्ध करे। किन्तु इन उद्योगो मे कभी-कभी नुकसान हो सकता है। राजकीय उद्योगो का मूल्यांकन उनके सपूर्ण परिणामो से करना होगा और उन्हे अपने कार्य-सचालन मे यथासभव अधिक-से-अधिक स्वतत्रता मिलनी चाहिए।

सूची—क

१ हथियार और गोलाबारूद तथा सुरक्षा सामग्री की अन्य चीजे ।

२ आणविक शक्ति ।

३ लोहा और इस्पात ।

४ लोहे और इस्पात की भारी ढलाई और निर्माण ।

५ लोहा और इस्पात उत्पादन के लिए, खानो की खुदाई के लिए, मशीनी औजार बनाने के लिए और केद्रीय-सरकार द्वारा निर्दिष्ट ऐसे अन्य बुनियादी उद्योगो के लिए भारी सयत्र और मशीनरी ।

६ भारी विद्युत सयत्र, जिसमे बडे जलीय और वाष्प टरबाइन भी शामिल हैं ।

७ कोयला और भूरा हल्का कोयला (लिगनाईट)

८ खनिज तेल ।

९ कच्चे लोहे, मैंगेनीज, क्रोम, जिप्सम, गधक, सोने और हीरे का खनन ।

१०. तावे, सीसे, जस्ते, टिन मोलिवडिनम और वुलफाम ।

११. आणविक शक्ति (उत्पादन और उपयोग नियत्रण) आदेश १९५३ की सूची मे निर्दिष्ट खनिज ।

१२ वायुयान ।

१३. वायुयान परिवहन ।

१४. रेल परिवहन ।

१५ जहाज निर्माण ।

१६ टेलिफोन और टेलिफोन तार, टेलिग्राफ (तार) और वेतार यत्र (रेडियो सेटो को छोडकर) ।

१७ विजली उत्पादन और वितरण

सूची—ख

१ अन्य सब खनिज, निम्न खनिजो को छोडकर जैसा कि खनिज रियायत नियम १९४९ की धारा ३ मे बताया गया है

२ एल्युमीनियम और अन्य अलौह धातुए, जो क-सूची मे शामिल नही है।

३ मशीनी औजार।

४ मिश्रित लोहा और औजारी उत्पात।

५ रासायनिक उद्योगो के लिए जरूरी बुनियादी और मध्यम उत्पादन, जैसे दवाए, रग और प्लास्टिक।

६ एटीबायोटिक और दवाए।

७ रासायनिक खाद।

८. कृत्रिम रबड।

९ कोयले की गैस।

१० रासायनिक गूदा।

११ सड़क परिवहन।

१२ समुद्री परिवहन।

परिशिष्ट—ग

राज्य-पुनर्गठन आयोग की रिपोर्ट

भाग चौथा अध्याय चौथा

भारत की एकता

अव हम अपने निर्दिष्ट लक्ष्य के अतिम चरण पर पहुच गये है। राज्यो के पुनर्गठन की समस्या से ऐसा तीव्र भावावेश उठ गया है और परस्पर-विरोधी दावे खड़े हो गये हैं कि वह सारी पृष्ठभूमि, जिसको आधार मानकर इस समस्या पर विचार किया जाना चाहिए, लुप्त या विलीन होने लगी है। अत. हमने अपने प्रस्तावो पर एक सतुलित दृष्टि से विचार करने के लिए दो मौलिक तथ्यो पर जोर देना उचित समझा है। पहला तथ्य यह है कि भारत के सभी राज्य, चाहे वह पुनर्गठित हो या न हो, भारत-सघ के अभिन्न अग हैं और रहेगे। भारत-सघ ही हमारी सच्ची राजनीतिक सत्ता है और वही हमारी राष्ट्रीयता का एकमात्र आधार भी है। दूसरा तथ्य यह है कि भारतीय सविधान केवल एक ही नागरिकता को मान्यता देता है जो सारे देश की जनता के लिए एक और सामान्य है और जिसके अतर्गत भारत भर मे सबको समान अधिकार व अवसर प्राप्त है।

सभवत, यह जान पडेगा कि ऐसा कहकर हमने केवल एक सर्वविदित बात को दुहरा भर दिया है। लेकिन यह मालूम होना चाहिए कि अगर इन महत्वपूर्ण तथ्यो की गुत्थियो को समझा और पूर्णरूपेण स्वीकार कर लिया जाता तो क्षेत्र-वितरण की समस्या एक महान और चिंताजनक राष्ट्रीय समस्या के रूप मे नही बढ पाती। अपनी जाच के सिलसिले मे कई जगह हमे यह देखकर दु ख हुआ कि कुछ इलाको मे एक प्रकार का सीमायुद्ध चल रहा है। इस द्वन्द्व मे आजादी की लड़ाई मे एक साथ लड़नेवाले सिपाही अब एक-दूसरे के विरुद्ध कटु विवाद मे डटे हुए है।

वह शायद यह भूल गये है कि राज्य एक ही राजनीतिक-शरीर के अंग-प्रत्यंग हैं और इस वजह से उनके आपसी क्षेत्रीय-पुनर्गठन का रूप विदेशी राज्यों के बीच होनेवाले झगड़ों के समान नहीं होना चाहिये। प्रादेशिकता और साम्प्रदायिकता की भावना को उत्तेजित कर लोगों को क्षुब्ध करना, बड़े पैमाने पर प्रव्रजन की धमकी देना, और इस तरह की बातें करना कि यदि किसी भाषा-भाषी-वर्ग को अलग प्रशासनिक इकाई न बनाया गया तो उसका नैतिक-पतन और भौतिक-विनाश अनिवार्य है, तथा गोलपाड़ा, पारलकीमेडी, लुधियाना और अमृतसर की घटनाओं जैसी सभी बातें लोगों में समझ और संतुलन का अभाव जाहिर करती है।

नियमो को न केवल जन-सेवाओ मे प्रवेश करने के लिए ही, वल्कि ठेके-दारी देने, मछली पकडने, नाव चलाने, चुगी के पुलो, जगलो और आव-कारी की दूकानो के वारे मे अधिकार देने के लिए भी लागू किया जाता था । इस राज्य मे अधिवास प्राप्त करने के लिए आवश्यक शर्ते भी ध्यान देने योग्य है । वे यह है—(क) प्रार्थी का मकान उसी राज्य मे हो । (ख) उसमे वह दस साल रहा हो । (ग) मृत्यु तक उसकी उस राज्य मे ही रहने की प्रत्यक्ष इच्छा हो, और (घ) वह अपने पुराने अधिवास को त्याग दे । उसे इस वात से आका जायगा कि प्रार्थी के मूल निवासस्थास पर कोई जमीन-जायदाद या स्वार्थ और लगाव है या नही और वह वहा वरावर जाता है या नही ।

हमारी राय मे इस प्रकार की शर्ते न केवल भारतीय सविधान के १५वे, १६वे और १६वे अनुच्छेदो के विरुद्ध है, वल्कि भारतीय नाग-रिकता की भावना के मूल को ही नष्ट करती है । यद्यपि इन प्रतिवधो के विशुद्ध कानूनी पक्ष की जाच करना हमारा काम नही है, फिर भी हमे रत्ती भर भी सदेह नही है कि इनका मिला-जुला प्रभाव सविधान के अभिप्रायो का अतिक्रमण करता है ।

इस भाग के पहले अध्याय मे हम पहले ही यह प्रस्ताव कर चुके हे कि सविधान के अनुच्छेद ३७ (अ) (१) के अतर्गत, कुछ राज्यो मे लागू निवास-नियमो को रद्द करके समुचित ससदीय कानून वना दिये जाय ।

इसके अतिरिक्त हमे वताया गया है कि कुछ राज्य-सरकारो ने वाहरवालो के लिए सपत्ति-उपार्जन पर यद्यपि सिद्धात रूप मे कोई प्रतिवध नही लगाया, लेकिन व्यवहार मे ऐसे प्रतिवध लगा दिये है। स्पष्टत जहा कही भी इस प्रकार की प्रशासनिक कुवृत्तिया विद्यमान हो, वहा उनका तुरत निराकरण किया जाना चाहिये, अन्यथा सयुक्त भारतीय नागरिकता की भावना अर्थहीन सावित होगी ।

कुछ दूसरे उपाय भी है, जिन्हे अगर लागू किया जाय तो हमे विश्वास है कि देश की पृथकतावादी प्रवृत्तियो पर अकुश लगाया जा सकेगा । साथ ही उनसे अखिल-भारतीय नीतियो को सही

ढग से क्रियान्वित करने मे अधिक अतर्राज्यीय सहयोग प्राप्त हो सकेगा।

इस सबध मे हमारा पहला प्रस्ताव यह है कि जहातक हो सके अखिल-भारतीय सेवाओ की किसी भी श्रेणी मे नये प्रवेशकर्ताओ में से ५० प्रतिशत व्यक्ति सबद्धराज्यो से वाहर के लिये जाय। हमें ज्ञात हुआ है कि कुछ राज्य-सरकारो ने पहले ही से यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है कि प्रतिवर्ष भारतीय-प्रशासन-सेवा मे प्रवेश करनेवाला एक नया सदस्य राज्य के बाहर से लिया जाय। हमे मिली हुई सूचना के अनुसार, यह परिणाम भारतीय-प्रशासन-सेवा मे कर्मचारियो के वार्षिक-नियोजन का करीब-करीब एक-तिहाई हिस्सा है। सिद्धात के अलावा इस वात को जिस रूप मे स्वीकार किया गया है, उसमे इस तथ्य पर ध्यान नही दिया गया है कि भारतीय प्रशासन-सेवा के २५ प्रतिशत रिक्त स्थान तरक्किया देकर भर दिये जाते हैं। अत. हमारा प्रस्ताव है कि ५० प्रतिशतवाले हिसाव मे वे स्थान शामिल न किये जाय, जो उस राज्य मे नीचे की नौकरियो मे तरक्की देकर भरे जाते है, और इस सिद्धात को अखिल-भारतीय सेवाओ पर लागू किया जाय। इस प्रकार का यत्न भी किया जाना चाहिये कि अखिल-भारतीय सेवाओ मे राज्य के वाहर से भरती किये जानेवाले सदस्यो का अनुपात कर्मचारियो को केंद्र मे डेपुटेशन पर भेजने आदि विधियो के द्वारा घटाया नही जाय।

हम यह भी ठीक समझते है कि भारतीय प्रशासन-सेवा तथा भारतीय पुलिस-सेवा के अतिरिक्त कुछ और अखिल-भारतीय सेवाए स्थापित की जाय। हमे ज्ञात हुआ है कि कुछ समय से यह वात केंद्रीय-मंत्रालयो के विचाराधीन है कि कुछ खास तकनीकी विभागो के लिए कुछ अखिल भारतीय सवर्ग (कैडर) वने और विशेषत भारतीय इजीनीयर-सेवा फिर से चलाई जाय। महत्वपूर्ण विकास-योजनाओ को क्रियान्वित करने के सिलसिले मे केंद्रीय और राज्य-सरकारो को काफी निकट सहयोग करना पडता है। इस कार्य में तकनीकी जानकारो को सामान्य आधार पर भरती और प्रशिक्षित करने की जरूरत होती है। यह भी जरूरी होता है कि उनकी दक्षता के स्तर सामान्य हो और उनमें यह सद्भाव हो कि वे एक महत्वपूर्ण और सामान्य सवर्ग के पदाधिकारी है।

अत हम भारतीय इजीनियर-सेवा, भारतीय वन-सेवा और भारतीय चिकित्सा एव स्वास्थ्य-सेवा की स्थापना करने की सिफारिश करते है।[1]

अलग या सामूहिक रूप मे अखिल-भारतीय सेवाओ की स्थापना का औचित्य यह हे कि वे अफसर, जिनके सिर पर भविष्य मे प्रशासन का वोझ पडेगा, एक अखिल-भारतीय दृष्टिकोण अपना सके। लेकिन यदि अखिल-भारतीय सेवाओ के सदस्य ज्यादातर एक ही विभाग मे या केंद्रीय-सरकार के पास डेपुटेशन मे रखे जाने लगे, तो यह लाभ निरर्थक साबित हो जायगा। केंद्रीय-सरकार अखिल-भारतीय सेवाओ के मामले मे पहले ही से जागरूक है और वह कर्मचारियो की राज्यो मे वदली करने की नीति को नियमित रूप से लागू करने का प्रयत्न करती है। यह कहना कठिन है कि केंद्रीय-सरकार ने जिस नियम को सिद्धात रूप मे माना है, वह कहातक कार्य-रूप मे आसान रहता है। लेकिन हमने जिस ढाचे का प्रस्ताव किया हे, उसमे केंद्र और राज्यो के वीच कर्मचारियो के बराबर तवादले का होते रहना और भी महत्वपूर्ण होगा।

एक दूसरी वात जिस पर हम जोर देना चाहेगे, वह यह है कि परीक्षणकालीन प्रशिक्षण मे अखिल-भारतीय और केंद्रीय सेवाओ मे भरती होनेवालो के पाठ्यक्रम मे भारत का इतिहास, भूगोल, धर्म और रीति-नीति जैसे विषयो का ज्ञान अवश्य कराया जाना चाहिये। हम जानते है कि यदि प्रशिक्षणकाल को वढा दिया जाय तो भी इन विषयो का विस्तृत ज्ञान प्रदान करना सभव नही होगा। अधिक महत्व की वात यह है कि परीक्षा-कालीन कर्मचारियो को प्रशिक्षण पूरा करने के समय मे अखिल-भारतीय दृष्टिकोण अपना कर अपने-आपको आध्र, मराठा, तमिल या वगाली समझना भूल जाना चाहिए। आजकल विश्वविद्यालयो मे प्रादेशिक भाषाओ को जितना महत्व दिया जाने लगा है उससे अवश्य ही प्रादेशिकतावादी प्रवृत्तियो का विकास होगा। इस प्रवृत्ति का निरा-

१. इस सिफारिश को भारत-सरकार स्वीकार कर चुकी है।

करण करने के लिए ऐसे प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिये ओ अखिल-भारतीय दृष्टिकोण पर जोर दे। हमे ज्ञात हुआ है कि हाल ही मे निर्णय किया गया है कि भारतीय प्रशासन-सेवा मे प्रवेश करनेवाले नये सदस्यो के पाठ्यक्रम मे पहली पचवर्षीय योजना का विस्तारपूर्ण अध्ययन सम्मिलित कर दिया जाय । हमारा सुझाव है कि इसके अतिरिक्त, भारत के इतिहास, भूगोल, धर्म और रीति-नीति का आवश्यक ज्ञान भी अखिल भारतीय तथा केंद्रीय सेवाओ के पाठ्यक्रम मे सम्मिलित किया जाना चाहिए।

अखिल-भारतीय और केंद्रीय सेवाओ के सदस्यो के प्रशिक्षण के बारे मे हमारा एक और सुझाव भी है। भारत सघ के सरकारी कामो के लिए हिन्दी को क्रमशः मान्यता देना निस्सदेह राष्ट्रीय एकता का एक महत्वपूर्ण उपादान होगा। लेकिन यह भी बहुत जरूरी है कि हिन्दी के अतिरिक्त दूसरी भाषाओ को भी अखिल-भारतीय और केंद्रीय सेवाओ के प्रशिक्षण-कार्यक्रम मे अधिक महत्वपूर्ण स्थान दिया जाय। आजकल इसका अभाव पाया जाता है। भारत सरकार ने हाल मे एक नीति सबधी वक्तव्य अखिल-भारतीय सेवाओ में भरती के लिए भविष्य मे होनेवाली प्रतियोगी परीक्षाओ के माध्यम के विषय मे प्रकाशित किया है। इसमे इस सुझाव का उल्लेख किया गया है कि हिन्दी बोलनेवाले क्षेत्रो के परीक्षार्थियो को हिदी के अलावा एक अन्य भारतीय भाषा मे योग्यता की परीक्षा पास करने को कहा जाय। भारत सरकार की नीति की तफसील आगे चलकर निश्चित की जायगी। हम केवल इतना ही सुझाव देना चाहते है कि यह सिद्धात केंद्रीय सेवाओ पर भी लागू किया जाना चाहिए, और हम कहना चाहेगे कि इस सुझाव पर अमल सेवा-कर्म-चारियो को एक राज्य से दूसरे राज्य मे बदल सकने के लिए भी आवश्यक है। हिदी के अतिरिक्त दूसरी भारतीय भाषा दक्षिण भारत की कोई भाषा हो, तो अच्छा है।

शासन के प्रमुख अवयवो का गठन इस प्रकार करना चाहिए कि उनसे जनता मे विश्वास पैदा हो और प्रादेशिकतावादी प्रवृत्तियो पर रोक लगे। इस बात को ध्यान मे रखते हुए हम यह प्रस्ताव करेगे कि

प्रत्येक उच्चन्यायालय के न्यायाधीशो का एक-तिहाई भाग उस राज्य के बाहर से लिया जाय। न्यायाधीशो की नियुक्ति करने मे निस्सदेह व्यावसायिक अनुभव और योग्यता ही सर्वप्रमुख कसौटी होनी चाहिए। लेकिन हमने जो सुझाव दिये है उनके आधार पर न्यायाधीशो की नियुक्ति का वरण-क्षेत्र और भी बडा हो जायगा। साथ ही उसमे एक यह भी अच्छाई होगी कि न्यायाधिकारी वर्ग के ऊचे पदो पर नियुक्ति यथासभव उन्ही सिद्धातो के अनुसार होने लगेगी, जिनके अनुसार प्रशासनिक सेवा की होती है।

जैसा हम पहले ही कह चुके है, हिंदी को क्रमश सघ के राजकीय कार्यो के लिए अपनाना देश की एकता के लिए एक महत्वपूर्ण उपादान होगा। किंतु राष्ट्रीय भाषा को एकीकरण का पावन सूत्र बनने के लिए अधिक व्यापक होना चाहिये। अग्रेजी ने एक विदेशी भाषा होने के बावजूद, भारत के विभिन्न प्रदेशो के लोगो को एक दूसरे के नजदीक खीचा, क्योकि वह एक तरफ तो केंद्रीय और प्रातीय, दोनो स्तरो पर सरकारी भाषा थी, और दूसरी ओर वह देश भर मे उच्च शिक्षा का माध्यम थी। अत अग्रेजी प्रशासनकार्य और ऊचे विचारो के आदान-प्रदान का माध्यम बनी और उच्च शिक्षा-सस्थाओ मे समान मापदड बनाये रखने मे सहायक हुई।

कुछ हद तक हिंदी अग्रेजी का स्थान लेती जा रही है। राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी अग्रेजी की जगह आयगी, किंतु राज्यो मे प्रादेशिक भाषाए काफी हद तक उसकी उतराधिकारी हो जायगी। राजकीय-भाषा-आयोग, जिसे हाल मे सरकार ने नियुक्त किया है, निस्सदेह इस बात पर गौर करेगा कि हिंदी को राजकीय भाषा बनाने के लिए सबद्ध सवैधानिक उपबधो को किस तरह लागू किया जाय। फिर भी यह बिल्कुल स्पष्ट है कि अग्रेजी के स्थान पर हिंदी को बैठाने का काम इस प्रकार व्यवस्थित होना चाहिये जिससे देश के विभिन्न भागो मे सामाजिक और राजनीतिक आदान-प्रदान की दृष्टि से कोई रिक्त स्थान पैदा न होने पाये और देश के उच्च शिक्षा के स्तर को नुकसान न पहुचने पाये।

देश की शिक्षा के स्तर मे किसी भी सभावित हानि को गहरी चिंता

की दृष्टि से देखना चाहिए, क्योकि सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और तकनीकी क्षेत्रो मे बढते हुए विकास के लिए भारत को उच्च कोटि के व्यक्तियो की जरूरत पडेगी, जिनके प्रशिक्षण का बोझ भी हमारी शिक्षाव्यवस्था पर पडेगा।

इस देश मे उच्च शिक्षा के लिए विद्यार्थियो को जहा चाहे वहा पढ सकने की और विश्वविद्यालयो और दूसरी सस्थाओ मे परस्पर आवागमन की जो सुविधा रही, उसका केवल यही कारण नही था कि अग्रेजी अब-तक शिक्षा का माध्यम रही, बल्कि यह भी था कि साधारणतया शिक्षा और शोध के स्तर प्राय समान थे। अब इनमे से कुछ सस्थाए प्रादेशिक भाषाओ को अपना माध्यम बनाने का विचार कर रही है। किंतु यदि इनमे अग्रेजी को असमय ही हटा दिया गया और उस भाषा मे शोध के लिए आवश्यक योग्यता प्रदान करने के साधन नही जुटाये गए, तो उच्च शिक्षा के स्तर को काफी क्षति पहुचेगी।

याद रहे कि अग्रेजी एक महत्वपूर्ण अतर्राष्ट्रीय भाषा है और इसका ज्ञान भारतीय छात्रो के लिए अन्य प्रगतिशील देशो द्वारा उच्च अध्ययन के परिणामो को जानने का द्वार खोल देता है। जैसा कि माध्यमिक शिक्षा आयोग ने बताया है, दुनिया के अनेक देशो मे अग्रेजी तथा अन्य भाषाओ का ज्ञान प्राप्त करने की व्यवस्था की गई है। उदाहरण के लिए, सोवियत रूस को ले, वहा मिडिल या माध्यमिक शिक्षा के स्कूलो मे कोई एक विदेशी भाषा अनिवार्य रूप से पढाई जाती है। अत प्रादेशिक भाषाओ को शिक्षा का माध्यम बनाने के बाद भी हमे अपनी प्रमुख शिक्षा-सस्थाओ मे अग्रेजी और अन्य विदेशी भाषाओ की पढाई की व्यवस्था करनी ही पडेगी।

हम हिंदी तथा प्रादेशिक भाषाओ की पढाई का महत्व पूरी तरह समझते है, फिर भी हमारा विचार है कि उच्च औद्योगिक शिक्षा के लिए अग्रेजी का जो इस्तेमाल हो रहा है, वह इन भाषाओ के विकास मे बाधा नही डालता।

राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से, यह बहुत ही महत्व की बात है कि उत्तर और दक्षिण भारत मे निकटतर सपर्क हो। वे सभी सस्थाए और

सगठन, जो इस सपर्क मे सहायक हो, उन्हे भारत सरकार की ओर से विशेप प्रोत्साहन मिलना चाहिये। हैदरावाद का उस्मानिया विश्व-विद्यालय इसी प्रकार की एक सस्था है। हमारा प्रस्ताव है कि इस विश्वविद्यालय को केंद्रीय सरकार के आधीन रखा जाय। इसमे शिक्षा का स्तर काफी ऊचा किया जाय। यह समीपवर्ती इलाको से विद्यार्थियो को आकर्षित करेगा और दक्षिण भारत के लिए उपयोगी होगा।

हम और अधिक दक्षिण मे, एक और केंद्रीय विश्वविद्यालय स्थापित करने का सुझाव देगे, जहा हिंदी पर खास तौर से जोर दिया जाय। इसी प्रकार उत्तर के विश्वविद्यालयो मे दक्षिण भारत की भाषाओ और सस्कृत को पढाने की सुविधाए होनी चाहिये।

पिछले पैराग्राफो मे हमने जो सुझाव पेश किये है उनका उद्देश्य अधिकतर प्रशासनिक एकता पैदा करना और पृथकता की उन प्रवृत्तियो को रोकना है जो स्वय प्रशासन के अदर और सारे देश मे पनप सकती है। यद्यपि ये कार्रवाईया महत्वपूर्ण है, तथापि ये स्वय अपने मे भारतीय राष्ट्रीयता की आधार-शिला को मजवूत बनाने के लिए सब-कुछ नही है। राष्ट्रीय एकता एक प्रबल और सजीव शक्ति बन कर राष्ट्र को विभाजन और सकीर्ण प्रवृत्तियो से तभी बचा सकती है जब लोगो के मन और भावनाओ का सच्चा एकीकरण हो चुका हो। सौभाग्य की बात है कि उस एकीकरण मे हाथ बटानेवाली शक्तिया पहले से सक्रिय है। अब आवश्यकता इस बात की है कि उन शक्तियो के उन्मुक्त सचरण मे कोई अवरोध न आने पाये। समाप्त करने से पहले हम इस विषय पर कुछ और कहना चाहेगे।

आज भारत मे महान सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन होनेवाले है। इन परिवर्तनो का असर हरेक सस्था पर पडेगा और इसलिये हमारी परंपरागत विचारपद्धति और रहन-सहन के तरीको की बार-बार समीक्षा करते रहने की आवश्यकता होगी।

देश ने आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक समानता के आदर्श को अपनाया है और यह आज की एक महत्वपूर्ण घटना है। समानता के इस आदर्श को साकार करने के मार्ग मे जो कठिनाइया है, और जिन्हे

दूर करने की सरकार ने ठानी है, हम उनका महत्व कम करना नही चाहते, फिर भी यह बात प्रगति की द्योतक है कि तुलनात्मक दृष्टि से समाज के पिछड़े हुए वर्गों पर भी आज ध्यान दिया जारहा है। इस तरह देश के राजनीतिक गठन की एक निर्बलता क्रमश दूर होती जारही है।

अब एक और महत्वपूर्ण शक्ति की ओर ध्यान देने की जरूरत है, जो बडे पैमाने पर लोगो की आतरिक विस्थापना के कारण भाषा सबधी स्थिति को स्थिर नही रहने देती। आर्थिक अवसरो और आवागमन के साधनो के विकास से विगत वर्षो मे भारत सघ के अदर सामान्य गतिशीलता बढती जारही है। यहातक कि व्यक्तिगत कानूनो, (जिनमे हिंदू समाज मे उत्तराधिकार का वह कानून भी है, जिसे अब तक परिवर्तन शून्य समझा जाता था) के सबध मे बहुत पुराने विचारो मे भी प्रगतिशील और आधुनिक समाज की जरूरतो के अनुसार परिवर्तन आरहे हैं। उद्योगीकरण मे महान अभिवृद्धि के कारण, जो केंद्र के तत्वावधान मे आयोजित होरहा है, लोगो को अपना निवास-स्थान बदल लेने की प्रवृत्ति मे और भी वृद्धि होने की सभावना है। इसके फलस्वरूप सारे देश मे ऐसे शहरो या छोटी आबादियो का पनपना अनिवार्य है, जिनकी विशेषता उनकी प्रातीयता होगी।

इस देश मे आर्थिक आयोजन का जो क्रम अपनाया गया है उसके बहुत बडे परिणाम निकलेगे। जब साधनो का प्रयोग और धनविनियोग प्रदेश या राज्य के स्तर पर न होकर राष्ट्रीय स्तर पर होगा, तब सभी राज्य अनिवार्य रूप से राष्ट्र की आर्थिक प्रगति मे सयुक्त रूप मे योग देकर अधिक-से-अधिक एक सूत्र मे आबद्ध होगे।

राज्यो के पुनर्गठन के सबध मे अपने सुझावो का प्रतिपादन करते समय हम स्वभावत इस विचार से अधिक चिंतित रहे है कि विभिन्न दृष्टिकोणो मे अधिकतम समझौता किस प्रकार कराया जाय। लेकिन हमने उन गतिशील शक्तियो पर भी गौर किया है, जिनका उल्लेख हम पिछले पैरागाफो मे कर चुके हैं। जब हम इस बात पर जोर देना

चाहते है कि ठीक अर्थों मे राज्यो मे पुनर्गठन का तात्पर्य आपसी तनावो को दूर करने के लिए आवश्यक पुनर्व्यवस्था करना और सघ को अधिक प्रभावशाली ढग से काम करने मे सहायता देना ही है।

भारत सघ ही हमारी राष्ट्रीयता का आधार है और इसी सघ मे हमारे भविष्य की आशाए केद्रित है। सभी राज्य उस सघ के अग मात्र है। हम मानते है कि शरीर के अगो का स्वस्थ और मजबूत होना बहुत आवश्यक है और उनकी सभी प्रकार की कमजोरी दूर की जानी चाहिये। लेकिन भारत सघ की शक्ति और उसके पनपने और विकसित होने की क्षमता ही देश के समस्त परिवर्तनो का सर्वोपरि आधार होना चाहिए।

भारत जैसे विशाल देश मे प्रादेशिकता का न्यायोचित स्थान है, किंतु जबतक प्रादेशिकता की सीमाए नही समझ ली जाती और जब-तक देश की केवल सामाजिक विचारधारा मे ही नही, बल्कि आर्थिक विचारधारा मे भी सघ की सर्वोच्चता स्वीकार नही कर ली जाती, तबतक राष्ट्र की दृष्टि से हम लोगो के लिए वह कमजोरी की जड बनी रहेगी। अगर इस बात को जनता ने समझ लिया तो हमे कोई शंका नही कि राज्यो के पुनर्गठन के कारण पैदा होनेवाली समस्याए विशाल राजनीतिक विवादो का रूप धारण नही कर सकेगी।

स्वतत्र भारत प्रगति के पथ पर अग्रसर हो रहा है। जो कुछ भी सफलता हमे मिली है उस पर सही मानो मे गर्व किया जा सकता है। देश के विभाजन के बाद पैदा होने वाली परेशानी और चितापूर्ण परि-स्थितियो मे भारतीय रियासतो की दुस्तर समस्या को जिस विधि मे सुलझाया गया, वह स्वय भारतीय जनता की राजनीतिक शक्ति और बुद्धिमत्ता और कृत्रिम बधनो तथा सकीर्ण वफादारियो का उन्मूलन करने के लिए उसकी दृढता का परिचायक है।

हम इस कामना के साथ निर्णय करते है कि हमारी पुनर्गठन योजना पर इसी पृष्ठभूमि को ध्यान मे रखकर विचार किया जायगा, और सद्भावना रखनेवाले लोग उन लोगो से सहयोग करेंगे,

जिन पर समझ-बूझ और सहिष्णुता के वातावरण में राष्ट्रीय हित को दृष्टि मे रखते हुए परस्पर विरोधी दावो और प्रादेशिक भावनाओ को सतुलित करने तथा सभावित निर्णयो को क्रियान्वित रूप देने की भारी जिम्मेदारी डाली गई है।

परिशिष्ठ—घ

क्षेत्रीय-विकास के कुछ निर्देशक[1]

कृपि—कुछ दृष्टियो से देश के विभिन्न भागो मे विकास के बुनियादी पहलू कृपि-उत्पादन की प्रगति से सबधित है। यह कुछ तो पूजी विनियोजन और सरकारी-सगठन का परिणाम हो सकता है और कुछ अन्य तत्त्वो ने योग दिया हे। नीचे की तालिका से प्रकट होता है कि विभिन्न राज्यो मे कितनी वृद्धि हुई ·

खाद्यान्न

(दस लाख टन मे)

क्षेत्र	१९४९-५०	१९५३-५४	१९६०-६१	१९६५-६६ (प्रस्तावित)	दस वर्षों मे % वृद्धि (पहली और दूसरी योजना)	पन्द्रह वर्षों मे % वृद्धि पहली, दूसरी और तीसरी प्रस्तावित योजना
उत्तरी	८ ५	९ ५	११ ३	१५ १	५१	७८
मध्यवर्ती	१६ ९	१९ ५	२३ ८	२९ ०	४१	७२
पूर्वी	१४ ३	१४.४	१८ ८	२२ ८	३१	५९
पश्चिमी	६ ७	७ ३	९ ०	१० ९	३४	६३
दक्षिणी	१० ७	१४ ७	१५ ९	२१ ९	४९	१०५
सब क्षेत्र (सघीय क्षेत्रो को छोडकर)	५७ १	६५ ४	७८ ८	९९ ७	४१	७५

[1] भारत के विभिन्न क्षेत्रों मे आर्थिक विकास-योजना आयोग, नई दिल्ली के प्रकाशन से उद्धरित।

इसी प्रकार की जानकारी अगली तालिकाओ मे कपास, तिलहन, गन्ना और पटसन के बारे मे दी गई है।

कपास

(लाख गांठे)

क्षेत्र	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१	१९६५-६६ (प्रस्तावित)	१० साल मे %वृद्धि पहली और दूसरी यो०	१५ साल मे %वृद्धि पहली दूसरी और ती० यो० प्रस्तावित
उत्तरी	४ ४	७ ९	९ ४	१५ ५	११४	२५०
मध्यवर्ती	३ २	४ ३	५ ०	९ ०	५६	१८१
पूर्वी	० १	० १	० १	१ २	—	११००
पश्चिमी	१४ ४	१९.२	३० १	२९ ३	१०९	१०३
दक्षिणी	६ ९	८ ४	९ ३	१५ ६	३५	१२६
सब क्षेत्र (सघीय क्षेत्रो को छोडकर)	२९ ०	३९ ९	५३ ९	७० ६	८४	१४३

सिंचाई और बिजली—पचवर्षीय योजनाओ मे सिंचाई और बिजली के विकास पर काफी ध्यान दिया गया है। सिंचाई और बिजली कीपरि-योजनाए राज्यो की योजनाओ मे दिखाई जाती है। बिजली परि-योजनाओ का, विशेष रूप से, उद्योगो के विकास के साथ घनिष्ठ सबध है और किसी एक क्षेत्र मे बिजली विकास का स्तर मुख्यत राष्ट्रीय जरूरतो को ध्यान मे रखकर किया जाता है। कुछ सिचाई परियोजनाओ का जन्म राष्ट्रीय स्वरूप को ध्यान मे रखकर हुआ है। उदाहरण के लिए राजस्थान-नहर और व्यास-योजनाओ का नाम लिया जा सकता है। आमतौर पर, बडी और मध्यम आकार की सिंचाई परियोजनाए अपने-आप मे ही नही, बल्कि काफी बडे क्षेत्रो के विकास की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। बिजली उद्योगो की कुजी है और कृषि तथा छोटे उद्योगो के विकास के लिए भी जरूरी है। इसलिए बिजली का भावी-विकास के लिए काफी महत्व है।

प्रथम दो पचवर्षीय योजनाओ मे सिंचाई क्षेत्र मे ४२ प्रतिशत वृद्धि हुई है और तीसरी योजना के अत तक ८८ प्रतिशत तक बढने की आशा है। क्षेत्रो के अनुसार इस वृद्धि को नीचे दिखाया गया है

सिंचाई का क्षेत्र (समष्टि)

(दस लाख एकड)

क्षेत्र	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१	१९६५-६६	दस सालों वर्षों मे % वृद्धि (पहली और दूसरी योजना)	१५ वर्षो मे % वृद्धि (पहली, दूसरी और तीसरी योजना प्रस्तावित
उत्तरी	११ ३	१३ ६	१५ ७	१६ ७	३९	७४
मध्यवर्ती	१५ १	१५ ४	१९ ८	२५ ४	३१	६८
पूर्वी	११ ९	११ ७	१७ ९	२४ ५	३०	१०६
पस्चिमी	३ १	४ ०	५ ०	९ ०	६१	१९०
दक्षिणी	१४ ०	१८ १	२० ४	२५ ८	४६	८४
सब क्षेत्र (सघीय क्षेत्रोको छोडकर)	५५ ४	६२ ८	७८ ८	१०४.४	४२	८८

विभिन्न क्षेत्रो मे बिजली-विकास और शहरो तथा गावो को बिजली देने सबधी प्रगति को निम्न दो तालिकाओ मे दर्शाया गया है।

विद्युत-उत्पादन-क्षमता के तुलनात्मक विकास का सही अनुमान करने के लिए यह जरूरी होगा कि सपूर्ण आवश्यकताओ और पचवर्षीय योजनाओ के शुरू मे विकास-स्तर को ध्यान में रखा जाय।

बिजली—प्रस्थापित बिजली बनाने की क्षमता

(मगावाट)

क्षेत्र	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१	१९६५-६६ (प्रस्तावित)	दस वर्षों मे % वृद्धि (पहली और दूसरी योजना)	१५ वर्षों मे % वृद्धि पहली, दूसरी और तीसरी योजना प्रस्तावित
उत्तरी	९८	२३६	४५७	१,१०४	३६६	१०२६
मध्यवर्ती	२२६	४६५	७६५	१,८४४	२३८	७१६
पूर्वी	५७५	१,१४७	१,८६४	३,२५४	२२४	४६६
पश्चिमी	४३८	८०८	१,२००	२ २१४	१७४	६०५
दक्षिणी	३२०	६२६	१,१७४	२,८५६	२५६	७६५
स्वय-बिजली बनानेवाली इकाइयां	५००	उपरोक्त क्षेत्रीय अको मे शामिल	उपरोक्त क्षेत्रीय अको मे शामिल	१,४४६	—	१४६
सब योग (समीप [illegible])	२,३[illegible]	३,२६२	५,४६०	१२,[illegible]१८	१४२	४६३

रेल-मार्ग की लंबाई
(मीलों मे)

क्षेत्र	दूसरी योजना के शुरू मे	दूसरी योजना की अवधि मे वृद्धि	दूसरी योजना के अत मे कुल लवाई
उत्तरी	५,५५७	४७	५,६०४
मध्यवर्ती	८,३०१	२२०	८,५२१
पूर्वी	६,७५५	२०१	६,९५६
पश्चिमी	६,३१९	२०५	६,५२४
दक्षिणी	७,१५५	९८	७,२५३
सब क्षेत्र (संघीय क्षेत्रो को छोडकर)	३४,०८७	७७१	३४,८५८

परिवहन पर विचार करते समय, राष्ट्रीय और क्षेत्रीय जरूरतो के समस्त क्षेत्र की पूर्ति करनेवाले विभिन्न माध्यमो, जैसे सडके, वदरगाह आदि का खयाल रखना चाहिए। इस प्रकार दूसरी योजना की अवधि मे वदरगाहो मे ४५ करोड रुपये की पूजी लगी और तीसरी योजना मे यह राशि ७५ करोड रुपया होगी। इस पूजी को पूर्वी, पश्चिमी और दक्षिणी क्षेत्रो मे करीब-करीब बराबर बाटा गया है।

मानव साधनो का विकास—मानव साधनो का विकास कुछ अर्थो मे आर्थिक विकास का सब से महत्वपूर्ण पहलू है। इस क्षेत्र की प्रगति बहुत ठीक-ठीक नही आकी जा सकती, क्यो कि सख्या के मुकावले गुण का महत्व कम नही होता इसलिए उसका कुछ हिसाब इस तरह प्रस्तुत किया जा सकता है कि विभिन्न क्षेत्रो के दो चुने क्षेत्रो मे दूसरी योजना के अत तक क्या प्रगति होने की आशा की जाती है।

(१) ६ से ११ वर्ष के बच्चों के लिए शैक्षणिक सुविधाएं

क्षेत्र	१९५५-५६ प्रतिशत	१९६०-६१ प्रतिशत	१९६५-६६ प्रतिगत
उत्तरी	३८.६	५१.३	७०.७
मध्यवर्ती	३५ ६	४५ ९	६२ ४
पूर्वी	४९.३	५७ ३	७२.२
पश्चिमी	६६ ४	७२ ९	८८.३
दक्षिणी	६७ ४	७४ ७	९३ ५
नव क्षेत्र (सघीय क्षेत्र छोडकर)	५१ ८	६० ७	७७ ४

(२) अस्पतालो मे रोगी-शैया-सुविधाएं

क्षेत्र	१९६०-६१ कुल सख्या	१९६०-६१ प्रति दसलाख जन-सख्या	१९६५-६६ कुल सख्या	१९६५-६६ प्रति दसलाख जन-सख्या
उत्तरी	२४,०३०	६०५	२९,२८०	६६७
मध्यवर्ती	२९,९२०	२८२	३९ ७५८	३४३
पूर्वी	४४,१६०	४३९	५५,५९०	५०१
पश्चिमी	१६ ०००	२६६	३९,८६६	२९६
दक्षिणी	६२,४७५	५६८	८०,७५१	६७५
नव क्षेत्र (सघीय क्षेत्रो छोडकर)	१,३६,५८५	४८५	२,२५,२४५	५२२

वे यथासभव समान स्तर पर आ सके। इस प्रकार ६ से ११ वर्ष के बच्चो के लिए आम शिक्षा, शुद्ध पीने के पानी की उपलब्धि, सब विकास खडो मे प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्रो की स्थापना, विकास-खड और ग्राम-स्तर पर विस्तार सेवाओ की उपलब्धि, और ग्राम एव लघु उद्योगो और औद्योगिक बस्तियो का विकास आदि ऐसे काम हैं जो यद्यपि सुविधा के लिए राज्यो की योजनाओ मे शामिल किये गए हे तथापि वास्तव मे क्षेत्रो या राज्यो की अपेक्षा राष्ट्रीय लक्ष्य हे। वास्तव मे, विकास कार्यो का एक व्यापक क्षेत्र हे, जिसमे राज्यो की योजनाओ और जिला विकास-खंड और ग्राम-स्तर की योजनाओ के जरिये विकास का स्वरूप समान राष्ट्रीय ध्येय पर आधारित है और उसके साथ यह सभावना जुडी हुई है कि विकास अतत अन्य योजनाओ से मिलकर न केवल बराबर-बराबर होगा, बल्कि देश के विभिन्न भागो मे रहन-सहन, आय और उत्पादन-क्षमता के स्तर भी न्यूनाधिक समान होगे।

परिशिष्ट (ङ)

केन्द्रीय सरकार की औद्योगिक परियोजनाओं के स्थान

क—द्वितीय पंचवर्षीय योजना

	राज्य
क. उत्तरी क्षेत्र	
१ नागल रासायनिक खाद कारखाना	पंजाब
ख. मध्यवर्ती क्षेत्र	
२ भिलाई इस्पात कारखाना	मध्य प्रदेश
३ भारी विद्युत सामग्री परियोजना	,,
ग पूर्वी क्षेत्र	
४ सिंद्री रासायनिक खाद कारखाना	बिहार
५ ढलाई परियोजना	,,
६. भारी मशीनी परियोजना	,,
७. भारी मशीनी औजार परियोजना	,,
८ रूरकेला इस्पात कारखाना	उड़ीसा
९ रूरकेला रासायनिक खाद परियोजना	,,
१०. दुर्गापुर इस्पात कारखाना	पश्चिमी बंगाल
११ हिन्दुस्तान केबल्स	,,
१२ टाटा इण्डियन स्टील कम्पनी (विस्तार)	,,
घ. पश्चिमी क्षेत्र	
१३. हिन्दुस्तान एण्टीबायोटिक्स	महाराष्ट्र
ङ. दक्षिणी क्षेत्र	
१४. हिन्दुस्तान शिपयार्ड (जहाजनिर्माण)	आंध्रप्रदेश

१५. दक्षिण आरकट लिगनाइट (कोयला) परियोजना	मद्रास
१६. हिन्दुस्तान मशीनी औजार	मैनूर

ख—तीसरी पंचवर्षीय योजना

क उत्तरी क्षेत्र	
१ न्यू मशीनी औजार वर्क्स	पजाब
२ सूक्ष्म औजार परियोजना	राजस्थान
ख मध्यवर्ती क्षेत्र	
३ भारी विद्युत परियोजना	मध्य प्रदेश
४ भिलाई इस्पात कारखाने का विस्तार	,,
५ भारी विद्युत सामग्री परियोजना का विस्तार	,,
६ सिक्युरिटी कागज मिल	,,
७ बुनियादी काच प्रतिबिम्ब	,,
८ नेपा कागज मिल का विस्तार	,,
९ एण्टीबायोटिक (औषधि) कारखाना	उत्तर प्रदेश
१०. राजकीय वनस्पति तत्त्व कारखाने का विस्तार	,,
११. गोरखपुर रासायनिक खाद कारखाना	,,
१२. द्वितीय भारी विद्युत सामग्री परियोजना	,,
ग पूर्वी क्षेत्र	
१३ नाहरकटिया रासायनिक खाद कारखाना	असम
१४ नूनमाटी तेल शोधक कारखाना	असम
१५. ढलाई परियोजना	बिहार
१६. भारी मशीनी परियोजना	,
१७ बरौनी तेलशोधक कारखाना	,,
१८ भारी मशीनी परियोजना का विस्तार	,,

१९.	ढलाई परियोजना का विस्तार	
२०.	बोकारो इस्पात कारखाना	,,
२१.	भारी मशीनी औजार परियोजना	,,
२२	रूरकेला रासायनिक खाद कारखाना	उडीसा
२३	रूरकेला इस्पात कारखाने का विस्तार	,,
२४.	दुर्गापुर इस्पात कारखाना	पश्चिमी बंगाल
२५.	खनिज मशीन परियोजना	,,
२६	खनिज मशीन परियोजना का विस्तार	,,
२७.	दुर्गापुर इस्पात कारखाने का विस्तार	,,
२८	चश्मो के शीशो का कारखाना	,,
२९	मिश्रित धातु और औजार इस्पात कारखाना	,,
३०	हिन्दुस्तान केबल्स का विस्तार	,,
घ. पश्चिमी क्षेत्र		
३१.	हिन्दुस्तान एण्टीबायोटिक (औषधि) परियोजना	महाराष्ट्र
३२.	आर्गेनिक इण्टरमीडियेट कारखाना	महाराष्ट्र
३३	ट्राम्बे रासायनिक खाद कारखाना	,,
३४	भारी स्ट्रक्चरल वर्क्स	,,
३५	भारी प्लेट और वेसल्स वर्क्स	,,
३६.	गुजरात तेल शोधन कारखाना	गुजरात
ट दक्षिण क्षेत्र		
३७	कृत्रिम औषधि परियोजना	आन्ध्रप्रदेश
३८.	प्राग औजार कारखाने का विस्तार	,,
३९.	तीसरा भारी विद्युत सामग्री परियोजना	,,
४०.	हिन्दुस्तान शिपयार्ड (शुष्क तट)	,,
४१	हिन्दुस्तान शिपयार्ड का विस्तार	,,
४२.	कच्ची फिल्म परियोजना	,,
४३.	नेवेली रासायनिक खाद कारखाना	,,

४४.	कोयला राख और कार्बनीकरण कारखाना	आन्ध्रप्रदेश
४५	नेविली कोयला विद्युत कारखाना	"
४६.	नेविली कोयला उच्चताप कार्बनीकरण कारखाना और लोह पिण्ड उत्पादन सबधी सुविधाए	"
४७	सूक्ष्म औजार परियोजना	केरल
४८	वनस्पति रासायनिक कारखाना	"
४९	एफ० ए० सी० टी का विस्तार	"
५०.	दूसरा शिपयार्ड	"
५१.	हिन्दुस्तान मशीनी औजार का विस्तार	मैसूर
५२	घडी कारखाना	"

परिशिष्ट—च

लोकतंत्र और समाज़वाद पर कांग्रेस का प्रस्ताव[1]

भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने, विदेशी शासन से देश को मुक्ति दिलानेवाली सस्था के रूप मे, अपने सम्मुख न केवल राजनीतिक स्वतत्रता का उद्देश्य बल्कि एक सामाजिक उद्देश्य भी रखा था। राष्ट्रीय-आदोलन के इस सामाजिक उद्देश्य ने गाधीजी द्वारा नेतृत्व सभालने के बाद अधिक प्रमुखता प्राप्त की। इस उद्देश्य की अभिव्यक्ति काग्रेस के कई प्रस्तावो मे हुई, जिनमे १९३१ का कराची प्रस्ताव उल्लेखनीय है। महात्माजी के विभिन्न रचनात्मक कार्यक्रमो, विशेषत साप्रदायिक एकता, अस्पृश्यता-निवारण, महिलाओ का सामाजिक उत्थान, ग्रामोन्नति तथा कुटीर-उद्योग इन सब का एक सामाजिक उद्देश्य था और इनसे जो नई शक्ति-पैदा हुई उससे स्वतन्त्रता-आदोलन को बल मिला।

(२) स्वाधीनता के बाद, शासन-भार सभालनेवाली पार्टी के रूप मे काग्रेस की यह जिम्मेदारी स्वाभाविक ही थी कि वह अपने इन सामाज़िक उद्देश्यो को यथार्थ रूप दे और अपनी लक्ष्य प्राप्ति के लिए सक्रिय क़दम उठाये। भारत के सविधान की प्रस्तावना और उसमे दिये गये निर्देशक सिद्धातो को इसी दृष्टि से निर्धारित किया गया और सविधान की स्वीकृति के बाद से ये सिद्धात हमारे राष्ट्रीय लक्ष्य और उद्देश्य बन गये।

आवडी प्रस्ताव

(३) इसी सदर्भ मे काग्रेस के १९५५ के आवडी अधिवेशन मे निश्चय किया गया कि काग्रेस के इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए तथा भारत के सविधान की प्रस्तावना और राज्य की नीति के निर्देशक सिद्धात

---

1 जनवरी १९६४ में भुवनेश्वर अधिवेशन में स्वीकृत।

के समर्थनों के लिए इस प्रकार आयोजन किया जाना चाहिये कि उसका लक्ष्य समाजवादी ढग के समाज की स्थापना हो और उस समाज मे उत्पादन के मुख्य साधनो पर सामाजिक स्वामित्व अथवा नियत्रण हो, तथा उत्पापन क्रमश बढता रहे और राष्ट्रीय आय का समुचित वितरण हो। १९५७ मे काग्रेस ने अपने सविधान की धारा (१) के रूप मे शातिपूर्ण और न्यायोचित उपायो द्वारा समाजवादी सहकारी सम्मिलित राज्य की स्थापना के उद्देश्यो को अपनी औपचारिक स्वीकृति प्रदान की। इस प्रकार "समाजवादी ढग के समाज" की स्थापना काग्रेस का लक्ष्य और उद्देश्य बन गया। काग्रेस अपने घटनापूर्ण इतिहास मे सदा ही इस उद्देश्य की ओर दृढता और सजगता के साथ बढती रही है।

(४) इसके बाद काग्रेस ने "समाजवाद के लिए आयोजन" के आधार पर दो आम चुनाव लडे और अधिकतर भारतवासियो ने इस नीति का समर्थन किया। विभिन्न पचवर्षीय योजनाओ को बनाते समय इस उद्देश्य को सदा सामने रखा गया और ससद ने भी आर्थिक विकास के लिये समाजवादी ढग को मान्यता प्रदान की।

(५) काग्रेस के दृष्टिकोण मे निहित उन मूल विचारो और कार्यक्रमो के प्रमुख अगो को प्रकाश मे लाना आवश्यक है, जिनके द्वारा समाजवादी उद्देश्य को ज्यादा अच्छी तरह कार्य रूप मे परिणित किया जाना है।

लोकतांत्रिक समाजवाद

(६) काग्रेस भारतीय समाज के आर्थिक और सामाजिक सबधो मे क्राति लाने के लिए काम कर रही है। यह क्राति लोगो के विचार और दृष्टिकोण मे और साथ ही उन सस्थाओ मे आमूल परिवर्तन द्वारा लानी है, जिनके जरिये उन्हे काम करना है। हमारा उद्देश्य मानवी तथा भौतिक साधनो के पूर्णतम और सर्वाधिक कार्यक्षम उपयोग द्वारा देश मे एक समृद्ध अर्थ-व्यवस्था कायम करना है, ताकि प्रत्येक व्यक्ति को खुशहाली का आश्वासन मिल सके। प्रत्येक व्यक्ति को समान अवसर और प्रगति के फल का एक उचित अश प्राप्त होना चाहिये। विशेपा-

धिकारो, विषमताओ और शोषण को समाप्त किया जाना चाहिये। यह परिवर्तन भारत के सविधान मे प्रतिष्ठापित लोकतत्रवादी तरीको और मूल्यो को सुरक्षित रखते हुए और उन्हे आगे बढाते हुए शातिपूर्ण साधनो द्वारा और जनता की सहमति से लाया जाना है। इस प्रकार काग्रेस की विचाराधारा, सक्षेप मे, लोकतत्र, व्यक्ति की गरिमा और सामाजिक न्याय पर आधारित लोकतान्त्रिक समाजवाद है।

गरीबी दूर करना

(७) समाजवादी समाज कायम करने के लिए मुख्य ध्येय गरीबी और उससे पैदा होनेवाली बुराइयो को दूर करना होना चाहिए। इसके लिए कृषि तथा साथ ही उद्योग के उत्पादन स्तर को अधिकाधिक ऊंचा उठाते हुए शीघ्रता के साथ आर्थिक उन्नति प्राप्त करना जरूरी है। हमारी अर्थ-व्यवस्था के धीमे विकास का कारण अभीतक अपनी जन-शक्ति और प्राकृतिक सपदा के पूर्ण उपयोग की हमारी असमर्थता रही है और यह विज्ञान एव तकनीक शास्त्र की उन्नति से पर्याप्त लाभ न उठाने के कारण है।

तकनीकों के स्तर मे सुधार

(८) उत्पादन का एक आधुनिक यत्र यथासभव शीघ्र कायम करना होगा, ताकि देश की अर्थ-व्यवस्था को एक ऐसी आधुनिक और कार्य-क्षम अर्थ-व्यवस्था मे बदला जा सके कि जिसमे एक उच्च स्तर का उत्पादन हो। भारत मे कृषि-व्यवस्था पिछडी हुई है। कृषि उत्पादन के लिए विज्ञान और तकनीक शास्त्र की उन्नति के लाभ अधिकाधिक बढती हुई श्रम-शक्ति को देखते हुए, खास तौर पर गावो मे जिसके लिए रोजगार के अवसर पैदा करना है, लघु और कुटीर स्तर पर विकेन्द्रित उद्योगो का देश की अर्थव्यवस्था मे एक महत्वपूर्ण स्थान होगा। कुटीर और लघु-उद्योगो द्वारा आवश्यकता के अनुरूप और उचित पारिश्रमिक के आधार पर रोजगार दिलाने के लिए अति आवश्यक है कि तकनीको के स्तर मे शीघ्रता के साथ और निरतर सुधार होता रहे, और ग्राम-

प्रकाश के लिए यथासभव व्यापक आधार पर विजली की सुविधा उपलब्ध की जाय।

आयोजन की स्वीकृति

(९) विकास की सतोपजनक गति प्राप्त करने और अर्थव्यवस्था की एक मजवूत औद्योगिक नीव कायम करने के लिए आयोजन का रास्ता अपनाना अनिवार्य होजाता है। सावन, सामग्री, कार्यकुशलता और तकनीकी ज्ञान के हमारे साधन सीमिन है। उन सीमित साधनो का अधिक-से-अधिक लाभ उठाने के लिये प्राथमिकताए निर्धारित करनी होगी और प्रभावपूर्ण ढग से उन्हे क्रियान्विन रूप देने के लिए उचित नीतिया और सगठन बनाने होगे। इसीलिए काग्रेस ने सयोजित आर्थिक विकास का विचार अपनाया है।

(१०) सयोजित अर्थव्यवस्था के अनुशासन मे विभिन्न स्तरो पर काफी हद तक नियत्रण आवश्यक है, ताकि योजना के उत्पादन लक्ष्यो और सामाजिक उद्देश्यो की पूर्ति हो मके। यह आश्वासन पाना जरूरी है कि आर्थिक उन्नति से आय की विषमताए और धन तथा उत्पादन के सावनो का केद्रीकरण इतना न बढे कि जिससे आम लोगो को नुकसान पहुचे। यदि ऐसा होता है तो समाज का स्थायित्व खतरे मे पड जायगा। यदि इसके विपरीत लोगो के सामने एक न्यायोचित सामाजिक व्यवस्था की तस्वीर हो, जो कि उनकी आखो के सामने कदम-ब-क़दम एक हकीकत की शक्ल लेती जा रही हो, तो विकास के कामो के लिए उनका उन्साह और सहयोग प्राप्त होगा और साधनो की वृद्धि मे तथा तरक्की को तेज कदम बनाने मे बडा भारी योग मिलेगा।

निम्नतम राष्ट्रीय स्तर

(११) इस सदर्भ मे सर्वाधिक आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति को उसकी बुनियादी जरूरते पूरी होने का आश्वासन प्राप्त हो, और भोजन, वस्त्र, मकान, शिक्षा और स्वास्थ्य सबधी एक राष्ट्रीय अलपतम स्तर यथासभव शीघ्र प्राप्त किया जाय। इस सबध मे राष्ट्र के सामने एक

लक्ष्य रखना चाहिये और यह उम्मीद करना अनुचित न होगा कि यह लक्ष्य पाचवी योजना की समाप्ति तक काफी हदतक प्राप्त किया जा सकेगा, अन्यथा सर्वधारण के लिए योजना और प्रगति निरर्थक हो जायगी । यह स्वय मे आय और धन की उन वडी विषमताओ को कम करने का, जो कि आज मौजूद है, एक साधन होगा । और भी कई कदम उठाने होगे, ताकि समाज की सवसे नीचे और सवसे ऊपर की सीढियो के वीच का फासला एक उचित समय मे प्रभावशाली ढग से कम किया जा सके । नीति और सगठन दोनो क्षेत्रो मे ये कदम उटाने होगे ।

(१२) निजी आय और सपत्ति को सीमित रखना आवश्यक है । यह प्रतिबध खासतौर से विरासत मे मिले धन और शहरी जायदाद पर लागू होना चाहिए । राज्य को पूजीगत लाभो का एक वडा भाग मिलना चाहिए और उसे वगैर कमाई हुई आमदनी का वर्तमान की अपेक्षा एक वडा हिस्सा प्राप्त करना चाहिए ।

(१३) राष्ट्रीय प्राथमिकताओ और हमारे सामाजिक ध्येयो के अनुकूल देश के ऋण तथा विनियोग सवधी साधनो को काम मे लगाने के लिए सरकार को वर्तमान की अपेक्षा अधिक कार्यक्षम स्थिति मे होना चाहिये । आज छोटे उद्योगो को चलाने तथा नये काम शुरू करनेवालो को वित्तीय साधनो की उपलब्धि के मामले मे वडी असुविधा का सामना करना पडता है । वित्तीय सस्थाओ मे कुरीतिया है और गलत तरीको को दूर करने के लिए अभी और कदम उठाने की भी जरूरत है ।

सरकारी, निजी और सहकारी क्षेत्र

अदा करती है। निजी क्षेत्र मे सगठन के सहकारी तरीके को, विशेषत, कृषि, लघु-उद्योगो और कच्चे माल से पक्का माल तैयार करनेवाले उद्योगो तथा फुटकर व्यापार मे अधिकाधिक महत्वपूर्ण स्थान पाना है।

उद्योग

(१५) एक ओर उद्योगो के सगठन मे उचित प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये, तो दूसरी ओर समाज, उपभोक्ता, और मजदूर के हितो की कारगर तौर पर हिफाजत जरूरी है। श्रमिक को उद्योग के सचालन मे पर्याप्त रूप से सबधित किया जाना चाहिये और इस दिशा मे शीघ्र प्रगति प्राप्त की जानी चाहिये। इससे उद्योग मे हाथ बटाने की भावना श्रमिक मे पैदा होगी और अधिकतम उत्पादन सभव हो सकेगा।

मूल्य-वृद्धि पर नियत्रण

(१६) समाज के निम्न आय-वर्गो और दुर्बल अगो के लिए मूल्यो का स्तर विशेष महत्व का विषय है। मूल्यो मे वृद्धि के अनुरूप आय मे आमतौर पर समान वृद्धि नही होती। एक ओर उत्पादन को बढाने के लिए सभी सभव उपाय काम मे लाने पर जोर दिया जाना है, तो दूसरी ओर आवश्यक वस्तुओ की कमी होने पर अभाव की अवस्था का गलत फायदा उठाने को रोकने के लिए कदम उठाने होगे। नियत्रण तभी लागू किया जाना चाहिये जबकि वह समाज के वृहद् हित मे अनिवार्य हो। नियत्रण से लोगो को इतनी आपत्ति नही जितनी कि दोषी प्रशासन से है। कारगर और ईमानदार प्रशासन द्वारा और जनता का सहयोग प्राप्त करके इस प्रकार के नियत्रणो के सफल क्रियान्वयन के लिए हर कोशिश की जानी चाहिये।

कृषि-अर्थ-व्यवस्था का ढाचा

(१७) भारत जैसे कृषि-प्रधान देश मे, कृषि-अर्थ-व्यवस्था का गठन, कृषि सबधो और कानूनो का विशेष महत्व है। यह महत्व भारत के औद्योगिक विकास का उन्नत कृषि-उत्पादन से अविच्छिन्न सबध के

कारण है, क्योकि जबतक उपज-वृद्धि की दर बहुत अधिक नही बढेगी, भारत को अपनी बढती हुई आबादी के भोजन के लिए तबतक विदेशी सहायता पर निर्भर करना होगा।

(१८) कृषि-उत्पादन को अधिक बढाने के लिए किसान को समय पर आवश्यक साधन-सामग्री तथा अन्य सुविधाए उपलब्ध कराने की पूरी जिम्मेदारी समाज को उपयुक्त सस्थाओ के माध्यम से उठानी चाहिये। पशुपालन और बागबानी के विकास पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिये, जो गावो मे आय तथा रोजगार के अवसर बढाने के लिए अति आवश्यक है। किसान को सब प्रकार के ऋण दिलाने के लिए राष्ट्रीय और अन्य स्तरो से लेकर पचायत तक के सभी स्तरो पर विशेष सस्थाए खोली जानी चाहिये। कर्ज पाने की योग्यता पूजी और सपत्ति के स्वामित्व पर नही बल्कि उत्पादन की सामर्थ्य पर अनिवार्य रूप से आधारित होनी चाहिए। खेती के काम मे लगे हुए लोगो के प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए, ताकि वे उन साधनो और सुविधाओं का, जो उन्हे उपलब्ध की जा रही है, पूरा लाभ उठा सके। किसान को मौसम की परेशानियो से बचाने के लिए फसलो और मवेशियो के बीमे का तरीका शुरू किया जाना चाहिए। अलाभकर आराजियो के मामले मे जरूरी है कि किसानो की अपनी इच्छा से सहकारी आधार पर खेतो

कर्ता और कामगार की परिस्थितियो मे सुधार लाने के लिए ये कुछ उपाय जरूरी है ।

(१९) कांग्रेस की भूमि सबधी नीति का लक्ष्य यह है कि वास्तविक काश्तकार का राज्य से सीधा सबध हो और बिचोलियो को खतम किया जाय । इसके अलावा, खुद काश्त की आराजी की अधिकतम सीमा निर्धारित की जानी चाहिए । खेतिहर श्रमिक को दूसरे दर्जो के काम-धधो मे अल्पतम वेतन और रोजगार दिलाने का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए ।

भूमि-सुधारो का लक्ष्य ग्राम समुदाय और स्वेच्छिक सहयोग पर आधारित एक सहकारी ग्राम-व्यवस्था होना चाहिए । देश मे भूमि-सुधारो के क्रियान्वयन मे असमता रही है । अगले दो वर्षो मे भूमि-सुधार के समूचे कार्यक्रम को पूरा करने के लिए गभीर प्रयत्न किये जाने चाहिए । काश्तकारो को रुपया उधार दिलाने, पूर्त्ति एव बिक्री सबधी सुविधाए उपलब्ध कराने मे सहकारिता को प्रमुख भूमिका अदा करनी है । जहा कही सभव हो, काश्तकारो की रजामदी से सम्मिलित सहकारी खेती सगठित की जानी चाहिए । इस कार्यक्रम मे पचायती राज और सामुदायिक विकास को एक बडा भाग अदा करना है ।

बालक के जन्म से अवसर की समानता

(२०) समाज सेवा के क्षेत्र मे अपनी गतिविधियो को एक विशेष रूप देकर तथा सामाजिक सुरक्षा के कार्यक्रम की दिशा मे निर्भीकता के साथ कदम उठाकर सर्वसाधारण और समाज के दुर्बल अगो की असुविधाओ को काफी हदतक दूर किया जा सकता है और उन्हे अवसर की समानता प्रदान की जा सकती है । यद्यपि कठिनाई के समय सहायता पहुचाने के लिए कुछ उपाय काम मे लाये जा सकते है, किंतु अपने साधनो का सबसे लाभदायक उपयोग इस क्षेत्र मे भी प्राथमिकताओ की किसी व्यवस्था द्वारा निर्धारित करना होगा । उदाहरण के लिए, गावो मे सब जगह सीमित अवधि पेय जल की व्यवस्था की जानी चाहिए । शिक्षा की सुविधाओ का प्रसार उच्च प्राथमिकता का एक अन्य विषय है । इस

मामले मे और स्वास्थ्य के मामले मे बालको पर सर्वप्रथम ध्यान दिया जाना चाहिए। अवसर की समानता बच्चे के जन्म से आरभ होनी चाहिए। प्रत्येक बालक को उसकी सामर्थ्य अनुसार शिक्षा की आवश्यक सुविधाए मिलनी चाहिए। और किसी भी होनहार बालक को माता-पिता की गरीबी के कारण अपनी क्षमता के अनुसार उच्चतर स्तर तक पहुंचने से नही रोका जाना चाहिए।

वैज्ञानिक और तकनीकी शिक्षा

(२१) रहन-सहन का उच्चतर स्तर और सामाजिक न्याय तथा सामाजिक सुरक्षा की उपलब्धि—ये सभी चीजे तेज गति से आर्थिक विकास कर सकने की हमारी सफलता पर निर्भर करती है। यह विज्ञान और तकनीक शास्त्र के पूर्णतम उपभोग द्वारा ही सभव है। वास्तव मे एक समाजवादी समाज की कल्पना विज्ञान और तकनीक शास्त्र की सतत प्रगति के बिना नही की जा सकती। अत वैज्ञानिक और तकनीकी शिक्षा एक व्यापक आधार पर सगठित की जानी चाहिए और देश मे अनुसधान की शीघ्र प्रगति और वैज्ञानिक दृष्टिकोण और प्रवृत्ति को बढावा देने के लिए हालात पैदा किये जाने चाहिए।

लोकतंत्र और समाजवाद के लिए एक खतरा

(२२) समाज-विरोधी व्यवहार का प्रचलन हमारी आर्थिक और सामाजिक स्थिति का एक ऐसा पहलू है जिस पर उचित ध्यान नही दिया गया है और जिसका धन के केंद्रीयकरण तथा विषमताओ और एकाधिकारवादी प्रवृत्तियो के बढने से बडा सबध है। सट्टेबाजी से मुनाफा, कई प्रकार से अनुचित आय और विभिन्न कानूनो के दायित्वों से बचने की नीयत के कारण चरित्रहीन व्यक्तियो के हाथो मे अकारण बहुत अधिक धन इकट्ठा हो गया है। इस प्रकार के समाज विरोधी लोगो की कार्रवाई ने अर्थ-व्यवस्था मे बडी विकृतिया और अस्वस्थ प्रवृत्तिया पैदा होती है, जिनसे देश के सामाजिक और राजनीतिक जीवन की नीव खोखली बन जाती है। समाज-विरोधी शक्तियो के विकास और

उनके बुरे प्रभाव से लोकतत्र और समाजवाद के लिए खतरा पैदा होता है जिसका मुकाबिला सुव्यवस्थित और सबल कार्रवाई द्वारा किया जाना चाहिए।

(२३) देश मे आर्थिक उन्नति की अपेक्षाकृत धीमी गति प्रधानत क्रियान्वयन मे दोष और अभाव के कारण है। शासन-व्यवस्था को पच-वर्षीय योजनाओ के निहित कार्यक्रमो और नीतियो के क्रियान्वयन के अनुरूप ढाल कर उसे पूरी तरह सक्रिय बनाना चाहिए। लोक-सेवको के दृष्टिकोण और सगठन मे तथा शासन के दिन-प्रति-दिन के काम के तरीको मे क्रातिकारी परिवर्तन लाना जरूरी है।

सोचने और रहने के ढग मे आमूल परिवर्तन

(२४) समाजवाद का अर्थ लोगो के केवल आर्थिक सबधो मे परि-वर्तन नही बल्कि सामाजिक गठन तथा लोगो के सोचने और रहने के तरीको मे बुनियादी तब्दीली लाना है। काग्रेस ने जिस समाजवादी व्यवस्था की कल्पना की है, उसमे जाति और वर्ग का कोई स्थान नही है। जन्माधिकार अथवा जाति अथवा वर्ग अथवा धन अथवा पद्-प्रतिष्ठा पर आधारित विशेषाधिकार के पुराने विचार त्याग दिए जाने चाहिए। श्रम के गौरव को मान्यता दी जानी चाहिए। वास्तव मे, जीवन के हर पहलू मे व्यक्ति की गरिमा आश्वस्त होनी चाहिए। काग्रेसजन को अपने दैनिक जीवन मे इस समाजवादी दर्शन का उदाहरण पेश करना चाहिए।

नैतिक और आध्यात्मिक मूल्य

(२५) केवल भौतिक समृद्धि से मानव-जीवन सपन्न और सोद्देश्य नही होगा। अत. आर्थिक विकास के साथ नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यो को भी पनपाना होगा। केवल इसी प्रकार मानवीय साधनो और मानवी चरित्र का पूर्ण विकास सभव है। केवल इसी आधार पर निजी स्वार्थ सिद्धि के वर्तमान सामाजिक गठन को क्रमश एक समाजवादी समाज मे परिवर्तित किया जा सकता है और साथ ही व्यक्ति तथा समाज के पूर्ण विकास के लिए पर्याप्त प्रोत्साहन दिया जा सकता है।

(२६) यह है समाज की वह तस्वीर, जिसकी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने कल्पना की है, जिसमे दरिद्रता, रोग और अज्ञान समाप्त हो चुकेगा, जिसमे संपत्ति और किसी भी रूप मे विशेषाधिकार का अत्यंत सीमित स्थान होगा, जिसमे सभी नागरिको को समान अवसर प्राप्त होगे और जिसनें व्यक्ति तथा समाज के जीवन को समृद्ध बनाने के लिए नैतिक और आध्यात्मिक मान्यताए योग देगी ।

●